स्नेह-वर्षा

सुनील गंगोपाध्याय

लोकभारती प्रकाशन
१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-१

न वा अरे सर्वस्य कामाय सर्वं प्रियं भवति ।
आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति ॥

—बृहदारण्यकोपनिषत्

अँधेरा और उजेला : दो पाख

दिन एकदम ढल तो चुका है, लेकिन संध्या भी अभी तक ठीक से नहीं हुई है। आसमान में एक तरह की थमी हुई रोशनी है। दिवा-शेष का यह समय बहुत थोड़ा होता है, लेकिन इतने में ही जाने-पहचाने शहर का सारा परिदृश्य बहुत-कुछ बदल जाता है। सभी कुछ को रहस्य की छूत-सी लग जाती है। यह वह घड़ी होती है, जब किसी के चेहरे की तरफ देखने पर उसके मन के हाल का पता नहीं चल पाता।

गड़ियाहाट के मोड़ पर इस वक्त अच्छी भीड़ है। साड़ी की, फूल की, मिठाई की और लाटरी के टिकटों की दुकानों में भीड़ जमने लगी है। सड़क के दोनों किनारे कई कारें खड़ी हैं। यह जानते हुए भी कि आसानी से चढ़ा नहीं जायेगा, बहुत-से लोग ट्राम और बस का इंतजार कर रहे हैं। कोई-कोई जल्दी-जल्दी चल रहा है, ट्रैफिक की लाल रोशनी के सामने टैक्सियाँ बेचैन हो रही हैं और कहीं-कहीं खड़े कुछ लोग आपस में गप लड़ा रहे हैं। उनको कोई जल्दी नहीं है।

इस समय यहाँ जितनी महिलाएँ हैं, उनमें से किन्हीं दो की साड़ियों के डिजाइन एक जैसे नहीं हैं। लगता है, इन्द्रधनुष के सातों रंग थोड़ा-थोड़ा करके बिखेर दिये गये हैं। उधर कुछ नौजवान खड़े हैं, उनके पैंटों में बेऐब लोहा किया गया है, उनकी शर्टों के कालर खड़े हैं, हालाँकि उनमें ज्यादातर बेरोजगार हैं। अधेड़ लोग धोती-कुर्ते में हैं। बगुले के पंख जैसे सफेद धोती-कुर्तों में कहीं कोई शिकन नहीं है, फैशन का कोई झमेला भी नहीं। सिर्फ कॉमा और सेमी-कोलन की तरह यहाँ-वहाँ कुछ भिखमंगे छिटके हुए हैं। इनके अलावा खंभे से टिका एक पागल खड़ा है। उसके सारे कपड़े तार-तार हो चुके हैं।

हमने इस भीड़ में से तीन को अलग छाँट लिया है। तीनों महिलाएँ

हैं। अभी-अभी वे एक वैराइटी स्टोर्स से निकली हैं। एक की उम्र तनिक ज्यादा है। चालीस के इधर है या उधर, ठीक से पता नहीं चलता। बदन में अब भी कसाव है, उन्होंने शांतिपुरी साड़ी पहन रखी है। लेकिन थोड़ा भारीपन आ गया है। घर की मालकिन बनने के लिए उतना भारीपन जरूरी भी है और भला भी लगता है। उनके हाथ में बड़ा-सा ब्रॉउन पैकेट है। दायें वाली लड़की गहरे नीले रंग की रेशमी साड़ी में है। उसका ब्लाउज़ भी उसी रंग का है। उतने नीले रंग के बीच उसकी गोराई कुछ ज्यादा ही दमकने लगी है। उसका मुखड़ा जरा मुरझाया हुआ है और आँखों की चितवन चुलबुली। बायें वाली लड़की की साड़ी ऊलजलूल घने डिजाइन की छपी है। निगाह को बरबस अपनी तरफ खींचती है। बदन का रंग जरा दबा हुआ है, लेकिन शरीर का गठन बड़ा खूबसूरत। कारण कुछ भी हो, उसकी आँखों की तरफ एक बार देखने पर दोबारा देखने को मन अवश्य करता है।

अधेड़ महिला ने चेहरे पर झलमलाती हँसी लाकर कहा—कट ग्लास का सेट बड़ा खूबसूरत था न, मीठू ?

गहरे नीले रंग की साड़ी वाली लड़की बोली—न्यू मार्केट में और बढ़िया मिलता है।

अधेड़ महिला ने उसकी बात पर ध्यान न देकर कहा—खरीदने के लिए मन ललचा रहा था, लेकिन दाम कितना ज्यादा है। किसी तरह कम ही नहीं किया।

—लेकिन माँ, ये सब इमीटेशन हैं। असली नहीं हैं।

—चल हट ! किसने तुझसे कहा है कि असली नहीं हैं ! कितना दाम माँगा ! क्यों अनुराधा, ये असली नहीं हैं ?

छपी साड़ी पहनी लड़की ने हँसकर कहा—क्या पता मौसी जी, मैं तो ठीक से पहचानती नहीं ! लेकिन असली कट ग्लास का सेट क्या अब कहीं मिलता है ?

—वाह ! उन लोगों ने बार-बार कहा !

बात करते-करते वे एक नीली कार के पास पहुँचीं । वर्दीधारी ड्राइवर ने झटपट दरवाजा खोल दिया । दोनों लड़कियों ने एक-दूसरे की आँखों की तरफ देखा और एक पल में न जाने उनमें क्या बातें हो गयीं ।

अनुराधा ने पूछा—मौसी जी, जयश्री मेरे साथ चलेगी ?

—कहाँ ?

—थोड़ी देर के लिए हमारे घर ।

—तुम्हारे घर ? तुमने तो अभी कहा था कि तुम इस समय किताब लाने रामकृष्ण मिशन जाओगी ?

—जी हाँ, लेकिन वहाँ ज्यादा देर नहीं लगेगी । किताब लेकर मैं तुरंत घर चली जाऊँगी ।

—मीठू तो कल ही तुम्हारे घर गयी थी, आज फिर किसलिए जायेगी ?

जयश्री बोली—कल नहीं, परसों गयी थी ।

उसकी माँ हँसकर बोलीं—अच्छा, परसों ही सही लेकिन आज फिर जाना पड़ेगा ? मुलाकात जो हो गयी !

—थोड़ी देर के लिए चली जाऊँ, आठ बजे तक आ जाऊँगी ।

—लेकिन कैसे लौटेगी ? कार छोड़ देनी पड़ेगी । क्या उस वक्त फिर से कार भेज पाऊँगी ?

—क्या हुआ ! मैं ट्राम या बस से लौट आऊँगी ! क्या मैं ट्राम या बस से कभी नहीं चलती ?

अनुराधा बोली—मौसी जी, मैं उसे बस पर बिठा दूँगी !

जयश्री की माँ अलका देवी ने थोड़ी देर चुप रहकर न जाने क्या सोच लिया । वे करीब-करीब 'हाँ' कहने ही जा रही थीं कि अचानक चिल्ला पड़ीं—अरी, अरी, देख, देख ! अनुराधा, इधर हट आओ !

दोनों तरुणियाँ एकाएक काँप उठीं । पीछे की तरफ देखे बिना वे जल्दी कार के पास आ गयीं !

फुटपाथ पर फूल की दुकान में रखे रजनीगंधा के गुच्छे में साँड़ ने मुँह मारा तो डंडा तान कर दुकानदार हाँ-हाँ कर उठा। भगाये जाने पर साँड़ इधर ही दौड़ा आ रहा था। उसके मुँह में रजनीगंधा का डंठल था।

तीनों महिलाएँ हड़बड़ाकर कार में घुस गयीं। उतनी देर में साँड़ ट्राम लाइन पर पहुँच गया। सड़क के उस हिस्से में खासी हलचल मच गयी। कार में बैठी तीनों महिलाएँ हँसते-हँसते लोट-पोट होने लगीं।

कार स्टार्ट हुई। लेकिन उस छोटी-सी घटना के कारण न जाने क्यों जयश्री की माँ का विचार बदल गया। हँसी रुकने के बाद जयश्री बोली—तो माँ, तुम हमें अनुराधा के घर पर उतार देना।

अलका देवी ने चेहरे पर से मुस्कराहट हटाकर गंभीर स्वर में कहा—नहीं, रहने दो। आज जाने की जरूरत नहीं है। अनुराधा, आज वह नहीं जायेगी, और किसी दिन चली जायेगी—ठीक है न ?

अलका देवी के स्वर में ऐसी दृढ़ता थी, जिसे सुनते ही दोनों लड़कियों की समझ में आ गया कि यही उनकी राय पक्की है और वे कोई अनुरोध सुनना नहीं चाहतीं।

जयश्री और अनुराधा ने एक-दूसरे की तरफ देखा। जयश्री की आँखों में गुस्सा थिरकने लगा किंतु वह एक शब्द भी नहीं बोली।

अनुराधा ने दबी आवाज में कहा—मौसी जी, तो मैं उतर जाऊँ, मुझे उधर नहीं जाना है।

—चलो, तुम्हें रामकृष्ण मिशन पहुँचा देती हूँ।

रास्ते में फिर कोई बात नहीं हुई। गोल पार्क पर रामकृष्ण मिशन के पास अनुराधा उतर गयी। जयश्री तब भी कुछ नहीं बोली। अलका देवी बोलीं—और किसी दिन आना....

भारी कदमों से अनुराधा रामकृष्ण मिशन भवन में चली गयी, फिर पाँचेक मिनट बाद वह बाहर निकल आयी। उसके हाथ में दो किताबें थीं।

अनुराधा यहीं से बस में बैठ सकती थी, लेकिन वह नहीं बैठी। वह धीरे-धीरे चलने लगी—वापस गड़ियाहाट की तरफ।

पैदल चलते समय अनुराधा इधर-उधर नहीं देखती, ज्यादा समय उसकी निगाह धरती की ओर रहती है। इसका कारण यह है कि निगाह ऊपर करते ही उसे दिखाई पड़ता कि चलती टैक्सी से, पान की दुकान से, चाय की दुकान से, बरसाती से और सड़क के उस पार से सैकड़ों आँखें उसे देख रही होती हैं। एक साथ इतनी निगाहें उसे बरदाश्त नहीं होतीं। वे निगाहें उसके बदन में चुभती हैं। हालाँकि वह कोई खास खूबसूरत नहीं है या उसकी पोशाक में भी लुभाने वाली कोई ऐसी बात नहीं होती कि सड़क पर सब लोग मुँह बाये उसकी तरफ देखें। वह यों ही साधारण खूबसूरत है और उसका स्वास्थ्य अच्छा ही है। पुरुष प्रधान इस कलकत्ता शहर में लोभी दृष्टि को आकृष्ट करने के लिए यही काफी है।

जितना संभव हो सका आत्मसम्मान बरकरार रखते हुए लोगों के स्पर्श से बचकर अनुराधा धीरे-धीरे चलती रही। फिर भी एकदम बचना मुमकिन नहीं था। बगल से जाता-जाता कोई जान-बूझकर उसके बदन से अपना बदन छुला देता, कानों में भी एक-दो अशिष्ट मन्तव्य पड़ जाते, लेकिन आजकल की लड़कियों को यह सब सह्य हो चुका है।

अनुराधा कोई और बात सोच रही थी।

उधर के फुटपाथ से सड़क को तिरछे पार कर एक युवक अनुराधा की तरफ बढ़ आया। वह धोती-कुर्ते में है। उसका शरीर सीधा, काफी लंबा और माथा मजे का चौड़ा है। अनुराधा ने सिर नहीं उठाया। उसने उस युवक को नहीं देखा। वह युवक अब अनुराधा के साथ चलने लगा।

उस युवक ने कहा—अनुराधा, तुम इधर कैसे ?

सिर उठाये बिना अनुराधा बोली—रामकृष्ण मिशन आयी थी।

—क्या यहाँ अक्सर आती हो ?

—हफ्ते में दो दिन।

—मैं सड़क के उस पार से तुम्हें देखकर इधर चला आया।

अनुराधा मुस्करायी और उसकी तरफ देखकर बोली—अच्छा!

—मैं एक दोस्त के घर जा रहा था....

—आपके दोस्त का मकान किस तरफ है?

—तुम जिधर जा रही हो, उसी तरफ।

—अगर मैं अभी चेतला जाऊँ तो?

—चेतला में भी मेरा एक दोस्त रहता है। उससे भी बहुत दिन से मुलाकात नहीं हुई।

—तो चलिए....

—कहाँ?

—चेतला!

—जरूर! चलो, चला जाय! लेकिन क्या अभी ही चलना पड़ेगा? जरा रुककर नहीं जाया जा सकता?

जब मनुष्य अकेला रहता है, तब उसे सारे संसार के अस्तित्व का पता ज्यादा चलता है। लेकिन दो होते ही एक अलग दुनिया बन जाती है। अनुराधा अब धरती को नहीं देख रही, अब उसे राह-चलते लोगों की चुभती निगाहें भी नहीं खल रहीं और न ही किसी का बाजारू संलाप उसके कानों में पड़ रहा है।

दोनों किताबें उस युवक की तरफ बढ़ाकर अनुराधा ने कहा—लीजिए।

अनुराधा ने साड़ी का आँचल ठीक किया और कान के पास हाथ ले जाकर बालों की एक ढीठ लट को पीछे कर दिया। फिर हलका कौतुक भरा चेहरा सीधे उस युवक की तरफ फेरकर वह बोली—अब समझ में आया कि आपको दोस्त के घर जाने की कोई खास जल्दी नहीं है। इसके बाद अगर सुनने को मिले कि इस मुहल्ले में या चेतला में शांतनु सरकार का एक भी दोस्त नहीं है तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा।

—इस मुहल्ले में मेरा एक भी दोस्त नहीं है, ऐसा नहीं हो सकता।

एक-दो दोस्त तो जरूर ही होंगे। लेकिन उनसे मुलाकात करना जरूरी है कि नहीं, यह सवाल उठ सकता है।

—या ऐसा भी तो हो सकता है कि कहीं आपका कोई दोस्त सचमुच किसी जरूरी काम के लिए आपको ढूँढ़ रहा हो और आप यहाँ...

—क्या ऐसी शाम को भी कोई जरूरी काम करता है ?

दोनों किताबें वापस लेकर एकदम अप्रत्याशित ढंग से अनुराधा बोली—मैं चाय पियूँगी।

अनुराधा की इस बात पर शांतनु एकाएक क्यों परेशान हो गया, यह कौन बता सकता है। उसने आगा-पीछा कर कहा—चाय ? यहाँ तो चाय की....तुम कैंपा कोला पियो तो कैसा रहे ?

—नहीं, मुझे चाय की ही तलब लगी है।

—लेकिन इस मुहल्ले में चाय की वैसी बढ़िया दुकान भी तो नहीं है। मद्रासियों की एक दुकान है अवश्य, लेकिन वहाँ कॉफी मिलती है।

—नहीं, मैं चाय ही पियूंगी ! अगर इस मुहल्ले में बढ़िया दुकान नहीं है तो दूसरे मुहल्ले में चलिए।

—कहाँ ?

—एसप्लैनेड में या गंगा किनारे।

शांतनु ने जेब से रूमाल निकालकर मुँह पोंछा और घड़ी देखी। खामोश मुस्कराहट अनुराधा के चेहरे पर थिरकने लगी। लड़कियां ही इस तरह मुस्करा सकती हैं। शांतनु की आँखों से आँखें मिलते ही अनुराधा बोली—आज जयश्री नहीं आयेगी।

यह सुनते ही शांतनु का चेहरा कठोर पड़ गया। उसने फिर घड़ी देखी और सूखी आवाज में कहा—सचमुच नहीं आयेगी ?

—नहीं।

—तुमसे मुलाकात हुई थी ?

—हाँ।

—कब ?

—यही समझ लीजिए कि पौने चार बजे के आस-पास। मैं उसके घर गयी थी।

—फिर? वह घर से नहीं निकली? क्या उसकी तबीयत ठीक नहीं है?

—तबीयत ठीक है, लेकिन मिज़ाज ठीक नहीं है।

—इसीलिए घर से नहीं निकली? घर बैठे रहने से तो मिज़ाज और खराब ही होगा।

—मेरे साथ बाहर निकली थी। मौसी जी भी साथ थीं।

—उसके बाद शायद वे अपनी लड़की को इस तरह अगोरने लगीं, जैसे वह कोई नन्हीं बच्ची हो!

—हाँ, यह कहने की जरूरत नहीं है।

—और वे उसे जबर्दस्ती घर वापस ले गयीं!

—नहीं, एकदम ऐसा नहीं है। गड़ियाहाट से मौसी जी जयश्री को मेरे साथ आने देने के लिए लगभग राजी हो गयी थीं। यह भी तय हुआ था कि वह रात आठ बजे तक मेरे घर रहेगी, लेकिन एकाएक मौसी जी की राय बदल गयी।

—क्यों?

—एक असगुन हो गया।

—कैसे?

—साँड़ ने दौड़ा लिया—अनुराधा खिलखिलाकर हँस पड़ी।

शांतनु भी हँसी नहीं रोक सका।

गड़ियाहाट के मोड़ पर दोनों जोर-जोर से हँसने लगे।

यहाँ यह बता देना चाहिए कि अनुराधा अगर जयश्री के बारे में इतना न बताती तो भी काम चलता, क्योंकि शांतनु को सब कुछ पता था। अलका देवी के साथ जयश्री और अनुराधा जब दुकान में गयी थीं तब सड़क की दूसरी तरफ एक मकान की बरसाती के नीचे ही वह खड़ा था। वहाँ से उसने सब कुछ देखा था, यहाँ तक कि फूल की दुकान पर,

साँड़ का उपद्रव भी। लेकिन अनुराधा से उसके बारे में उसने कुछ नहीं बताना चाहा। कोई भी बुद्धिमान पुरुष यदि किसी एक नारी की प्रतीक्षा करता है तो यह बात वह दूसरी नारी से कहना नहीं चाहता।

इधर अनुराधा भी जानती है कि शांतनु को सब पता है क्योंकि दोनों सहेलियों ने शांतनु को देख लिया था। जयश्री ने आँखों ही आँखों में अनुराधा से अनुरोध किया था कि शांतनु को खबर दे देना। फिर भी अनुराधा उन बातों को घुमा-फिराकर बता रही थी और मज़ा ले रही थी। यह यौवन का ही कमाल है कि वह मामूली-सी बात को भी रसमय बना ले सकता है।

सिगरेट सुलगाकर शांतनु बोला—इस तरह और कितने दिन चलेगा ?

भौंहें नचाकर अनुराधा बोली—एक दिन भी नहीं चलना चाहिए !

—फिर ?

—फिर !

—एक बात है अनुराधा, तुम तो अपनी सखी को अच्छी तरह जानती हो....

—क्यों ? आप अच्छी तरह नहीं जानते क्या ?

—वह बात अलग है। लड़कियों की दोस्ती दूसरी तरह की होती है। शादी से पहले एक लड़की अपनी सहेली से ऐसी गुप्त बात भी बता सकती है, जो वह अपने प्रेमी से भी बताना नहीं चाहती।

—आप तो नारी-चरित्र के विशेषज्ञ हो गये हैं !

—क्यों नहीं ? हर साल कम से कम चार सौ लड़कियाँ जो देखता हूँ।

—सिर्फ देखना ही काफी नहीं है....

—अच्छा, वह बात रहने दो। मैं जो पूछ रहा था कि तुम्हें कैसा लगता है ? क्या जयश्री के मन में कुछ दुविधा है ?

—किसलिए ?,

—मैं जो करने को कहूँगा, क्या वह जयश्री करेगी ?

—यह तो आपको और जयश्री को ही अच्छी तरह समझना चाहिए।

—कभी-कभी न जाने क्यों डर लगता है। जयश्री जो कुछ कहती है, क्या वैसा करने लायक मन की दृढ़ता उसमें है ? यह बात पहले न जान लेने पर बाद में अफसोस भी करना पड़ सकता है। मैं वैसा कुछ करना नहीं चाहता।

—मनुष्य क्या अपनी इच्छा से कोई काम करने के बाद भी कभी-कभी अफसोस नहीं करता ? मेरे भैया को देखिए न। कलकत्ते की नौकरी छोड़कर भैया ने बम्बई में नौकरी कर ली। सबने मना किया, लेकिन उन्होंने किसी की बात नहीं मानी। भैया ने कहा था कि वहाँ की नौकरी में प्रॉस्पेक्ट्स ज्यादा हैं। अब बम्बई में भैया का मन नहीं लग रहा। वे खुद कोशिश करके बम्बई गये थे, लेकिन अब अफसोस कर रहे हैं।

—लेकिन उसके लिए तुम्हारे भैया किसी दूसरे पर दोष नहीं मढ़ सकते। अपनी इच्छा से कुछ करने पर अगर गलती भी हो जाय तो हर वयस्क आदमी को चुप ही रहना चाहिए। आखिर वह अपना भला-बुरा तो समझता है।

—तो फिर सुनिए, जयश्री के बारे में एक बात बता रही हूँ। जयश्री आपके अलावा और किसी के बारे में सोच तक नहीं सकती। आपके लिए वह दुनिया का सब कुछ छोड़ सकती है।

—क्या तुम सचमुच ऐसा समझती हो ?

—जीऽहाँ ! इसमें कोई गलती नहीं हो सकती।

—फिर भी कभी-कभी मेरे मन में शंका होती है।

—पहले मगर यह तो बताइए कि क्या आप भी जयश्री के लिए सब कुछ छोड़ने को तैयार हैं ?

—लड़कियों की तरह लड़कों को सब कुछ छोड़ने की जरूरत नहीं पड़ती। फिर मेरे बारे में वैसा कोई सवाल ही नहीं उठता।

—यही बात तो कभी-कभी आप लोगों को याद नहीं रहती । जयश्री के माँ-बाप अगर अंत तक रुकावट डालने की कोशिश करेंगे तो वह घर छोड़कर चली आयेगी । लेकिन अगर उससे बचा जा सके और उसके माँ-बाप को राजी किया जा सके तो क्या बुरा है ?

—मैं तो इतने दिनों से उसी का इंतजार कर रहा हूँ ।

—लेकिन एक बात और सोच लीजिए कि जयश्री आपको जानती कितने दिनों से है ? ज्यादा से ज्यादा तीन-साढ़े तीन साल । लेकिन वह अपने माँ-बाप को तेईस साल से जानती है । आपकी एक बात पर वह कैसे उनको छोड़कर आ सकती है ? लड़कियाँ हालाँकि वैसा कर सकती हैं, फिर भी....

शांतनु ने हँसकर कहा—अनुराधा, ऐसी तर्कपूर्ण बातें तुम्हारे दिमाग में कैसे आती हैं ?

अनुराधा शरमा गयी । वह दूसरी तरफ आँखें फेर कर बोली—दूसरों के मामले में तो तर्कपूर्ण बातें सभी कर सकते हैं ।

—तुम जरा अपना भी हाल तो बताओ ! इतने दिनों से तुम्हें देख रहा हूँ, लेकिन किसी मामले में तुम्हारी कोई कमजोरी नजर नहीं आयी ।

—मेरा कोई कमजोर पहलू नहीं है ।

—क्या तुम यही कहना चाहती हो कि अभी तक कोई बात ऐसी नहीं हुई ?

—नहीं !

—ऐसा नहीं हो सकता । आई डोंट बिलीव !

—ठीक है जनाब, अभी आप मेरी बात रहने दीजिए । जो बात हो रही थी, वही हो ! जयश्री से आज मुलाकात नहीं हो पायी, आपकी पूरी शाम चौपट हो गयी, है न ?

सिगरेट का टुकड़ा दूर फेंककर शांतनु बोला—अगर वे जयश्री को रोक रखने की बात सोचेंगे तो सचमुच बहुत बड़ी गलती करेंगे । जरूरत पड़ने पर मैं जबर्दस्ती भी जयश्री को ले आऊँगा । उसके लिए जो कुछ

करना पड़ेगा मैं करूँगा, लेकिन उसके पहले जयश्री को स्वयं अपना इरादा पक्का करना होगा।

—जयश्री का इरादा पक्का है।

—लेकिन मुश्किल यह हो गयी है कि उससे मुलाकात ही नहीं हो रही है! उसने टेलीफोन करने को भी मना कर दिया है! उस दिन टेलीफोन किया तो कितनी झंझट हो गयी!

—क्यों? क्या हुआ था? किसने टेलीफोन उठाया था?

—यह तो नहीं पता, लेकिन बहुत भारी और रूखी आवाज थी। उन्होंने पहले मेरा नाम पूछा। मैंने झूठ बोलने की कोशिश नहीं की और अपना नाम बता दिया। उसके बाद उन्होंने कहा कि जयश्री अभी चौथी मंजिल पर है और उसे बुलाने में दिक्कत है, इसलिए उससे जो कुछ कहना है, उन्हीं को बता दूँ। समझ लो, कैसे बैड मैनर्स हैं!

—सुनिए, किसने टेलीफोन उठाया था, यह जाने बिना...

—किसी ने भी उठाया हो! अच्छा, उस घर में उस तरह कौन-कौन बात कर सकते हैं? तुम तो सभी को जानती हो...

—कह नहीं सकती। लेकिन वे शायद जयश्री के पिता भी हो सकते हैं।

—मेरा तो मिज़ाज गरम हो गया था।

—नहीं-नहीं, मिज़ाज गरम करना ठीक नहीं है!

—खैर, बड़ी मुश्किल से मैंने अपने को चैक किया। जयश्री से मेरी शादी तो होगी ही, उसे कोई रोक नहीं सकता, इसलिए बिला वजह मैं उस घर के किसी भी व्यक्ति से लड़ना नहीं चाहता। लेकिन वे लोग भी किसी बात को तूल न दें।

—समझ गयी! टेलीफोन करना मुश्किल हो गया है, मुलाकात भी नहीं हो रही है, बताइए अब क्या होगा? चिट्ठी लिखेंगे?

—अब केवल तुम्हारा ही भरोसा है।

—लेकिन डाकिये का काम मुझसे नहीं होगा।

तुमसे वैसी रिक्वेस्ट करने की हिम्मत भी नहीं पड़ती। तुम अपनी तरफ से कोई सुझाव दो न....तुम तो जयश्री की बड़ी अच्छी सहेली हो।

—मैं घर का खाकर दूसरों की खिदमत करने क्यों जाऊँ ? सिर्फ आप लोगों के चक्कर में मेरे कई दिन...

शांतनु चुप हो गया। उसका चेहरा दयनीय लगने लगा। हालाँकि इसमें शत प्रतिशत सचाई नहीं थी, बहुत सारा हिस्सा बनावटी था, लेकिन ऐसे मौकों पर ऐसा ही करना पड़ता है। किसी हद तक शांतनु अनुराधा से सहायता की माँग कर रहा था और किसी हद तक वह अनुराधा को सहायता करने का मौका भी दे रहा था।

अनुराधा आँखों में हँसी लाकर, होंठों को दबाती हुई बोली—आप दोनों की हालत पर मुझे अफसोस होता है ! लेकिन अब क्या किया जाय ?

शांतनु चुप रहा।

अनुराधा ही फिर बोली—कल शाम को छह बजे मैं जयश्री को ले आऊँगी। उससे मेरी बात हो चुकी है।

—कहाँ ?

—आप बताइए ? लेकिन कोई रोमैंटिक जगह होनी चाहिए.... मौलसिरी के पेड़ के नीचे कैसा रहेगा ?

—मेरी तो राय यह है अनुराधा, कि इन मामलों का तुम्हें मुझसे अच्छा अनुभव है। तुम्हीं कोई जगह तय कर दो न।

—सुनिए जनाब, आपसे यह किसने कहा कि मुझे इसका अनुभव है ?

नहीं है ?

—हो या न हो, लेकिन ऐसे मामले में एक का अनुभव दूसरे के काम नहीं आता।

—तो जयश्री विक्टोरिया मेमोरियल के सामने आ जाय।

—नहीं, नहीं, वहाँ जान-पहचान के तमाम लोग मिल जायेंगे। आजकल वहाँ इस काम के लिए कोई नहीं जाता। आप बल्कि....लाइट हाउस सिनेमा के सामने आ जाइए।

शांतनु ने चेहरे पर कृतज्ञता का भाव लाकर कहा—सब कुछ ठीक हो जाय, तो सबसे पहले वृन्दा दूती को कोई बढ़िया-सा उपहार देना पड़ेगा।

इस पर अनुराधा ने गुस्सा होने का भाव प्रकट किया और कहा—आप कुछ भी नहीं जानते! वृन्दा दूती तो प्रेम के अवैध मामले में रहती है। आप लोगों का तो वैसा कुछ भी नहीं है।

शरमाकर शांतनु बोला—अच्छा! फिर तुम्हें क्या कहा जाय?

—कुछ भी नहीं। अब मैं चलूँ...

—रुको।

अचानक काफी सीरियस होकर शांतनु ने एक चलती टैक्सी को रोका और अनुराधा से कहा—आओ।

—अनुराधा ने आश्चर्य से पूछा—कहाँ?

—एसप्लैनेड या गंगा के किनारे। तुमने अभी चाय पीने की बात कही थी न?

—वह बात इतनी देर बाद याद आयी? मैंने तो आधे घंटे पहले चाय पीने की बात कही थी, लेकिन आप तो अपनी ही बात में मशगूल थे, इसलिए आपको याद नहीं रही। लेकिन अब वह वक्त गुजर चुका है और मुझे चाय पीने की इच्छा नहीं है।

—अनुराधा, प्लीज़! चलो....

—नहीं।

—फिर मैं नाराज हो जाऊँगा....

—आप नाराज होंगे तो मेरा क्या बिगड़ जायेगा?

—चलो, देर न करो, टैक्सी खड़ी है। अगर चाय नहीं पीनी है तो चलो, तुम्हें घर तक पहुँचा दूँ।

अनुराधा ने हँसकर अद्‌भुत ढंग से भौंहें नचायीं और कहा—नहीं, मैं बस से जाऊँगी।

—अरे, क्या कर रही है, आओ....

अनुराधा ने कोई उत्तर नहीं दिया। शरारत भरी आँखों से एक बार शांतनु की तरफ देखकर वह बस-स्टॉप की तरफ चली गयी। शांतनु समझ नहीं पाया कि टैक्सी में बैठा जाय या उसे छोड़ दिया जाय। कुछ देर भौंचक्का-सा खड़े रहने के बाद उसने मीटर डाउन का पैसा चुका दिया। फिर वह भी बस-स्टॉप की तरफ चला। तभी उसने देखा कि अनुराधा एक नीली बस में चढ़ गयी है और उसकी तरफ देखकर मजाकन हौले-हौले उँगली हिला रही है।

●

वह किसकी घरवाली, वह किसकी बेटी ?

आधी रात। कमरे में हलकी नीली रोशनी है। मसहरी में अलका देवी और हृषीकेश बाबू सो रहे हैं। हृषीकेश बाबू की आँखों की पलकें बीच-बीच में काँप रही हैं, यानी वे गहरी नींद नहीं सो रहे हैं। तकिये पर ढेर सारे बाल फैलाकर अलका देवी भी गहरी नींद सो रही हैं।

नींद की झोंक में हृषीकेश बाबू ने करवट बदलकर आँखें खोलीं और फिर तुरंत बंद कर लीं। थोड़ी देर बाद वे फिर आँखें खोलकर सूनी दृष्टि से देखने लगे। मसहरी के बाद दो मच्छर भनभन करते हुए बहुत देर से मौके का कोई छेद ढूँढ़ निकालने की कोशिश कर रहे थे। हृषीकेश बाबू का एक हाथ मसहरी के परदे पर पड़ा तो एक मच्छर ने बाहर से ही उसमें डंक चुभो दिया।

अब हृषीकेश बाबू पूरी तरह जग गये। उनका चेहरा उदास था। एक हाथ उन्होंने अपने सीने पर रखा। अभी-अभी उन्होंने एक बुरा सपना देखा था, इसलिए छाती धड़क रही थी। उन्होंने एक बार अलका देवी की तरफ देखा। उसके बाद वे मसहरी से बाहर हाथ निकालकर तिपाई पर रखा पानी का गिलास उठाने लगे। मौका पाकर दूसरा मच्छर उनके हाथ पर झपटा, लेकिन वक्त कम मिलने से वह ठीक से काट नहीं सका।

पानी पीकर हृषीकेश बाबू थोड़ा स्वस्थ हुए। उनके चेहरे की उदासी काफी हद तक दूर हुई। वे आँखें खोले लेटे रहे। नींद नहीं आ रही थी। बाहर खूब हवा चल रही थी। न जाने कैसी आवाज हो रही थी। लगा, आवाज घर में ही हो रही है। हृषीकेश बाबू ने ध्यान से उस आवाज को सुनने की कोशिश की। क्या कोई दरवाजा ठेल रहा है ? लेकिन उनको

लगा कि आवाज रुक-रुककर आ रही है। क्या कोई जान-बूझकर वैसी आवाज कर रहा था ? लेकिन कौन वैसी आवाज कर सकता है ? चोर होता तो वह उस तरह दरवाजा नहीं ठेलता....

फिर आवाज होते ही हृषीकेश बाबू उठ बैठे। साथ ही साथ अलका देवी की भी नींद टूट गयी। वे लेटते ही सो सकती हैं और उनकी नींद खुल भी जल्दी जाती है। उन्होंने पूछा—कहाँ जा रहे हैं ?

हृषीकेश बाबू बोले—पता नहीं, कैसी आवाज हो रही है !

—कहाँ आवाज हो रही है ?

अब कहीं कोई आवाज नहीं थी। हृषीकेश बाबू ने दो मिनट इंतजार किया, लेकिन वे अलका देवी को वह आवाज नहीं सुना सके। अब तो अलका देवी उन पर भले अविश्वास करें। लेकिन वे तो अपने कानों पर अविश्वास नहीं कर सकते। उन्होंने तीन-चार बार वह आवाज सुनी थी। वे बेचैनी के साथ फिर उस आवाज की प्रतीक्षा करने लगे। अलका देवी बोलीं—कहीं कुछ नहीं है, सो जाइए...

इतने में फिर आवाज होते ही हृषीकेश बाबू खुश हो गये। बोले—वह आवाज हुई, सुनी ? अब तो सुनी होगी ?

अलका देवी घबड़ायीं नहीं। वे बोलीं—खिड़की की आवाज हो रही है। हवा चल रही है न ?

—कौन-सी खिड़की ?

कमरे में लेटे-लेटे ही मानो देख रही हों, इस ढंग से अलका देवी बोलीं—दालान के एकदम आखिरी छोर वाली खिड़की।

—लेकिन उस खिड़की को तो मैंने अपने हाथ से बंद किया था।

फिर आवाज होते ही सही-सही समझ में आ गया कि वह खिड़की की ही आवाज थी। हवा चलने से खिड़की बार-बार खुल रही थी, फिर बंद हो रही थी।

अलका देवी बोलीं—छोड़िए, अब उठने की जरूरत नहीं है—वह खिड़की खुली भी रहे तो कोई हर्ज नहीं है।

—लेकिन सुनो तो, मुझे ठीक से याद है कि मैंने अपने हाथ से व खिड़की बंद की थी।

—शायद खुल गयी होगी !

—मैंने तो सिटकिनी भी लगा दी थी, खुल कैसे जायेगी ?

—शायद आप भूल रहे हैं। बंद नहीं की होगी....

—नहीं, मुझे याद है।

—रहने दीजिए, अब क्या करेंगे ?

इस उत्तर से हृषीकेश बाबू संतुष्ट नहीं हुए। उनके चेहरे पर फि वही उदासी लौट आयी। वे मानो मन ही मन बोले—हर बात का को अर्थ होना चाहिए, मैंने अपने हाथ से उस खिड़की को बंद किया था, अ वही खिड़की अगर खुल जाय तो क्या यह अंधेर नहीं है ! आजकल चार तरफ असगुन देख रहा हूँ। तरह-तरह के असगुन। समझ गयीं। उस दिन सड़क पर चश्मा हाथ से गिर गया—मुझसे कभी वैसा नहीं होता। यह सब लक्षण ठीक नहीं है। लगता है, कोई अमंगल होने वाला है। सोच रहा हूँ, गुरुदेव को तुरंत चले आने के लिए लिख दूँ....

—लिख दीजिए।

—लेकिन परेश एतराज करता है। वह गुरु-उरु पर विश्वास नहीं करता। लेकिन मेरा दिल तो बड़ा कमजोर है। दिल अगर मजबूत हो तो गुरु की जरूरत नहीं पड़ती। यह सब देखकर मैं मन को काबू में नहीं रख पाता। कल मेरे दफ्तर के कमरे के सामने वाले बरामदे में कौवा मरा पड़ा था। तुमने कभी मरा कौवा देखा है ? बताओ, मेरे दफ्तर के ही बरामदे में ! फिर उस कौवे को घेरकर तीन-चार सौ कौवों का मेला-सा लग गया था। उनकी काँव-काँव के मारे वहाँ ठहरना मुश्किल हो रहा था ! यह सब देख-देखकर मेरा तो मिजाज खराब हो गया है। मैं समझ रहा हूँ कि कोई-न-कोई अमंगल घटने जा रहा है।

—ठीक है, गुरुदेव को आने के लिए लिख दीजिए।

—अभी थोड़ी देर पहले ही एक बुरा सपना देखा। देखा कि मेरे

माथे पर एक गुम्मड़ निकल आया है ।

—कल सवेरे सब सुन लूँगी, अब तो सो जाइए । रात को नींद न आने पर हाजमा ठीक नहीं रहता—बदहजमी होती है ।

सपने का पूरा हाल बयान न कर पाने पर हृषीकेश बाबू मन ही मन दुखी हुए । थोड़ी देर वे चुपचाप आँखें खोले पड़े रहे । उसके बाद वे फिर उठ बैठे और बोले—नहीं । जाऊँ, खिड़की बंद कर ही आऊँ । खट्-खट् आवाज होती रहेगी तो मुझे नींद नहीं आयेगी ।

अलका देवी इस बीच सो गयी थीं । वे फिर जगकर उठ बैठीं और बोलीं—रहने दीजिए, आप मत जाइए—मैं जा रही हूँ....

--नहीं, नहीं, तुम सोओ, मैं बंद किये आता हूँ ।

—नहीं, नहीं, आप मत जाइए ।

फिर पति-पत्नी दोनों ही मसहरी से निकले । कमरे का दरवाजा खोलकर दालान में आने पर हृषीकेश बाबू ने देखा कि अलका देवी का कहना सही था । खिड़की खुली ही थी और हवा चलने पर उससे खट्-खट् आवाज हो रही थी ।

हृषीकेश बाबू फिर भी अपने मन में उदास बने रहे । उन्हें पक्का विश्वास था कि उन्होंने खिड़की बंद कर दी थी । फिर भी....

दालान में चलते-चलते हृषीकेश बाबू बोले—गुरुदेव इस समय आसन-सोल में हैं । नित्यानंद के यहाँ । मैं कल ही चिट्ठी लिख दूँगा....

खिड़की बंद करने जाकर अलका देवी ने देखा कि जयश्री के कमरे में बत्ती जल रही थी ।

अलका देवी ने पति से कहा—आप जाकर सो जाइए, मैं बाथरूम से होकर आ रही हूँ । आज मीठू भी बत्ती बुझाये बिना सो गयी है ।

हृषीकेश बाबू कमरे में लौट गये तो अलका देवी ने दो बार धीरे से मीठू का नाम लेकर पुकारा लेकिन कोई आवाज नहीं मिली फिर अलका देवी ने ज्यों ही जरा-सा धकेला किवाड़ खुल गये । जयश्री अक्सर रात को कमरे का दरवाजा बंद नहीं करती । माँ-बाप के अलावा तीसरी

मंजिल में और तो कोई नहीं रहता।

कमरे में जाकर अलका देवी ने देखा कि जयश्री के सिरहाने कलम और कागज पड़े हैं। न जाने क्या लिखते-लिखते वह सो गयी थी। अलका देवी जयश्री के पलंग के पास खड़ी होकर आगा-पीछा करने लगीं। अंत में वे उत्सुकता को दबा नहीं सकीं और उन्होंने पैड को उठा लिया। पता नहीं, उसमें जयश्री ने क्या लिखा हो, इस आशंका से उनकी छाती धड़कने लगी। इसके अलावा अगर लड़की जगकर देख ले तो भी गुस्सा करेगी।

हालाँकि पैड पर कोई ऐसी चीज नहीं लिखी थी। जयश्री ने अपनी सहेली श्रीलेखा को चिट्ठी लिखना शुरू किया था। अलका देवी श्रीलेखा को जानती थीं। श्रीलेखा जयश्री के साथ कॉलिज में पढ़ती थी। पिछले साल ही उसकी शादी हो गयी और अब वह दुर्गापुर में रहती है। जयश्री उसी को चिट्ठी लिख रही थी—बड़ी मामूली चिट्ठी, और वह भी आठ-दस लाइनें लिखकर छोड़ दी गयी थीं। उसके बाद पूरे कागज पर जयश्री ने बेमतलब लकीरें खींची थीं।

निश्चित होकर अलका देवी पैड को रखने लगीं तो उसमें से एक चिट्ठी नीचे गिर पड़ी। उन्होंने उस चिट्ठी को यों ही उठाकर खोला और देखा कि संबोधन में लिखा है—शांतनु, शांतनु....

अलका देवी का सारा बदन मानो सुन्न हो चला! जयश्री ने फिर उस लड़के को खत लिखा है! इतना मना किया, फिर भी मीठू ने मेरी बात नहीं मानी! आजकल की लड़कियाँ पता नहीं क्या सोचती हैं! क्या वे यह नहीं समझतीं कि उनके माँ-बाप हर वक्त यही सोचा करते हैं कि कैसे उनका भला होगा! जिसमें उनका सचमुच भला होगा, उसमें माँ-बाप क्यों बाधा डालेंगे? लेकिन इन बच्चों पर तो बस आँखों का नशा सवार हो जाता है।

बड़ी इच्छा होने पर भी अलका देवी उसी दम उस चिट्ठी को पूरा नहीं पढ़ सकीं। वे अपलक देखती रहीं। पता नहीं, उस चिट्ठी में क्या

लिखा होगा, और उसे पढ़कर उनको कितना बुरा लगेगा। संबोधन में दो बार उस लड़के का नाम लिखा गया है—आजकल का फैशन भी पता नहीं क्या हो गया है।

अलका देवी ने उस लड़के को देखा। देखने-सुनने में लड़का ठीक है। बस, जात भर अलग है। अलका देवी को उसमें भी कोई खास आपत्ति नहीं है। आजकल वैसी शादियाँ काफी हो रही हैं। हालाँकि मीठू के बाप को उसमें बड़ा एतराज है, लेकिन उनको समझा-बुझाकर राजी किया जा सकता है। लेकिन एक बात और है—कॉलेज में मीठू कुछ दिन उस लड़के के पास पढ़ती थी। इसीलिए मीठू के बाप को इतना गुस्सा है। मीठू के बाप हृषीकेश बाबू का कहना है कि जो शख्स अपनी छात्रा से वैसा प्यार कर सकता है, उसमें चरित्रबल नाम की कोई चीज नहीं। जिस मर्द में चरित्र का बल नहीं है, क्या वह इन्सान है! सड़क पर जो लड़के लड़कियों से गप लड़ाते हैं, वे तो लोफर हैं! हालाँकि जमाना काफी बदल गया है, लेकिन जयश्री के बाप को उसकी खबर नहीं है।

चिट्ठी अलका देवी के हाथ में रही और वे एकटक जयश्री की ओर देखने लगीं। देखते-देखते उनकी आँखों में आँसू आ गये। यही उनकी पहली संतान है। इसे कितने लाड़-प्यार और जतन से पाला-पोसा गया है! जब वह पैदा हुई थी, तब उनकी माली हालत भी इतनी अच्छी नहीं थी, लेकिन बेटी को उन्होंने कभी किसी चीज की कमी महसूस नहीं होने दी। अब वह ऐरे-गैरे लड़के के साथ जहाँ-तहाँ जाकर क्या सुखी रह सकेगी? माँ-बाप को छोड़कर क्या उसे तनिक भी तकलीफ नहीं होगी? क्या वह उस तकलीफ को सह सकेगी? जब वह पैदा हुई थी लगता है, अभी कल की ही तो बात है, लेकिन देखते-देखते वही लड़की कितनी बड़ी हो गयी। तीन-चार साल पहले भी वह रात को भूत के डर से माँ या बाप को बुलाती थी। आज उसकी अपनी राय इतनी बड़ी हो गयी है कि वह किसी की बात नहीं मानती! शादी के बाद लड़की दूसरे के घर जा-कर रहेगी—यह सोचते ही अलका देवी को तकलीफ होती है फिर अगर

वह माँ-बाप की इच्छा के विरुद्ध कहीं चली जायेगी तो पता नहीं माँ-बाप को कितना कष्ट होगा !

मकान एकदम सूना है। जयश्री से छोटा भाई सुब्रत पिछले साल जर्मनी चला गया। स्कालरशिप पानेवाला लड़का जिन्दगी में तरक्की करेगा, इसलिए उसे रोका नहीं जा सका। छोटे लड़के सव्यसाची की उम्र चौदह साल है। इधर वह पढ़ने-लिखने में बड़ा कमजोर हो गया था, इसलिए बाप ने उसे देवघर के विद्यापीठ में भेज दिया है। उस विद्यापीठ के कड़े कायदे-कानून से ही शायद लड़का सुधर जाय। अलका देवी के देवर परेश और उसकी पत्नी सुजाता के कोई बाल-बच्चा नहीं है। घर में यही एक लड़की जयश्री है—यह भी दूसरे के घर चली जायेगी ? माँ-बाप के बारे में एक बार भी नहीं सोचेगी ?

अलका देवी ने चिट्ठी नहीं पढ़ी। ऐसा करना उन्हें अपनी मर्यादा के विरुद्ध लगा। उनकी बेटी जयश्री भी जानती है कि उसकी माँ चोरी से उसकी चिट्ठी नहीं पढ़तीं। इसीलिए उसने सावधानी नहीं बरती। लेकिन अलका देवी गुस्से पर काबू नहीं पा सकीं। आगा-पीछा सोचे बिना उन्होंने उस चिट्ठी को फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। लेकिन इससे कोई फायदा नहीं होगा। जयश्री दूसरी चिट्ठी भी तो लिख सकती है। लेकिन अलका देवी के मन की हालत यह सब सोचने लायक नहीं थी।

फाड़ी गयी चिट्ठी के टुकड़ों को अलका देवी मुट्ठी में लेकर मसलने लगीं। तभी उनको न जाने कैसा शक हुआ। यह लिखावट तो जयश्री की नहीं लगती।

जल्दी-जल्दी अलका देवी फिर उन टुकड़ों को जोड़ने की कोशिश करने लगीं, लेकिन उतने छोटे टुकड़ों को उतनी जल्दी जोड़ लेना आसान नहीं था। लेकिन यह लिखावट जयश्री की कभी नहीं हो सकती। अलका देवी ने दूसरी चिट्ठी की लिखावट से उसकी लिखावट को मिलाकर देखा और उनका शक लगभग दूर हो गया। चिट्ठी लिखने के मामले में जयश्री हमेशा बड़ी आलसी है। सात दिन कहकर भी उससे नाते-रिश्ते के लोगों

को कभी एक चिट्ठी नहीं लिखायी जा सकती। अगर वह लिखती भी है तो पाँच-सात लाइनों में चिट्ठी पूरी हो जाती है। लेकिन जयश्री के पैड में शांतनु को लिखी किसी दूसरे की चिट्ठी कैसे आ गयी? इसका क्या मतलब हो सकता है? वह लिखावट तो किसी और लड़की की थी!

अलका देवी को सब कुछ अजीब गोरखधंधे की तरह लगा। चिट्ठी के टुकड़ों को लेकर क्या करें वे, समझ नहीं पायीं। कल चिट्ठी नहीं मिलेगी तो जयश्री सोचेगी कि उसी ने गलती से कहीं रख दी है। अब इन टुकड़ों को कमरे में नहीं फेंका जा सकता। अलका देवी ने खिड़की की झिलमिली को जरा-सा खोलकर उन टुकड़ों को बाहर फेंक दिया। तेज हवा में वे टुकड़े कहाँ उड़ गये, क्या पता!

विचित्र मन:स्थिति में अलका देवी ने फिर जयश्री की तरफ देखा। यही उनकी लड़की है। यही उनके शरीर में थोड़ा-थोड़ा करके बड़ी हुई है। फिर देखते-देखते उन्हीं के आँखों के सामने यह कितनी बड़ी हो गयी, कभी-कभी यह एक-आध महीने के लिए मामा के घर जाकर रहती है, नहीं तो तेईस साल में अलका देवी ने इसे कभी अपनी आँखों से दूर नहीं किया। यह क्या खाना पसंद करती है, इसे किस रंग की साड़ी पसंद है और कब इसकी तबीयत खराब होती है—यह सब उन्हें पता है, लेकिन इसका मन किधर भाग रहा है यह वे नहीं जानतीं। यह लड़की अपने माँ-बाप से कम प्यार नहीं करती, फिर भी अपने माँ-बाप को क्यों इतना बड़ा आघात पहुँचाना चाहती है?

बालों को खूब खींचकर जयश्री ने जूड़ा बनाया है, चेहरे पर ढेर सारा क्रीम पुता है और माथे पर जो हरी बिन्दी लगायी थी, अब पुँछ जाने पर भी उसका हलका दाग बाकी है। इस समय वह गुड़ी-मुड़ी असहाय-सी सो रही है। सिर तकिये से नीचे चला गया है, गोरे चेहरे पर पसीने की एक-दो बूंदें झलक आयी हैं—अब भी सो जाने पर वह छोटी बच्ची-सी लगती है। मातृस्नेह से अलका देवी का दिल मचल उठा। उन्होंने झुककर जयश्री का सिर तकिये पर रख दिया और पाँवों

के पास साड़ी जरा ऊपर उठ गयी थी जिसे ठीक कर दिया।

जयश्री रात को मसहरी नहीं लगाना चाहती, रात भर पंखा चला कर सोती है। आजकल आधी रात के बाद ठंडक पड़ने लगती है। अलका देवी ने पंखे की स्पीड कम कर दी और कमरे की बत्ती बुझा दी। फिर कमरे से निकलकर उन्होंने किवाड़ भेड़ दिये।

अपने कमरे में जाकर अलका देवी ने देखा कि हृषीकेश बाबू इसी बीच गहरी नींद सो गये हैं। लड़की के बारे में अलका देवी उनसे एक-दो बातें करना चाहती थीं, लेकिन पति को गहरी नींद में देखकर उन्होंने उन्हें जगाया नहीं। लेकिन लेटने के बाद अलका देवी को जल्दी नींद नहीं आयी। अब उनके जागने की बारी थी। वे लेटी-लेटी न जाने क्या-क्या सोचती रहीं।

अरी, छोड़ सखी, छोड़ दे,
प्यार सब झूठ है–

—रवीन्द्रनाथ

घर लौटते समय रोज अनुराधा का मन जरा कड़वा हो जाता है। बस से उतरने के बाद एक-दो मिनट पैदल चलना पड़ता है, उसके बाद मकान की तीसरी मंजिल पर उसका फ्लैट है। लेकिन इतने ही समय में उसे लगता है कि काफी लंबा रास्ता तय करना पड़ रहा है, अनेक रुकावटें पार करनी पड़ रही हैं।

मोड़ पर चाय की छोटी-सी दुकान है। उस दुकान की चाय में क्या लज्जत है, कहा नहीं जा सकता। लेकिन हर वक्त वहाँ भीड़ लगी रहती है! दुकान जब लोगो से भर जाती है, तब लोग सड़क पर चले आते हैं। अनुराधा जब घर लौटती है तब बहुत-से लोग फुटपाथ पर खड़े होकर चाय पीते रहते हैं। दो कदम का वह रास्ता पार करते समय जैसे अनुराधा सर्वाङ्ग में अदृश्य कवच पहन लेती है। ठीक उसी को लक्ष्य कर कभी किसी ने कोई भद्दी बात कही है या नहीं, यह उसे याद नहीं पड़ता, लेकिन बहुत-सी भद्दी बातें उसके कानों में आती अवश्य हैं।

वैसी भद्दी बातें कहकर लड़कों को क्या मजा मिलता है, कहा नहीं जा सकता! लेकिन जिन लड़कों से अनुराधा की आमने-सामने मुलाकात हुई है या जिनसे उसने बातें की हैं, उनमें से कोई वैसी बात नहीं करता। उन सब लड़कों से इन सब लड़कों की साज-पोशाक में कोई फर्क नहीं है। फिर क्या थोड़ी आड़ से सभी लड़कों की भाषा वैसी ही होती है! वे लड़के जैसी बातें करते हैं, उससे लगता है कि लड़कों के लिए लड़की का माने एक शरीर है—लुभावने अंग-प्रत्यंगों वाला उपभोग-योग्य एक

शरीर, और उसके अलावा कुछ नहीं ! फिर भी उन लड़कों में से बहुतों की उम्र अनुराधा की उम्र के बराबर है और कुछ की उससे भी कम।

उधर वाले फुटपाथ से जाने का उपाय नहीं है। वहाँ न जाने कब सड़क खोदी गयी थी और तब से वहाँ मलबे का ढेर लगा है। फिर भी किसी तरह किनारे से निकला जा सकता है, लेकिन वहीं अनुराधा के पिता के एक दोस्त का मकान भी है। पिता के वे दोस्त या उनके घर का कोई उसे देखते ही बुला लेता है, लेकि रोज एक तरह की बातें करने लायक मन की हालत उसकी नहीं रहती।

उतना रास्ता अनुराधा सिर नीचा किये पार करती है। लेकिन मकान में प्रवेश करते समय एक और परेशानी आती है। अंजन से जरूर मुलाकात हो जायेगी। अनुराधा के घर लौटने का समय अंजन को कैसे पता चल जाता है, कहा नहीं जा सकता ! अंजन जरूर उस समय मोड़ पर चाय की दुकान में बैठा रहता है और अनुराधा को देखते ही चला आता है। अंजन अनुराधा से दो साल छोटा है और बी० एस-सी० पास करने के बाद बेरोजगार बैठा है।

आज भी अंजन मिला और बोला—टुकू दी, आपकी चिट्ठी है।

चिट्ठी का नाम सुनते ही अनुराधा की छाती धड़क उठी। उसे अपने शरीर में अजीब-सी जकड़न महसूस होने लगी। लेकिन जिस विशेष चिट्ठी का उसे इंतजार है, अब वह कभी नहीं आयेगी, यह उसे मालूम है !

लिफाफे की तरफ एक बार देखते ही अनुराधा समझ गयी कि मामूली चिट्ठी है। फिर भी उसने चेहरे को थोड़ा कठोर बनाकर कहा—चिट्ठी तुम्हारे पास क्यों है ? क्या डाकिये ने लेटर-बॉक्स में नहीं डाली ?

अंजन ने खूब हँसकर कहा—आपने नहीं देखा ? आप लोगों का लेटर-बॉक्स कहाँ है ?

दीवार पर जहाँ लेटर-बॉक्स था, अब वहाँ सिर्फ चौकोर दाग था और लेटर-बॉक्स गायब।

—क्या हुआ ? कहाँ गया ?

—जहाँ जाता है ! पिछले हफ्ते हम लोगों का गया था, इस हफ्ते आप लोगों का गया। प्रणवेश दा का तो खैर, अब भी बचा है।

—अरे, सवेरे ही देखा था कि लगा है !

—ठीक से याद है कि आज सवेरे आपने देखा था ?

अनुराधा सवेरे बहुत जल्दी निकल गयी थी। उस समय उसने लेटर-बॉक्स को देखा था या नहीं, अब याद नहीं पड़ता फिर भी उसने जोर देकर कहा—हाँ, हाँ, मैंने देखा था !

—तब उसके बाद कोई ले गया होगा।

—दिनदहाड़े चोरी हो गयी और तुम देख नहीं सके ?

—अगर आप कहतीं तो हर वक्त खड़े होकर पहरा देता !

अब अनुराधा को आगे कुछ कहने की इच्छा नहीं हुई। अनुराधा से बात करने का बहाना मिल जाय, इसलिए अंजन ने खुद ही उस लेटर-बॉक्स को हटा दिया हो, तो भी आश्चर्य की कोई बात नहीं है। कुछ दिन पहले अनुराधा की सीढ़ी का बल्ब चोरी चला गया था तो अँधेरे में खड़े होकर अंजन ने ही उसे वह खबर दी थी।

अनुराधा ने हाथ बढ़ाकर चिट्ठी ले ली। चिट्ठी लेते ही अनुराधा समझ गयी कि अंजन ने लिफाफा खोला था। गोंद लगी जगह अब भी गीली थी।

अंजन, तुमने मेरी चिट्ठी खोली थी ?

क्या कहती हैं टुकू दी, मैं आपकी चिट्ठी क्यों खोलूँगा ?

अनुराधा ने उँगली से हलके से उचाड़ा तो लिफाफे का मुँह खुल गया। अनुराधा की आँखों में विषाद भर आया। उसने सीधे अंजन की तरफ देखकर कहा—क्या पोस्ट ऑफिस से इसी तरह चिट्ठी आती है ?

यह डाकिये से पूछ लीजिएगा।

अंजन के चेहरे पर शरारत की छिपी मुस्कराहट थी। वह अपने दुष्कृत्य को छिपाने की भी कोशिश नहीं कर रहा था। उम्र में छोटा होने पर कोई लड़का किसी लड़की को अपनी दीदी मानकर सम्मान देगा,

अब वह विश्वास गलत साबित होने लगा था। अंजन चोरी-छिपे अनुराधा को लेकर कहीं घूमने जाना चाहता है—पता नहीं, उसने अपने दोस्तों से इस बात पर बाजी धरी है या नहीं। कभी-कभी अनुराधा को गुमनाम चिट्ठी मिलती है। अनुराधा को पक्का विश्वास है कि वह अंजन ही लिखता है। यहाँ तक कि कॉलेज में उस दिन अनुराधा को जो टेलीफोन मिला था, वह भी अंजन का ही था। आवाज को लाख बिगाड़ने पर भी अनुराधा उसे पहचान गयी थी।

लिफाफे को मोड़-माड़कर अनुराधा ने अंजन की तरफ फेंका और कहा—लो, जितना चाहो, पढ़ो ! अब मुझे उस चिट्ठी की जरूरत नहीं है

नाराज होकर अनुराधा जल्दी-जल्दी सीढ़ी चढ़ने लगी।

अंजन अनुराधा को चाहे जितना परेशान करे, उसकी चाहे जितनी चिट्ठियाँ खोलकर पढ़े, कुछ करने का उपाय उसके पास नहीं था। ऐसे मामले में लड़कियाँ कमजोर जो होती हैं। इस बात को लेकर हल्ला मचाने पर अनुराधा के ही सम्मान को ठेस लगेगी। क्या वह अंजन के पिता जी से जाकर कहे कि चाचा जी, आप अपने बेटे को सँभालिए ! नहीं, वैसा नहीं किया जा सकता। वैसे मामलों में सब लोग लड़कियों को दोष देते हैं। अगर अंजन के पिता जी कहें कि बिटिया, इतनी लड़कियाँ रहते वह तुम्हारे ही साथ क्यों ऐसा करता है, तो ?

सवाल तो यही है ! अंजन अनुराधा को ही क्यों इस तरह परेशान करता है ? क्या वह अपनी उम्र की या अपनी उम्र से छोटी किसी लड़की से दोस्ती नहीं कर सकता ? उम्र में छोटा होकर भी वह अनुराधा से प्यार जताना चाहता है ! ऐसा सोचने पर अनुराधा को हँसी आती है। खैर, कुछ भी हो, अंजन को अभी तक प्यार जताने की भाषा नहीं मालूम यह स्पष्ट है। सीढ़ी के पास खड़े रहना, गुमनाम चिट्ठी लिखना या टेलीफोन पर डराना तो प्यार की भाषा नहीं है।

झटपट सीढ़ी चढ़कर अंजन ने एकाएक अनुराधा का हाथ पकड़कर कहा—आप नाराज हो गयीं टुकू दी ? चिट्ठी लेती जाइए !

धीरे-धीरे हाथ छुड़ाकर बड़ी दुखी आवाज में अनुराधा बोली—अंजन, तुम मेरे साथ क्यों ऐसा करते हो ? इससे तुम्हें क्या मिलता है ?

—वाह ! मैंने आपके साथ क्या किया है ? मैं सच कह रहा हूँ कि मैंने आपकी चिट्ठी नहीं खोली। लिफाफा खुला था, मैंने तो बल्कि उसे बंद कर दिया।

—अच्छी बात है।

—टुकू दी, सुनिए ! आपसे जरूरी बात है...

—अभी मेरे पास फुर्सत नहीं है। जरा भी फुर्सत नहीं है...

दूसरी मंजिल पर प्रणवेश दा का फ्लैट है। इस फ्लैट का दरवाजा कभी बंद नहीं रहता। इसका कारण है। दायें और पीछे मकान हैं, इसलिए हवा नहीं आती। पूरब तरफ खिड़की है और उधर खुला भी है, इसलिए दरवाजा खुला रखने पर ही फ्लैट में थोड़ी-थोड़ी हवा पहुँचती है।

फ्लैट के दरवाजे से प्रणवेश दा का बैठने का कमरा साफ दिखाई पड़ता है। प्रणवेश दा वहाँ अक्सर बैठकर किताब बैठते रहते हैं। आँख मिलने पर प्रणवेश दा अक्सर बुलाते हैं ! न बुलाने पर भी अनुराधा कभी-कभी खुद चली जाती है। प्रणवेश दा की पत्नी बीमार हैं। ढाई साल से वे बिस्तर पर पड़ी हुई हैं और लगता है कि उनकी बीमारी कभी ठीक नहीं होगी। रीढ़ की कोई हड्डी हट गयी है, इसलिए वे बिस्तर से उठ नहीं सकतीं। कभी वे उठती भी हैं तो हाथ पकड़कर उनको ले चलना पड़ता है। प्रणवेश दा की पाँच साल की एक लड़की है। घर में एक बूढ़ी विधवा है—वही खाना बनाती और प्रणवेश दा की लड़की की देखभाल करती है। हफ्ते में दो दिन नियम से डॉक्टर प्रणवेश दा की बीवी को देखने आते हैं।

अनुराधा अक्सर जाकर प्रणवेश दा की पत्नी का हाल-चाल पूछती है, उनकी बच्ची से प्यार करती है और कभी-कभी उस बच्ची को अपने फ्लैट में भी ले आती है। प्रणवेश दा के लिए अनुराधा के मन में दया थी। प्रणवेश दा धीर, शांत पुरुष हैं। कभी उनसे कोई शिकायत सुनने को नहीं मिलती। वे जी-जान से पत्नी की सेवा करते हैं। कभी-कभी बच्ची ज्यादा रोती है तो वे उसे गोद में लेकर बाहर टहलते रहते हैं। सब कुछ ठीक है, लेकिन प्रणवेश दा की जिंदगी खत्म हो चुकी है। पत्नी की बीमारी ठीक नहीं होगी और प्रणवेश दा को अपनी जिंदगी के और न जाने कितने साल इसी तरह बेमज़ा बिताने पड़ेंगे।

प्रणवेश दा मोटे तौर पर किसी विलायती कम्पनी में अच्छी नौकरी करते हैं। लेकिन प्रतिदिन दफ्तर में छुट्टी होते ही वे घर लौट आते हैं। सिनेमा, थियेटर या दोस्तों से गपबाजी करने का मानो उन्हें शौक ही नहीं है। प्रणवेश दा का स्वभाव ही ऐसा है कि घर में बीमार पत्नी और छोटी बच्ची को छोड़कर उत्तरदायित्वहीन लापरवाह बनना उनके लिए संभव नहीं है। दफ्तर के काम से बीच-बीच में उन्हें एक-दो हफ्ते के लिए बाहर भी जाना पड़ता है। उस समय वे एक बुआ को अपने यहाँ लाकर रखते हैं। हालाँकि वह बुआ अपना घर छोड़कर बड़ी खुशी से यहाँ आने को तैयार नहीं होतीं।

किताबें पढ़ना प्रणवेश दा का एकमात्र व्यसन है। लगता है, पत्नी के इलाज के बाद जो पैसा बचता है उससे वे किताबें ही खरीदते हैं। अब तक अनुराधा ने प्रणवेश दा की तरह शिक्षित और ज्ञानी पुरुष दूसरा नहीं देखा। हालाँकि उनकी नौकरी के साथ उनके किताबें पढ़ने के व्यसन का कोई मेल नहीं है। वे लेखक या अध्यापक नहीं हैं। फिर उनके किताबें पढ़ने में भी बड़ी विशेषता है। मामूली कहानी या उपन्यास नहीं, वे इतिहास, विभिन्न युद्धों के प्रसिद्ध सेनापतियों के संस्म-रण, भ्रमण-कथाएँ और दर्शनशास्त्र की किताबें पढ़ते हैं। वे कभी अपनी विद्वत्ता प्रकट करने की कोशिश नहीं करते और बहुत धीरे-धीरे बात

करते हैं। मानो उनके स्वभाव में उत्तेजना नाम की चीज ही नहीं है। इसलिए उनसे बात करने पर अनुराधा को बड़ा आनन्द मिलता है। लेकिन ऐसा कहना भी पूरी तरह ठीक नहीं है। अनुराधा को पहले बहुत अच्छा लगता था, लेकिन अब नहीं लगता।

उस दिन प्रणवेश दा की लड़की रिनी न जाने किस बात पर बहुत ज्यादा रोने लगी थी। प्रणवेश दा उसे किसी तरह चुप नहीं करा पा रहे थे। उस लड़की को माँ के हाथों का जतन नहीं मिला था, इसलिए वह स्वाभाविक रूप से जिद्दी बन गयी थी। बिस्तर पर पड़ी-पड़ी माँ उसे चुप कराने का प्रयास कर रही थीं। अनुराधा उसी समय सीढ़ी से ऊपर जा रही थी। उसने प्रणवेश दा के फ्लैट में पहुँचकर कहा था—दीजिए, मैं उसे अपने घर ले जाऊँ।

लेकिन रिनी किसी तरह अनुराधा के साथ जाने के लिए तैयार नहीं हुई। अनुराधा की गोद में आकर भी वह हाथ-पाँव पटकने लगी। हिस्टीरिया के मरीज की तरह विचित्र हरकतें करती रही। फिर भी अनुराधा उसे जबर्दस्ती अपने यहाँ ले गयी। बड़ी मुश्किल से उसे पुचकारकर-फुसलाकर चुप कराया। थोड़ी देर बाद वह सो गयी। तब अनुराधा उसे गोद में लेकर नीचे आयी।

प्रणवेश दा ने कृतज्ञता की हँसी-हँसकर कहा—सो गयी है। वाह ! उसे वहीं लिटा दो। उसकी माँ भी सो गयी है। रात को वह किसी तरह नहीं सोती।

हाथ की मोटी और भारी किताब को बंद कर प्रणवेश दा ने सो रही लड़की के माथे पर से बालों की लट हटाकर थोड़ा प्यार किया। फिर वे मानो अपने आप से बोले—दो-तीन साल में यह कुछ बड़ी हो जायेगी, तो जरूर थोड़ा समझने लगेगी। जब वह उस तरह रोती है, तब उसकी माँ को ज्यादा तकलीफ होती है।

फिर अनुराधा की तरफ देखकर प्रणवेश दा ने कहा—खड़ी क्यों हो, बैठो !

अनुराधा वोली—नहीं, मैं बैठूँगी नहीं, अब जाऊँगी....

—थोड़ी देर तो बैठो !

खाट पर बैठकर प्रणवेश दा ने सिगरेट सुलगायी। वे पायजामा और बनियाइन पहने हुए थे, उम्र चालीस के आस-पास होगी। उनके चेहरे पर हर समय शांत उदासीनता छायी रहती।

प्रणवेश दा ने पूछा—कल और परसों तुमको नहीं देखा—क्या कहीं बाहर गयी थीं ? कुल मिलाकर शायद तुम्हें तीन-चार दिन नहीं देखा....

अनुराधा जरा शरमा गयी। सचमुच, इधर कई दिन तक वह इन लोगों की खोज-खबर लेने नहीं आ सकी थी। वह वोली—नहीं, मैं यहीं थी। इधर हमारे कालेज की लड़कियों का इम्तहान शुरू हो गया है, इसलिए थोड़ा व्यस्त हूँ....

—तुम्हारा कालेज तो वहुत दूर है—आने-जाने में काफी समय लग जाता है।

—करीव दो-ढाई घंटे लग जाते हैं।

—वक्त वहुत वरवाद होता है ! इधर पास के किसी कॉलेज में नौकरी नहीं मिल सकती ?

—मिलना तो खैर मुश्किल है, फिर मैंने कोशिश भी नहीं की। दम-दम के कॉलेज में मैंने जान-बूझकर नौकरी ली है।

—क्यों ?

—एक तो मेरी इच्छा कॉलेज में पढ़ाने की नहीं थी। स्कूल-कॉलेज में नौकरी करने पर हर वक्त वहन जी वने रहने का ढोंग रचाना पड़ता है। अपनी इच्छा से सड़क पर चला भी नहीं जा सकता—दो कदम चलते न चलते किसी न किसी छात्रा से मुलाकात हो ही जाती है। कम से कम यहाँ दक्षिण कलकत्ते में दमदम की छात्राओं से तो मुलाकात होने की संभावना नहीं है—फिर भी कभी-कभी मुलाकात हो जाती है....

यह कहते हुए अनुराधा हँस पड़ी।

प्रणवेश दा ने भी थोड़ा मुस्कराकर कहा—वात तो सही है कि तुमने

एम० ए० पास कर लिया है, लेकिन तुम अध्यापिका के रूप में जँचती नहीं।

अनुराधा ने प्रणवेश दा की बात मान ली और कहा—आपने ठीक कहा है। एम० ए० करने के बावजूद मैं ज्यादा पढ़-लिख नहीं सकी। आपसे बात करने पर मैं यह भली-भाँति समझ जाती हूँ!

—मैं वह नहीं कह रहा। सिर्फ पढ़ना-लिखना ही नहीं; अध्यापिका बनने के लिए, मेरा ख्याल है कि मानसिक गठन भी थोड़ा दूसरे प्रकार का होना चाहिए। तुम साधारणतः बड़ी अच्छी लड़की हो।

—आप अगर अध्यापक होते तो बड़ा अच्छा होता। आप खूब जँचते! आप यह नौकरी छोड़कर प्रोफेसरी कीजिए न! इससे छात्रों का भला होगा। आपने इतनी पढ़ाई की है....

इस बात का जवाब न देकर प्रणवेश दा ने पूछा—क्या तुम्हें घूमना बहुत अच्छा लगता है?

—बहुत अच्छा लगता है! घर में कितनी देर रहती हूँ। इसलिए माँ कितना डाँटती हैं। फिर भी मेरा मन करता है कि खूब घूमा करूँ—यूरोप, अफ्रीका....

फिर अप्रत्याशित ढंग से स्वर में करुण प्रार्थना भरकर प्रणवेश दा ने कहा—तुमसे एक अनुरोध करूँगा, उसे तुम रखोगी न?

अनुराधा को जरा अफसोस हुआ कि जिस व्यक्ति की पत्नी ढाई साल से बिस्तर पर पड़ी है और जो दफ्तर के अलावा और कहीं जाने के लिए घर से नहीं निकलता उसके आगे इतने उच्छ्वास के साथ अपनी घूमने की इच्छा प्रकट न करना ही अच्छा था। यह मानो दरिद्र के सामने किसी धनी द्वारा धन का गर्व करने के समान हुआ, जो अनुचित है।

—कहिए?

—तुम रोज कम से कम एक बार भी हमारे यहाँ आ जाया करो। सवेरे या शाम को जब भी फुर्सत मिले, कम से कम पाँच मिनट के लिए....

—जरूरी आऊँगी। भाभी को और रिनी को जरूर देख जाया करूँगी। हम लोगों को तो आना ही चाहिए।

—मैं जब रहूँ, तभी अगर तुम थोड़ी देर के लिए आ जाओगी तो मैं जिन्दगी भर तुम्हारा एहसान मानूँगा !

—आप ऐसा क्यों कह रहे हैं ?

प्रणवेश दा की खाट से अनुराधा की कुर्सी कम से कम चार हाथ दूर थी। प्रणवेश दा खाट से नहीं उठे, लेकिन अनुराधा को लगा कि उन्होंने अपनी दृष्टि से अनुराधा का शरीर छू लिया। उनकी दृष्टि बड़ी गहरी और बेचैन थी। बड़े दुखी स्वर में उन्होंने कहा—तुम्हें देखने की बड़ी इच्छा होती है। तुम्हें देखने पर मेरे मन में न जाने कैसी खुशी भर आती है....

अनुराधा कुछ घबड़ाकर खड़ी होने लगी।

प्रणवेश दा ने आदेश और अनुनय के मिले-जुले स्वर में कहा—अभी मत जाओ, थोड़ी देर बैठो अनुराधा, मैं कुछ भी नहीं चाहता, मैं कभी तुम्हारा अपमान नहीं करूँगा, सिर्फ मैं तुम्हें देखना चाहता हूँ। तुम्हारे जैसा सुन्दर स्वास्थ्य, तीखे नाक-नक्श, लम्बे-घने बाल, चेहरे पर झलमलाती हँसी और यह चंचलता—लड़कियों का यह रूप देखने के लिए मेरा मन बड़ा बेचैन रहता है। मैं नहीं जानता कि मैंने कुछ गलत कहा है या नहीं, लेकिन तुम्हें अपमानित करने की मेरी जरा भी इच्छा नहीं है....

एक पुरुष से इस तरह की प्रशंसा सुनकर अनुराधा को खुशी या गुस्सा, कुछ भी नहीं हुआ, सिर्फ उसे न जाने कैसा डर लगने लगा। पूरा घटना-क्रम ही न जाने क्यों बड़ा डरावना लगा। आज पहली बार उसने अनुभव किया कि वह एक निर्जन कमरे में एक बलशाली पुरुष के सामने अकेली है।

प्रणवेश दा के खड़े होते ही अनुराधा घबड़ाकर कुर्सी छोड़कर खड़ी हो गयी। लेकिन प्रणवेश दा आगे नहीं बढ़े, उन्होंने अनुराधा का शरीर

नहीं छुआ—जोर-जवर्दस्ती करने की भी उनकी कतई इच्छा नहीं लगी। उन्होंने पहले जैसे विषाद भरे स्वर में कहा—यह और कुछ नहीं है, सिर्फ एक सुन्दर वस्तु देखने से जो आनन्द मिलता है, वही है....

उस दिन अनुराधा झटपट ऊपर चली गयी थी। उस दिन देर तक उसकी छाती धड़कती रही। प्रणवेश दा ने उसे जरा भी नहीं डराया, लेकिन डर की कल्पना से ही उसका सारा वदन काँप उठा।

उसके वाद अनुराधा कभी खुला मन लेकर प्रणवेश दा के फ्लैट में नहीं जा सकी। प्रणवेश दा के सामने खड़े होते ही उसे न जाने कैसी वेचैनी महसूस होने लगी। प्रणवेश दा की आँखें मानो चुम्बक का काम करती हैं, लेकिन पहले तो कभी अनुराधा को ऐसा अनुभव नहीं हुआ था। जो शख्स अपनी वीमार पत्नी की देखभाल इतने जतन से करता हो, जिसकी आँखें ज्यादातर समय पुरानी किताबों के वदरंग पन्नों पर ही लगी रहती हों, वही जब अनुराधा की तरफ देखता, तब उसकी आँखों की दृष्टि और तरह की हो जाती है। उन आँखों में लोभ रहता है, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता; लेकिन क्या रहता है, यह भी वताना वहुत मुश्किल है।

आजकल ज्यादातर दोपहर में, प्रणवेश दा जब दफ्तर में रहते हैं, अनुराधा रूमा भाभी का हाल-चाल पूछ आती है। उस घटना के वाद अनुराधा को लगता है कि रूमा भाभी की आँखों में भी नीरव तिरस्कार है। शायद रूमा भाभी सोचती हैं कि उनके सच्चरित्र पति का दिमाग खराव करने के लिए ही अनुराधा आती है। हो सकता है कि अनुराधा का ऐसा अनुमान गलत हो।

वीमार प्रतिवेशी की खोज-खवर लेने का, प्रणवेश दा की सहायता या उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करने का कोई दूसरा मतलव भी हो सकता है—यह अभी तक अनुराधा नहीं समझ सकी थी। लेकिन उस तरह से सोचने पर उसे वड़ा वुरा लगता। वह किसी कीमत पर रूमा भाभी की मानसिक यंत्रणा को वढ़ाना नहीं चाहती। कभी-कभी उसके मन में आता

कि अगर वह लड़की न होती तो शायद उसके लिए ऐसी समस्या पैदा होने का सवाल नहीं उठता। लड़कों के लिए ऐसी कोई समस्या नहीं है। लकड़ों के मुकाबले लड़कियों के लिए यह संसार बड़ा बुरा है।

एकदम न आना भी अच्छा नहीं लगता। प्रणवेश दा की लड़की रिनी अनुराधा को बहुत चाहती है। अनुराधा भी बच्चों से खूब हिल-मिल सकती है। रिनी अक्सर उसे हाथ पकड़कर खींच लाती है। फिर प्रणवेश दा उसे देखते ही बुलाते हैं। किसी-किसी दिन वे शिशु के समान रूठन-भरे स्वर में पूछते हैं—क्या तुम मुझसे नाराज हो अनुराधा ?

—क्यों ? मैं भला नाराज क्यों होऊँगी ?

—फिर तुम आती क्यों नहीं ?

—आती तो हूँ....

—जिस दिन मैंने तुमसे वैसा अनुरोध किया, उसी दिन से तुम मुझसे बचती हुई-सी रहती हो। क्या मैंने कुछ गलत कहा था ? क्या मैंने तुम्हारा अपमान किया था ?

अनुराधा चुप रहती। प्रणवेश दा दूर खड़े होते तो, पास चले आते लेकिन वे अनुराधा का शरीर नहीं छूते। यहाँ तक कि कभी स्नेह जताने के बहाने भी उन्होंने अनुराधा का अंग-स्पर्श नहीं किया। दीवार पर समुद्र का कैलेंडरवाला चित्र टँगा है—दक्षिण भारत के समुद्र-तट का कोई प्राचीन मन्दिर भी है—उसी तरफ देखते हुए दीन-दुखी की तरह प्रणवेश दा कहते—कोई और बात नहीं है, सिर्फ तुम्हें देखने को मन करता है। मॉडीलियॉनी के बनाये नारी-चित्र जैसी ही तुम लगती हो। वैसा ही खूबसूरत मुखड़ा, वैसा ही असली यौवन। जब तुम हँसती हो तब तुम्हारी भौंहें भी उसी तरह काँपती हैं। तुम्हारे जैसा सुन्दर स्वास्थ्य बंगाली लड़कियों में कहाँ है, मैं जान नहीं सकता, इसीलिए मैं तुम्हें देखना चाहता हूँ। तुम्हें देखने पर मुझे सचमुच एक सुन्दर वस्तु देखने का आनन्द मिलता है....

यह वही प्रशंसा, वही स्तुति है। अनुराधा का शरीर डर के मारे

काँप उठता है। अब वह एक क्षण भी वहाँ स्थिर नहीं रह सकती। उसी दम उसका मन उस कमरे से निकल भागने को होता है। प्रणवेश दा के व्यक्तित्व के कारण उनके मुँह पर हँसना संभव नहीं होता, लेकिन अनुराधा अगर वैसे हँस सकती तो उसे काफी हद तक स्वाभाविक होने का मौका मिलता।

सीढ़ी से ऊपर जाते समय अनुराधा ने देखा कि प्रणवेश दा के फ्लैट में डाक्टर आये हैं। प्रणवेश दा दरवाजे के सामने खड़े होकर डाक्टर से बात कर रहे थे। प्रणवेश दा अनुराधा को बुला नहीं सके। एक बार उधर देखकर ही अनुराधा जल्दी-जल्दी ऊपर चली आयी। उतनी ही देर में प्रणवेश दा ने डाक्टर से बातें करते-करते भरपूर नजर अनुराधा को देख लिया। अनुराधा को लगा कि तीसरी मंजिल तक वह नजर उसका पीछा करती रही।

अनुराधा के घर में माँ-बाप और दो छोटे भाई-बहन हैं। बहन ग्यारह बरस की है और भाई तेरह बरस का। अनुराधा का बड़ा भाई बम्बई में नौकरी करता है। अब भैया का मन बम्बई में नहीं लग रहा है और वह कलकत्ते लौट आना चाहता है। हालांकि अनुराधा जानती है कि भैया के लिए अब कलकत्ते लौटना संभव नहीं है—फिर न लौटना ही अच्छा है। भाभी से माँ-बाप का कभी मेल नहीं हुआ। भैया ने अमीर की लड़की से शादी की है, शायद इसीलिए भाभी कभी इस घर को अपना नहीं समझ सकी। हालांकि पिता जी ने स्वयं ही शादी तय की थी। खुल कर झगड़ा होने से पहले भैया भाभी को लेकर बम्बई चला गया था। अब अगर दोनों कलकत्ते आयेंगे तो जरूर खटपट होकर रहेगी। उसके बाद अगर भैया भाभी के साथ कलकत्ते ही में अलग मकान लेकर रहेगा तो माँ को बहुत तकलीफ होगी। उससे तो यही ठीक है कि साँप भी मरे और लाठी भी न टूटे। दूर रहकर भाभी अपने सास-ससुर को भक्ति-भरा पत्र तो लिखती रहती है।

अनुराधा के बाप दवा की एक कम्पनी में अच्छी नौकरी करते थे।

रिटायर होने के बाद वे एक्सटेंशन पर हैं। एक्सटेंशन भी साल भर का है, इसलिए उनका मिजाज खराब रहता है, नौकरी जाने के बाद बुढ़ापे में बेटे के भरोसे रहना पड़ेगा, जो उनको किसी तरह बरदाश्त नहीं होगा। *खास कर तब जब लड़का शादी के बाद पराया हो गया है।* छोटे लड़के और लड़की की पढ़ाई बाकी है। छह साल पहले पिता जी बहुत ज्यादा बीमार पड़े थे। उस समय भैया की नौकरी नहीं लगी थी, इसलिए पिता जी को प्रॉविडेंट फंड से काफी रुपया निकालना पड़ा था। अब नौकरी छोड़ने पर उनको कोई ज्यादा रकम भी नहीं मिलेगी। रिटायर होने के बाद खुद कोई कारोबार करने की इच्छा है—उसी फिकर में पिताजी अभी से परेशान हैं, अभी से चारों तरफ दौड़-धूप करने लगे हैं।

उतनी दूर जाकर कालेज में पढ़ाना अनुराधा को अच्छा नहीं लगता, लेकिन वह समझ गयी है कि उसके नौकरी करने से पिताजी थोड़ा खुश हैं। इसलिए अपने खर्चे के लिए थोड़ा-सा पैसा रखकर वह पूरी तनख्वाह पिताजी को दे देती है। कोई ज्यादा रकम वह नहीं देती, फिर भी उससे घर की मदद होती है। अब अपनी आमदनी बढ़ाने के लिए उसने एक-दो ट्यूशन करने का भी निश्चय किया है।

छह साल पहले अनुराधा के बाप जब बीमार पड़े थे, उस समय ये लोग इलाहाबाद में रहते थे। उन दिनों की बात अनुराधा को खूब याद है। उस समय जिंदगी कितनी आसान थी, घर में कोई अशांति नहीं थी —रुपये-पैसे का हिसाब-किताब बड़ों की दुनिया का मामला था। अब भी इलाहाबाद अनुराधा को कलकत्ते से कहीं अच्छा लगता है। सिर्फ इलाहाबाद का एक वाकया उसकी छाती पर बाण के समान बिंधा हुआ है। वह एक आदमी था, अब वह इंगलैंड में है या जर्मनी में, कहा नहीं जा सकता—उसी ने अनुराधा से कहा था कि खत लिखूंगा....

अनुराधा आईने के सामने खड़ी थी। रात काफी हो चुकी थी। घर के लोग सो गये थे। पहले अनुराधा भाई-बहन के साथ एक कमरे में सोती थी, लेकिन भैया बम्बई चला गया तो यह कमरा अनुराधा को मिल गया

है। पिताजी खाना खाकर जल्दी सो जाते हैं। आज माँ से बात करते-करते अनुराधा ने काफी रात कर दी थी। उसके बाद वह कुछ देर कुर्सी पर बैठकर किताब भी पढ़ती रही थी। किताब पढ़ना उसका भी नशा है। रोज रात को थोड़ी देर किताब पढ़े बिना मानो उसका खाना हजम नहीं होता।

नींद लगने पर अनुराधा उठकर आईने के पास आयी। फिर वह जूड़ा बनाने लगी। उसके बाल बड़े लम्बे हैं। इसलिए वह कंघी करने लगी तो बस किये जा रही थी। यह भी उसके अनमने होने का लक्षण था। थोड़ी देर बाद उसने जूड़ा बनाया। अब वह चेहरे पर क्रीम मलने लगी। गाल और होंठ के ऊपर कभी उसका हाथ जोर-जोर से चलने लगता तो कभी धीरे-धीरे, याने वह पूरी तरह अनमनी थी। फिर उसने कानों के पीछे और केहुनी पर भी क्रीम मला। ऐसा उसने जयश्री से सीखा है। इससे केहुनी की चमड़ी मुलायम रहती है और उसमें सिकुड़न नहीं पड़ती। केहुनियाँ चिकनी रहती हैं। आईने पर न जाने कैसा दाग लगा है। उसने नाखून से उसे साफ किया। अब वह कपड़े बदलेगी। उसने छाती पर से आँचल हटाकर ब्लाउज के बटन खोले....

नहीं, बंद कमरे में अनुराधा के एकांत निजी परिवेश में झाँकना ठीक नहीं है। उसके अंगों की नाप-जोख या जायका लेने की भी कोई जरूरत नहीं है। लेकिन उसके हृदय की गहराई में कैसी हलचल हो रही है और इस समय वह क्या सोच रही है, इसका पता करना आसान है।

आईने के सामने खड़ी होकर अपने को देखते हुए अनुराधा सोचने लगी कि अभी तक किसी ने उससे प्यार की बातें नहीं कीं। उसकी उम्र तेईस साल की हो गयी, लेकिन किसी ने उससे प्यार नहीं जताया। उसके मकान की पहली मंजिल का वह लड़का अंजन, दूसरी मंजिल के प्रणवेश दा, इलाहाबाद का वह पहेली का सा आदमी और इनके अलावा बहुत-से दूसरे लोग, सड़क पर चलने वाले हजारों हजार लोग सिर्फ उसके शरी की तरफ देखते हैं। उसके शरीर में रूप है, सब उसी की तारीफ कर

हैं। प्यार के बिना रूप की प्रशंसा से उसे बहुत बुरा लगता है। उ
लगता जैसे उसका बुरी तरह अपमान किया जा रहा हो।

अनुराधा अपने मन में अच्छी तरह जानती है कि उसमें कोई खा
सुंदरता नहीं है। उसके भैया का रंग कहीं ज्यादा गोरा है, लेकिन उसक
गोराई उतनी चटकदार नहीं है। जयश्री भी बहुत गोरी है। अनुराध
जानती है कि उसका चेहरा-मोहरा भी बे-ऐब नहीं है लेकिन उसकी सेह
अच्छी है, कभी कोई बीमारी नहीं होती। याने, अगर कोई उससे प्या
करता है तो उसकी निगाह में वह खूबसूरत हो सकती है। लेकिन प्या
की बात किसी ने नहीं की, सबने उसके शरीर की ही तारीफ की है।
क्या सचमुच प्यार नाम की कोई चीज कहीं है? अनुराधा को तो विश्वास
नहीं होता।

सिर्फ जयश्री और शांतनु को अनुराधा ने एक दूसरे से पागल की
तरह प्यार करते देखा है। अनुराधा चाहती है कि शांतनु और जयश्री
का प्यार सार्थक हो। अगर ऐसा नहीं होगा तो प्यार पर से सचमुच
अनुराधा का विश्वास उठ जायेगा। शांतनु और जयश्री दोनों एक-दूसरे
को देख न पाने पर किस तरह बेचैन रहते हैं। जरूर यही प्यार है। उन
दोनों की जोड़ी बड़ी अच्छी रहेगी। जयश्री देखने में बड़ी खूबसूरत है
और उसी तरह जिद्दी और बात-बात पर रूठनेवाली! शांतनु भी ठीक
उतना ही अच्छा है, जितना अच्छा होने पर मर्द अच्छा लगता है। मैं
उन लोगों की हर तरह से मदद करूँगी—अनुराधा ने अपने मन में तय
कर लिया।

अनुराधा ने अपने मन में यह भी निश्चय कर लिया कि जिस दिन
कोई पुरुष आकर उससे कहेगा कि मैं तुमसे प्यार करता हूँ, उस दिन वह
निर्मम बनकर उसका प्रत्याख्यान करेगी।

•

—शवसापथर

लाइट हाउस सिनेमा के सामने थोड़ी दूर पर शांतनु आधे घंटे से खड़ा है, लेकिन जयश्री या अनुराधा का कहीं पता नहीं। शो शुरू भी हो गया और सब लोग हॉल में चले गये। अब सिनेमाघर के सामने कोई भीड़ नहीं। हालीवुड की कोई गरमागरम फिल्म लगी है। भीड़ अच्छी-खासी है। कुछ लोग अब भी टिकट के इन्तजार में निराश से खड़े हैं।

काफी देर खड़े रहने के बाद अब शांतनु को सब कुछ धुँधला दिखाई पड़ने लगा। सब कुछ आँखों के सामने है, लेकिन कुछ भी मानो दिखाई नहीं पड़ता। अब तक वह हर कार को गौर से देख रहा था, लेकिन जयश्री की कार दिखाई नहीं पड़ी। इतने में कार से उतरकर जयश्री और अनुराधा जब कुछ दूर चली गयीं तब कही शांतनु ने दोनों को देख पाया। वह झटपट उनकी तरफ बढ़ ही रहा था कि उसकी निगाह कार पर पड़ी। उसने देखा कि कार में अलका देवी बैठी थीं। अब वह आगे बढ़ने की बजाय एक खम्भे के पीछे छिप गया।

कार का इंजन बंद था और अलका देवी एकटक देख रही थीं। जयश्री और अनुराधा जब दरवाजे से अन्दर चली गयीं तब अलका देवी ने ड्राइवर को इशारा किया। कार न्यू मार्केट की तरफ मुड़ी तो शांतनु खंभे की आड़ से निकलकर सिनेमा हॉल की तरफ बढ़ा। दरवाजे से अन्दर जाकर उसने देखा कि जयश्री और अनुराधा कहीं नहीं थीं। क्या दोनों सिनेमा देखने चली गयीं? इसका क्या मतलब है? किसी तरह का संकेत या आंखों से इशारा भी नहीं किया गया और उसे खड़ा छोड़कर दोनों सिनेमा देखने चली गयीं! क्या उस दिन अनुराधा ने उससे प्रैक्टिकल जोक किया था?

शायद दोनों बाथरूम में गयी हों, यह सोचकर शांतनु और थोड़ी देर इन्तजार करता रहा। इतने में बाथरूम से एक ऐंग्लो-इंडियन लड़की निकली और खटाखट ऊपर चली गयी। शांतनु अपने को बड़ा बेवकूफ और ठगा हुआ-सा महसूस करने लगा। सभी लोग सिनेमा देखने की गरज से आ-जा रहे थे और शांतनु अकेला बेमतलब खड़ा था। लोग उसे देखकर अपने मन में पता नहीं क्या सोच रहे हों ? अब वह भी अगर टिकट कटाकर—लेकिन अब टिकट भी तो नहीं मिल सकता। हाउस-फुल हो गया है। इतनी देर तक उसे इस बात का भी ख्याल नहीं था।

सिनेमा हाउस से निकलकर शांतनु बाहर सड़क पर आ गया। उस का मन बड़ा कड़वा लगने लगा। बात क्या हो गयी है, उसकी समझ में नहीं आया। क्या अब वक्त काटने के लिए वह किसी दूसरे सिनेमा हॉल में चला जाये ? जयश्री इतने पास, इसी सिनेमा हॉल में बैठी है और उस से मुलाकात नहीं हो पायेगी ? अनुराधा ने यह कैसा इंतजाम किया है ? शो खत्म होने के बाद मुलाकात करने की कोशिश करना भी बेकार है। उस समय तो अलका देवी भी फिर से आ सकती हैं।

लेकिन शांतनु उस जगह से हट नहीं सका। वह खड़ा-खड़ा सिगरेट फूकने लगा। पन्द्रह मिनट बाद इंटरवल हुआ, बहुत-से लोग बाहर निकलने लगे, जयश्री और अनुराधा बाहर आकर शांतनु को ढूढ़ने लगीं।

अचानक शांतनु को लगा कि शाम के सवा छह बजे लाइट हाउस सिनेमा के सामने सड़क एकदम खाली है, कोई लोग-बाग नहीं हैं, सिर्फ मेरून और नारंगी रंग की साड़ी में दो लड़कियां खड़ी हैं। शांतनु को लगा कि दोनों लड़कियां उसकी तरफ देखकर हँस रही हैं।

शांतनु ने आगे बढ़कर पूछा—वाह ! तुम दोनों तो हॉल में चली गयीं ? मैंने सोचा कि तुम्हें सचमुच सिनेमा देखना है।

जयश्री ने हंसकर पूछा—क्या तुम चले जा रहे थे ?

—मुझे क्या पता ? अनुराधा ने सिनेमा देखने की बात तो नहीं

अनुराधा बोली—वाह ! मौसी जी के सामने क्या झूठ बोलूँगी, मौसी जी से कहा कि हम सिनेमा देखने जा रही हैं—अब एक बार भी अगर अन्दर न जायें तो कैसा लगेगा। उसके बाद अगर फिल्म देखने की इच्छा न हो तो बात अलग है।

—मुझे इतना समझने के लिए थोड़ा मौका तो दोगी ? तुम दोनों सीधे अन्दर चली गयीं....

अनुराधा ने जवाब दिया—क्यों ? मन की बात नहीं समझ सकते ? जयश्री ने तो मन-ही-मन आपसे इंतजार करने के लिए कहा था...

—मन की बात मैं ज्यादा नहीं समझ पाता ! अगर मैं चला जाता तो ?

—आज अगर आप चले जाते तो जयश्री फिर कभी आपसे...

जयश्री बोली—अनुराधा, चलो, कहीं चला जाय। यहाँ खड़े होकर बात करने की जरूरत नहीं है।

सिनेमा हॉल में घंटी बजी। अनुराधा बोली—ठीक है, तुम दोनों जाओ, मैं चली...

—अरी, तू कहाँ जाने लगी ?

—मैं जाऊँ। कम से कम फिल्म तो देख लूं। मैं क्यों बेकार फिल्म मिस करूँ ?

—हट ! तू अकेली पिक्चर देखेगी ?

अनुराधा ने बनावटी लंबी साँस छोड़कर कहा—अब मुझे साथी कहाँ मिलेगा भला ! तुम दोनों जाओ। लेकिन साढ़े आठ तक जरूर लौट आना !

शांतनु बोला—ऐसा नहीं हो सकता। लड़कियों के लिए अकेले पिक्चर देखना अच्छी बात नहीं है ! अनुराधा, तुम भी हमारे साथ चलो...

जोर से हँसकर अनुराधा शांतनु की तरफ देखकर बोली—ओफ ! इच्छा तो ऐसी नहीं है ! सिर्फ कहने के लिए कह रहे हैं...

जयश्री शरमाकर बोली—अरी नहीं, एकदम नहीं ! तू भी हमारे साथ आयेगी ।

शांतनु ने तुरंत जयश्री का समर्थन किया—तुम्हें हमारे साथ चलना होगा अनुराधा ! हमें कोई ऐसी बात नहीं करनी है, जो तुम्हारे सामने नहीं की जा सकती ।

अनुराधा ने होंठों में हँसी दबाकर कहा—टू इज़ कम्पनी, थ्री इज़ क्राउड । अब मैं क्यों भीड़ बढ़ाऊँ ? इससे तो अच्छा है कि आप लोग जाइए, घूम-घाम आइए, फिर कानों ही कानों में क्या सब बातें होती हैं न—वही सब कर लीजिए—अनुराधा हँसी और बोली—तब तक मैं पिक्चर देख लूँ, जयश्री को बाद में कहानी सुना दूँगी, नहीं तो कोई उससे पूछेगा तो...

जयश्री बोली—फिल्म की कहानी कोई नहीं पूछेगा, तू चल तो...

जयश्री ने किसी तरह फिर अनुराधा को नहीं जाने दिया । चौरंगी के सामने तीनों एक मिनट खड़े हुए । जयश्री ने पूछा—अब हम किधर चलें ?

शांतनु बोला—पहले कहीं चाय पियेंगे । अनुराधा की उस दिन की चाय बाकी है ।

—मैं शाम को एक बार ही चाय पीती हूँ और आज पी चुकी हूँ....

—मेरे अनुरोध पर आज दो बार सही...

पास की एक दुकान में वे चाय पीने के लिए चले गये । अनुराधा और जयश्री के बार-बार मना करने पर भी शांतनु ने ढेर सारी खाने की चीजों का आर्डर दे दिया । हालाँकि उन चीजों का ज्यादातर प्लेटों में ही पड़ा रहा । आत्म-सम्मान का ख्याल रखनेवाली लड़कियां कभी लड़कों के सामने ज्यादा खाना नहीं खातीं । तेज भूख लगने पर भी एक-दो टुकड़े तोड़कर मुँह में डालना ही नियम है । फिर आज तो उन दोनों को भूख भी नहीं थी । अलका देवी ने उनको बहुत कुछ खिलाया था ।

चाय की दुकान से निकलकर कहाँ चला जायेगा—इस पर कोई बात नहीं हुई । वे यों ही बातें करते हुए सड़क पार कर मैदान की तरफ चले

आये। तीनों अगल-बगल विक्टोरिया मेमोरियल की तरफ धीरे-धीरे चल रहे थे। बहुत देर पहले अँधेरा हो चुका था, चौरंगी रोशनी से झलमला रही थी लेकिन मैदान का पैदल चलनेवाला रास्ता चाँदनी और पेड़ों की छाँह से धुँधलके भरा था। बड़े-बड़े रेनट्री मानो बादल को छूना चाह रहे हों। आसमान में फ्लड-लाइट की तरह ऐसा जबर्दस्त चाँद निकला था कि बीच-बीच में उसकी तरफ देखे बिना रहा ही नहीं जा सकता था। हालाँकि चाँद को लेकर उन लोगों ने एक भी बात नहीं की। उसके लिए उनके पास वक्त भी नहीं था।

जयश्री ने दवी पर इतमीनान भरी आवाज में कहा—आज भी अगर माँ आने न देती तो मैं जबर्दस्ती चली आती। मैंने काफी बरदाश्त किया है, लेकिन अब नहीं...

अनुराधा बोली—हट! तू ऐसी बात क्यों कर रही है! मौसी जी कभी उस तरह ऐतराज नहीं करतीं!

—आज भी तो निकलना मुश्किल हो गया था?

शांतनु ने पूछा—अच्छा! क्या तुम्हारी माँ समझ गयी थीं कि तुम दोनों सिनेमा न जाकर...

अनुराधा हँसती हुई बोली—नहीं, वैसी बात नहीं है। आज भी एक असगुन हो गया न!

—आज फिर क्या हो गया था?

—आज हम निकल ही रही थीं कि घर के सामने जयश्री की कार से बिल्ली दब गयी। सच कहती हूँ, मैंने कभी किसी बिल्ली को कार से दबते नहीं देखा था! बिल्ली यों ही बड़ी चालाक होती है...

जयश्री बोली—एकदम बच्चा था, ठीक से उसकी आँखें भी नहीं खुली थीं। पता नहीं, कौन उसे सड़क पर छोड़ गया था, यों ही मरता....

अनुराधा बोली—फिर भी घर से चलते समय वैसी बात हो जाने से सबका मन उदास हो जाता है। मौसी जी को अकेले दोष नहीं दिया जा सकता।

—तू भी अंधविश्वासों की गठरी बनती जा रही है !

शांतनु बोला—ठीक है। आओ, हम बिल्ली के उस दिवंगत बच्चे के लिए एक मिनट मौन धारण कर शोक प्रकट करें।

नीले जल की बूँदों की तरह बिल्ली के बच्चे की आँखें अनुराधा को याद आयीं। इसलिए वह ठीक से हँस नहीं सकी। शांतनु उसके मन की बात समझ गया। उसने अनुराधा की तरफ देखकर कहा—मनुष्य की सुख-सुविधा के लिए संसार में रोज लाखों जीव-जंतुओं को अपनी जान गँवानी पड़ती है। यही दुनिया का नियम है।

दूसरे ही क्षण शांतनु ने जयश्री की तरफ देखकर पूछा—आज भी अगर तुम्हें तुम्हारी माँ आने न देतीं तो तुम क्या करतीं ?

जयश्री बेहिचक बोली—हालाँकि मैं माँ से झगड़ती नहीं, लेकिन रात को दरवाजा खोलकर चुपचाप भाग आती...

यह बात नाटक के संलाप-सी लगी, फिर भी अनायास समझ में आ गया कि जयश्री सच कह रही थी। वह ऐसा कर सकती है।

—भागकर कहाँ जातीं ?

—तुम्हारे पास।

जयश्री और शांतनु कब पास-पास आ गये थे और शांतनु ने कब जयश्री का मुलायम हाथ अपनी मुट्ठी में ले लिया था यह उन दोनों को ही पता नहीं चला। अनुराधा थोड़ा पिछड़ गयी थी। बात करते-करते दोनों तालाब के किनारे आकर रुक गये। दो लड़के उनके पास से निकले, उनकी दबी हँसी और हलकी सीटी सुनाई पड़ी, लेकिन जयश्री और शांतनु ने उधर ध्यान नहीं दिया।

शांतनु ने पूछा—अगर मैं कहूँ कि आज रात तुम अपने घर मत जाओ, मेरे साथ चलो तो तुम क्या करोगी ?

—मैं तुम्हारे साथ जाऊँगी।

—इसीलिए कह रहा हूँ कि रजिस्ट्री करा ली जाय....

जयश्री ने पलटकर कहा—अरे ! अनुराधा वहाँ अकेली क्यों खड़ी है ? अरी अनुराधा, इधर आ....

—भई, तू अपनी बात खतम कर ले !

—नहीं, नहीं, तू इधर आ।

अनुराधा पास आयी तो शांतनु बोला—तुम्हीं बताओ अनुराधा, रजिस्ट्री करा लेने में क्या बुराई है ? फिर तो जयश्री आज ही मेरे साथ जा सकती थी...

अनुराधा घबड़ाकर बोली—आज नहीं, आज वह मेरे साथ घर से निकली है। आखिर क्यों आप मुझे मुसीबत में डालना चाहते हैं ? मुझे ही तो पुलिस पकड़ेगी।

—जयश्री की उम्र बाईस साल है, रजिस्ट्री हो जाने पर पुलिस की क्या हिम्मत कि किसी को पकड़ ले !

जयश्री बीच में टोककर बोली—बाईस नहीं, तेईस साल है—लेकिन रजिस्ट्री करने पर क्यों इतना जोर दे रहे हो ? मैं वह सब नहीं मानती। वह तो कभी भी की जा सकती है—असली बात है कि दोनों का मन ठीक रहे....

लेकिन शांतनु यह स्वीकार करना नहीं चाहता। वह घबड़ाकर बोला—नहीं, नहीं, जब तक रजिस्ट्री नहीं हो जाती, तब तक कोई हमें स्वीकृति नहीं देगा। मैं किसी अवैध मामले में पड़ना नहीं चाहता। मैं तुमसे बता रहा हूँ, सुनो—मैं ऐसे तीन-चार लड़कों को जानता हूँ जिनके घर में बड़ा ऐतराज था, लेकिन रजिस्ट्री हो जाने के दो-तीन महीने बाद ही सब ठीक हो गया। सबने उनको स्वीकार कर लिया और अब उनकी कितनी खातिरदारी होती है....

जयश्री ने मुस्कराकर कहा—लेकिन मेरे घर में तुम्हें कभी कोई खातिरदारी मिलने की उम्मीद नहीं है। मेरी माँ भले ही हमें ठीक मान लें, लेकिन पिताजी कभी नहीं मानेंगे। मैं पिताजी को अच्छी तरह जानती हूँ....

—तुम्हारी माँ ही अंत में समझा-बुझाकर....

—वह माँ से संभव नहीं होगा।

एक मिनट तीनों चुप रहे। दृढ़ विश्वास के आगे तर्क सदा सिर झुकाये रहता है।

बात पलटकर शांतनु ने पूछा—तुम्हारे चाचा जी के उस कैंडीडेट की क्या खबर है ?

—कौन ?

—तुम्हारे चाचा के दफ्तर में जो सज्जन काम करते हैं—सुगत राय-चौधुरी। वही तुम्हें देखने आयेंगे, ऐसी ही तो बात थी।

—तुम्हें उसकी बात कैसे मालूम हुई ?

—पता नहीं, कैसे मालूम हो गयी !

हलके ढंग से हँसकर जयश्री बोली—अब उसकी तरफ से तुम्हें कोई डर नहीं है। उसने मुझे पसंद नहीं किया।

—पसंद नहीं किया ? बात न बनाओ ! उस सज्जन को मैं इतना नीरस नहीं मान सकता। क्या उन्होंने तुमको देखा है ?

—पता नहीं, कहीं दूर से देखा है कि नहीं ! बहरहाल, ही इज नॉट इंटरेस्टेड। हालाँकि चाचा जी ने उसे मोटरकार और टालीगंज की जमीन आदि का भी लालच दिया था, लेकिन वह लालच में नहीं पड़ा।

—आश्चर्य की बात है। फिर वह जरूर किसी से प्यार करता है।

अनुराधा ने मंतव्य प्रकट किया—इससे आपका मन जरूर थोड़ा उदास हो गया होगा। अच्छा होता कि आप किसी से प्रतिद्वंद्विता में जीतते और गर्व का अनुभव करते !

—हरगिज नहीं ! किसी लड़की के पीछे दो लड़कों के भागने वाली बात बड़ी प्रिमिटिव और वलगर है। लड़की की पसंद-नापसंद की मानो कोई कीमत नहीं है। फिर उसमें एक माँ-बाप का सपोर्ट लेकर लड़ेगा...

—तो भी आप ही जीते। आपने देखा नहीं कि सुगत रायचौधुरी ने आपसे कॉन्टेस्ट करने की भी हिम्मत नहीं की !

अब उस जगह लड़कियों के पीछे चक्कर काटनेवाले लड़कों की भीड़ बढ़ने लगी थी। अब वहाँ खड़ा नहीं रहा जा सकता था। वे फिर चलने लगे। वे विक्टोरिया स्मारक उद्यान में पहुँचे। खाली बेंच की तलाश में वे थोड़ी देर भटकते रहे। एक खाली बेंच मिल भी गयी, लेकिन तब तक जयश्री की राय बदल गयी—अब वह बेंच पर नहीं, घास पर बैठेगी। बैठने के लिए वे बड़े तालाब के किनारे पहुँचे। शांतनु बैठ गया, लेकिन जयश्री खड़ी रही।

शांतनु ने पूछा—अरे! तुम खड़ी क्यों हो?

—वाह! रूमाल बिछा देना पड़ता है, यह भी तुम नहीं जानते?

भौंचक्के से शांतनु ने झटपट जेब से रूमाल निकालकर बिछा दिया और कहा—बैठो!

दूसरे ही क्षण शरमाकर शांतनु ने अनुराधा की तरफ देखा और कहा—मेरे पास एक ही रूमाल है!

मुस्कराकर अनुराधा ने कहा—अच्छी बात है।

जयश्री बोली—साथ में अगर दो महिलाएँ हों तो अपनी बांधवी को नहीं, पहले दूसरी महिला को ऑफर करना चाहिए! अरी अनुराधा, तू बैठ!

—नहीं।

—तुझे बैठना ही पड़ेगा। वह क्यों नहीं दो रूमाल लाया!

शांतनु ने जयश्री से कहा—ठीक है, तुम अपना रूमाल मुझे दे दो, मैं अनुराधा के लिए बिछा दूँ....

अनुराधा बोली—मेरे पास भी रूमाल है....

थोड़ी देर बाद रूमाल का किस्सा खत्म हुआ तो तीनों बैठ गये। जयश्री और शांतनु आमने-सामने एक दूसरे को देख रहे थे, लेकिन अनुराधा की निगाह पानी की तरफ थी।

शांतनु ने सिगरेट जलाने से पहले दोनों महिलाओं को सिगरेट ऑफर की, लेकिन दोनों महिलाएँ न चौंकीं और न उनको किसी तरह का मजा

आया, वे निस्पृह भाव से बोलीं—अभी मन नहीं कर रहा है।

मुँह से ढेर सारा धुआँ निकालकर शांतनु बोला—आज तुम दोनों खूब सजी हो और खूब जँच रही हो। दोनों ही बड़ी अच्छी लग रही हो....

तीखी हँसी के साथ अनुराधा बोली—यह तूने कैसी मुश्किल कर दी जयश्री ! अब उसे हर बात सोच-समझकर करनी पड़ेगी ताकि दोनों को खुश किया जा सके।

अनुराधा की सखी भी उस हँसी में शामिल हो गयी। संसार का सबसे स्मार्ट लड़का भी बंगाल की दो लड़कियों के सामने अपनी स्मार्ट-नेस खो देता है। शांतनु की भला क्या बिसात थी ! वह किसी तरह अपनी बात को जमा नहीं पा रहा था। अगल-बग़ल बैठने पर मुसीबत और बढ़ गयी थी। इससे तो घूमते रहना बल्कि अच्छा था।

शांतनु ने वहाँ से उठने का सुझाव देकर कहा—अब यहाँ बैठकर क्या होगा, थोड़ी देर बाद बंद हो जायेगा—चलो, बाहर चलकर गोलगप्पा खाया जाय !

जयश्री बोली—थोड़ी देर बाद। लौटते समय। अभी यहाँ बैठना अच्छा लग रहा है।

अनुराधा बोली—लेकिन घड़ी की तरफ ख्याल रखना—ठीक साढ़े आठ बजे लाइट हाउस के सामने कार आयेगी।

तीनों ने एक साथ घड़ी देखी। अब भी एक घंटे से ज्यादा की मुह-लत थी।

चाँदनी में विक्टोरिया स्मारक सौध दमक रहा था। उसके शिखर पर बनी काली परी ऐसी लग रही थी मानो अभी उड़ जायेगी। थोड़ी दूर पर रानी विक्टोरिया की विशाल मूर्ति यहां से थोड़ी अस्वाभाविक और डरावनी लगती थी। आमने-सामने दोनों सफेद शेर मानो चांदनी पी रहे थे। बाहर विभिन्न भाषाओं का कलरव जारी था।

अनुराधा बोली—क्या बात है ? अब चुपचाप क्यों हो ? कितनी बातें

थीं। मुलाकात न होने पर कितनी तड़प थी—लेकिन अब वे बातें कहाँ गयीं ? समझ रही हूँ कि मेरी वजह से असुविधा हो रही है।

—नहीं, नहीं। असल में इतनी बातें हैं अनुराधा, कि कौन-सी बात शुरू करूँ, समझ में नहीं आ रहा है—शांतनु बोला।

—नहीं, चटपट शुरू कर दीजिए।

—असल में बात तो एक ही है! मैं जयश्री को चाहता हूँ। अगर जयश्री भी मुझे चाहे....

—अब भी यह 'अगर' क्यों ?

जयश्री घुटने पर ठुड्डी रखकर वैठी थी। भड़कीली साड़ी और छिटकती चाँदनी में उसकी सुंदर देह इस समय किसी हद तक अलौकिक लग रही थी। उसके भरे-भरे गोरे गालों के पास बालों की एक-दो लटें और कानों के झुमकों के झिलमिलाते मोती उसकी खूबसूरती में इजाफा कर रहे थे। मुलायम हाथों से वह उतनी ही मुलायम घास तोड़ रही थी। वह एकटक शांतनु को देखे जा रही थी। उसकी आँखों की दृष्टि में मानो एक खास तरह का आवेश भरा हुआ था। जैसे वह नशे में हो। व्यक्तित्वशाली उस पुरुष को बार-बार देखने पर भी उसे मानो तृप्ति नहीं होती। उसके चौड़े कंधे और बेलाग स्वर, फिर उसकी आँखों की दृष्टि और उसके होंठों के खिचाव को देखते ही पता चल जाता है कि वह आदमी नेक है। वैसे आदमी को जयश्री के माँ-बाप ने पसंद नहीं किया। जात का मामूली फर्क और कौवा मरा या बिल्ली मरी, उसके पीछे परेशान होना—जयश्री को एकदम अच्छा नहीं लगता। इसीलिए उसका मन करता है कि हर बात का विरोध करूँ। रजिस्ट्री तो किसी भी दिन करायी जा सकती है। वह तो रजिस्ट्री कराये बिना ही शांतनु के साथ रहना चाहती है। उसने सोचा कि अगर कोई पूछेगा तो कह दूँगी कि ठीक किया। अगर उनकी संतान होगी तो भी वह कह देगी कि सही किया है।

अब शांतनु अनुराधा से कहने लगा—तुमने ठीक कहा था। लड़कों

को अधिक त्याग नहीं करना पड़ता, लड़कियों को ही करना पड़ता है। मेरी तरफ से ऐतराज करने वाला भी कोई नहीं है, मुझे कुछ भी नहीं छोड़ना पड़ेगा, लेकिन ज्यादा तकलीफ़ तो जयश्री को होगी। फिर जानती हो, मेरा कितना काम पड़ा है—मैं एक भी काम नहीं कर पा रहा हूँ—हर वक्त दिमाग में बस यही बात चक्कर काटती है। अब ज्यादा देर करने पर....

अनुराधा बोली—जयश्री के माँ-बाप कभी न कभी राजी हो ही जायेंगे। इसलिए जोश में आकर कुछ करने की जरूरत नहीं है। मैं तो जयश्री की घनिष्ठ बांधवी हूँ, मैंने पहले ही उसे आपके हाथों सौंप दिया है। मेरी बांधवी बहुत जल्दी रूठने वाली है, लेकिन है बड़ी अच्छी लड़की—मैंने आपको इसका सम्प्रदान कर दिया। आप इस बात का जरूर ख्याल रखेंगे कि कभी इसे कोई तकलीफ न हो। जिन्दगी भर आप इसके गुलाम बने रहेंगे, समझ गये जनाब! लाइए, अब अपना हाथ इधर कीजिए—और जयश्री तू भी अपना हाथ दे...

जयश्री शरमाकर हँसी और बोली—बस, बस! अब ड्रामा मत कर!

लेकिन अनुराधा ने जयश्री की बात नहीं मानी। उसने जबर्दस्ती जयश्री का हाथ खींच लिया और उस पर शांतनु का हाथ रख दिया। फिर उसने आँखें बंद कर मंत्र पढ़ने का मिस किया और कहा—बस, सम्प्रदान पूरा हो गया। अब आप लोग अपनी बात कीजिए।

अनुराधा उठी तो जयश्री बोली—तू कहाँ जा रही है?

—वे केली फूल कितने सुन्दर हैं, जरा देख आऊँ। तब तक तुम दोनों बातें करो...

अनुराधा थोड़ी देर केली की झाड़ी के पास खड़ी रही, फिर वह चंद्र-मल्लिका के बाग की तरफ़ बढ़ी। उसने एक भी फूल नहीं तोड़ा। बस, वह धीरे-धीरे टहलती रही।

शांतनु बोला—अनुराधा यहाँ बैठने से शरमा रही थी!

कोई जवाब न देकर जयश्री मुस्करायी।

जयश्री ने शांतनु के हाथ से अपना हाथ हटा लिया। अब शांतनु धीरे-धीरे उँगलियों से जयश्री का पाँव सहलाने लगा। जयश्री चप्पल उतारकर बैठी थी। वह बोली—अरे, पाँव क्यों छू रहे हो?

—क्यों? शरम लग रही है या गुदगुदी?

—दोनों ही।

—तुम्हारे पाँव कितने मुलायम और छोटे-छोटे हैं। लड़कियों के पाँव इतने छोटे होते हैं, यह मुझे मालूम नहीं था। पूजा के दिनों में लक्ष्मी के पाँवों की जो छाप बाजार में बिकती है, ठीक उसी तरह। शायद तुम्हारे ही पाँवों की नाप लेकर....

—सभी लड़कियों के पाँव इसी तरह होते हैं।

—कभी नहीं! तुम्हारे पाँवों में जरा भी धूल या गर्द नहीं है। क्या तुम इस दुनिया की धूल-गर्द पर पाँव रखकर नहीं चलतीं?

चंचल स्वर में जयश्री बोली—नहीं।

—तुम्हारा सब कुछ कितना सुन्दर है। देखने पर न जाने क्यों मन मसोस उठता है। तुम्हारे बैठने का ढंग, तुम्हारी ठुड्डी की गोलाई....

जयश्री चुपचाप बैठी अपनी सुन्दरता की प्रशंसा का आनन्द लेने लगी। उसने सिर्फ एक बार कहा—मेरे लिए तुम बहुत ज्यादा सुन्दर हो....

शरारत भरी आवाज में शांतनु बोला—मन कर रहा है कि तुम्हारे बायें पैर की कानी उंगली में हलके से काट लूँ!

—अरी माँ! पाँव की उँगली क्यों काटोगे?

—पता नहीं क्यों, लेकिन मन कर रहा है।

—हटो!

—देखोगी, कभी मैं तुम्हारी उसी छिगुनी को चूमूंगा!

—बेकार की बात मत करो!

—लड़कियों के बायें पैर में न जाने क्या खास बात होती है। कालि-

दास की शकुंतला ने ज्यों ही अशोक के पेड़ को बायें पैर से छुआ त्यों ही उसमें फूल खिल गये। और भी कई संस्कृत काव्यों में लड़कियों के बायें पैर के बारे में....

क्या आजकल तुम संस्कृत काव्य पढ़ने लगे हो ?

—थोड़ा-बहुत। बुरा नहीं लगता।

शांतनु मन लगाकर जयश्री के पैर की उँगली से खेल रहा था। इतने में अचानक तेज हवा का झोंका आया। दोनों चौंक पड़े। दोनों ने चौंककर घड़ी की तरफ देखा। फिर दोनों ने दोनों की तरफ देखा। आँखों ही आँखों में थोड़ी देर दोनों एक दूसरे को देखते रहे।

उसके बाद जो बात इस संसार में लाखों और करोड़ों बार कही गयी है, जो बात शांतनु ने इसके पहले कई बार जयश्री से कही है, वही बात शांतनु ने फिर कही। जयश्री के घुटने पर हाथ रखकर शांतनु ने बेमज़ा आवाज में पूछा—जयश्री, क्या तुम सचमुच मुझसे प्यार करती हो ?

जो लोग ईमानदार हैं, वे कभी बड़े इतमीनान से यह बात नहीं कह सकते। जरा-सी हिचक से उनकी आवाज काँप जाती है। जो सचमुच प्यार करता है, वह भी तुरत इस बात का जवाब नहीं दे सकता।

जयश्री ने धीरे से पूछा—तुम्हें क्या लगता है ?

—मैं जानता हूँ। फिर भी कभी-कभी न जाने क्यों डर लगता है अगर अंत तक तुम्हारे माँ-बाप राजी न हुए तो क्या तुम सब कुछ छोड़ कर आ सकोगी ?

—अवश्य आ सकूँगी ?

—सब कुछ छोड़कर ?

अब जयश्री निस्संकोच होकर बोली—सब कुछ छोड़ कर आ सकूँगी ! मुझे तकलीफ जरूर होगी—शायद मैं कुछ दिन रोऊँगी भी, लेकिन एक बात तुमसे कह रही हूँ, तुम जिस दिन मुझे बुलाओगे, मैं उसी

दिन, उसी वक्त सब कुछ छोड़कर चली आऊँगी। मुझे कोई नहीं रोक सकेगा।

चन्द्रमल्लिका के बगीचे के बगल में अकेली टहलती हुई अनुराधा जरा अनमनी हो गयी थी। लेकिन ऐसी जगह लड़कियों को अकेले नहीं घूमना चाहिए। मर्दों ने ऐसी आजादी औरतों को नहीं दी है।

एक आदमी अनुराधा के बगल से सटकर निकल गया। जरा देर बाद वह फिर लौटा और अनुराधा के पास आकर दबी आवाज में बोला—कहो, क्या इरादा है? चलोगी?

अनुराधा को जरा डर लगा, लेकिन वह नहीं घबड़ायी। उसने ठंढी कठोर दृष्टि से देखा। पास ही एक आदमी और खड़ा था। दोनों की शक्ल-सूरत में काफी रूखापन था। अनुराधा इन बातों का मतलब समझती थी। छह साल कलकत्ते में रहकर भी क्या वह कलकत्ते की भाषा नहीं समझ पायेगी। ऐसी दूधिया चाँदनी से नहाती रात को भी इन्सान कितना हैवान हो सकता है! खिले फूलों से झलमलाते बगीचे में भी आदमी कितना बेशऊर हो सकता है!

दोनों आदमी अगल-बगल खड़े होकर भेड़ियों की तरह हँसे। फिर एक ने बहुत धीरे से दूसरे से कहा—माल बढ़िया है यार!

अनुराधा इस बात का मतलब भी समझती थी। दोनों शारीरिक भूख की भाषा बोल रहे थे।

पथिक, क्या तुम पथ भूले हो ?

—बंकिमचंद्र

शांतनु अब तक दो बार दिखाई पड़ा है, लेकिन दोनों ही बार वह अस्थिर प्रेमी के रूप में सामने आया। सिर्फ प्रेमी की भूमिका में किसी पुरुष को पूरी तरह नहीं पहचाना जा सकता। अब उसे दूसरे परिवेश में देखा जाय।

लोअर सर्कुलर रोड के पास छोटे-से फ्लैट में शांतनु रहता है। मकान बहुत बड़ा है, लेकिन शांतनु का फ्लैट छोटा है। एक बड़े फ्लैट को दो हिस्से में बाँटने के बाद एक हिस्सा उसे मिला है। उस मकान में विभिन्न जातियों और भाषा-भाषियों का समागम हुआ है। एँग्लो-इंडियन, मुसलमान, पंजाबी और पारसी के अलावा दो बंगाली परिवार भी हैं। ऐसे मकानों में सभी अलग-थलग रहते हैं और कोई किसी के मामले में दखल नहीं देता।

इस फ्लैट में शांतनु एकदम अकेला है। अकेलेपन का लुत्फ उठाने के लिये शांतनु यहाँ आया था। एक हिन्दी भाषी लड़का सवेरे उसके घर की साफ-सफाई कर बर्तन मलने के बाद पानी भरकर रख देता है। किसी-किसी दिन सवेरे शांतनु के ज्यादा सुस्ती महसूस करने पर वही लड़का चाय-नाश्ता ला देता है। नहीं तो शांतनु खुद अपने लिए थोड़ा सा नाश्ता बना लेता है या होटल में चला जाता है। उसके घर में हॉट-प्लेट है, इसलिए उसे चाय या नाश्ता बनाने में कोई परेशानी नहीं होती। कभी-कभी उसने शौकिया दाल-चावल-गोश्त भी पकाया है, हालांकि रिजल्ट बहुत अच्छा नहीं हुआ। खिचड़ी वह बढ़िया बना लेता है। चौबीस घंटे में कम से कम चौदह-पंद्रह घंटे वह इसी घर में बिताता है।

एकाएक देखने पर लगता है कि शांतनु इस दुनिया में अकेला है

और उसका कहीं कोई नहीं है। लेकिन ऐसी बात नहीं है। उसके तीन बड़े भाई, दो बड़ी बहनें और एक छोटी बहन भारत के विभिन्न शहरों में हैं। वे सभी विवाहित हैं। उनमें दो बड़े भाई और एक दीदी तो इसी कलकत्ते में हैं। लेकिन सभी अलग-अलग रहते हैं। शांतनु के पिता का नामोल्लेख नहीं करूँगा, क्योंकि बहुत से लोग उनको पहचान जायेंगे। देश-विभाजन के बहुत पहले से शांतनु के बाप बंगाल की राजनीति में सक्रिय थे। कुल मिलाकर सात साल वे जेल में थे और उसके बदले दो बार मंत्री बने। एक बार सरकार से मतभेद होने पर उन्होंने मंत्रिपद से इस्तीफा भी दिया था जिससे कुछ लोगों ने उनकी तारीफ की थी और तीनेक दिन के लिए जनगण के हृदय में हलचल मच गयी थी। एक बार एक जाँच कमीशन के मेम्बर की हैसियत से उन्होंने सरकार के पक्ष में राय दी थी जिससे उनको जनता का धिक्कार मिला था और पश्चिम जर्मनी जानेवाले भारतीय सांस्कृतिक प्रतिनिधि मंडल के उपनेता के रूप में उन्हें चुन कर सांत्वना दी गयी थी। तीसरे आम चुनाव में हारकर भी उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। विधान सभा में भाषण करने और भाषण सुनने का उन्हें नशा हो गया था। इसलिए विधान सभा के बाहर रहकर साधारण जीवन बिताना उनके लिए असंभव था। फिर बड़े जोश-खरोश के साथ दल बदलकर वे एक उपचुनाव में खड़े हो गये। बाइ-इलेक्शन में वे जीते भी लेकिन उसका सुख भोग नहीं सके। शपथ ग्रहण करने से एक दिन पहले आधी रात को वे चल बसे। वे सोने जा रहे थे और ज्यों ही उन्होंने हॉर्लिक्स का गिलास मुँह से लगाया, उन्हें उच्छू लगी और भोर होते-होते दम घुटकर उनकी मृत्यु हो गयी।

बाप का जब बड़ा बोलबाला था, तभी शांतनु के दो भाइयों ने बड़ी अच्छी नौकरियों का जुगाड़ कर लिया था। कहना नहीं पड़ेगा कि उन की नौकरी बाप की सिफारिश से नहीं, अपनी कोशिश से लगी थी। शांतनु के ये दोनों भैया अब भी राजनीति में दखल देते हैं। एक भैया तो पूरी तरह राजनीति को लेकर रहते हैं। शांतनु के जीजा लोग भी

नौकरी, व्यापार और राजनीति की त्रिफला का पानी नियम से सुबह-शाम पीते हैं। सिर्फ शांतनु उस चक्कर में नहीं पड़ता।

उस परिवार का लड़का होकर शांतनु क्यों राजनीति से अलग रहा, कभी-कभी उसके दोस्त लोग उससे यह सवाल करते हैं। इसके जवाब में शांतनु हँसकर उनको एक कहानी सुना देता है। कहानी कहाँ तक सच है और कहाँ तक झूठ, इसका जवाब सिर्फ शांतनु दे सकता है।

शांतनु दोस्तों से कहता है—तुम सबों ने तो कृष्णा हठीसिंह का नाम सुना है? उनकी लिखी एक बड़ी अच्छी किताब है। खैर, कृष्णा हठीसिंह पंडित मोतीलाल नेहरू की बेटी, विजयलक्ष्मी और जवाहरलाल की बहन और इंदिरा गांधी की बुआ हैं। कृष्णा हठीसिंह से कभी किसी ने पूछा था कि आप उस परिवार की लड़की होकर भी सक्रिय राजनीति में क्यों नहीं आयीं? आप किसी इलेक्शन में भी खड़ी नहीं हुई? इसके जवाब में कृष्णा हठीसिंह ने कहा था कि पागलों के परिवार में भी एक-दो अच्छे लोग हो सकते हैं....

जब पिताजी का देहांत हुआ तब शांतनु सत्रह साल का था। जब वह बहुत छोटा था, तभी उसकी माँ मर चुकी थीं। उसे माँ की बात याद भी नहीं पड़ती। उसकी छोटी बहन गायत्री के पैदा होने के एक महीने बाद माँ चल बसी थी। उस समय उसकी उम्र मुश्किल से चार-साढ़े चार साल थी।

पिताजी के मरने के बाद दो साल शांतनु बड़े भाइयों के साथ था। उसके बाद मझले भैया दफ्तर के फ्लैट में चले गये। उनका कहना था कि जब दफ्तर की तरफ से न्यू अलीपुर में बढ़िया फ्लैट मिल रहा है, तब उसे छोड़ने से क्या फायदा। वे अपना परिवार लेकर उस फ्लैट में चले गये। तभी से परिवार में बिखराव शुरू हुआ। एक साल के अन्दर उन लोगों का पैतृक मकान बेच दिया गया। सात भाई-बहनों में उस रुपये का बँटवारा हुआ। शांतनु को भी एक हिस्सा मिला। बाप की दूसरी जायदाद के बँटवारे के सवाल पर अब भी भाइयों में हंगा-हंगी

में छिपा कलह चलता रहता है, लेकिन शांतनु उसकी खबर नहीं रखता।

मकान बिकने के बाद सभी भाइयों और बहनों ने शांतनु को अपने पास रखना चाहा था, लेकिन उस साल शांतनु का एम० ए० फाइनल था। इसलिए पढ़ाई की सुविधा के बहाने वह हॉस्टल में चला गया था। इम्तहान में पास होने के बाद वह लगभग छह महीने एक बार इस भाई के साथ रहा तो दूसरी बार उस भाई के साथ। उसके बाद उसने कुछ दिन देश भ्रमण किया। फिर नौकरी मिल जाने के बाद अब वह अलग फ्लैट लेकर रह रहा है।

जब शांतनु के बाप जिंदा थे तब उनके घर में हमेशा भीड़ लगी रहती थी। रात दिन लोगों का आना-जाना लगा रहता था और दोनों वक्त बीस-बाईस जनों के लिए खाना पकता था। बाप से मुश्किल से मुलाकात हो पाती थी, भैया लोग अपने-अपने काम में व्यस्त रहते थे और बड़ी बहनें पिकनिक, जलसा और मामा के घर घूमने जाने के पीछे पागल रहती थीं। याने सबकी अलग-अलग दुनिया थी और सब एक दूसरे से अलग-थलग थे। उसकी छोटी बहन ज्यादातर दिल्ली में ही रही है।

आजकल राजनीति से समाज सेवा का कोई सम्पर्क नहीं है। इस लिए सपरिवार राजनीति में आने का कोई सवाल नहीं उठता। आज के नेता भाषण करते हैं, पार्टी बनाते हैं और उनके बच्चे अच्छे स्कूल-कालेजों में—वह भी ज्यादातर पब्लिक स्कूलों में—पढ़ते हैं। नेता लोगों की पत्नियों के नाम सुनाई भी नहीं पड़ते। अब गांधी या चितरंजन का जमाना नहीं है कि नेता लोगों के साथ उनके बीवी-बच्चे भी सविनय अवज्ञा आंदोलन या सत्याग्रह कर जेल जायेंगे, नहीं तो एक साथ गरीबों की बस्तियों में कल्याण कार्य करेंगे।

शांतनु के बाप ने भी शांतनु की पढ़ाई का अच्छा इंतजाम कर दिया था। लेकिन बंगाल में पारिवारिक जीवन कहने पर जो जीवन समझ में आता है, शांतनु को वह ठीक से कभी नहीं मिला। इसलिए अलग रहने में उसे जरा भी बुरा नहीं लगा और दूसरे लोगों ने भी उसे अस्वाभाविक

नहीं समझा।

इधर कई साल अलग और बाहर रहने पर शांतनु को उसके पिता के साथी और परिचित लोग भूल से गये हैं। अब शांतनु को हर कहीं सुनना नहीं पड़ता कि अरे, तुम अमुक के बेटे हो न ? शांतनु जब छोटा था तब उसके घर में कितने ही लोग आते थे, जो उन दिनों अख्यात थे लेकिन अब विख्यात और कुख्यात हैं। वे सभी उसके सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद देते थे। लेकिन अब वे उसे पहचान नहीं सकते। अब वह एक मामूली आदमी शांतनु सरकार है। अब उसकी नौकरी, उसके घर का पता और उसका अपना परिचय ही इस दुनिया में उसका सब कुछ है। इससे उसको काफी झमेले से छुटकारा मिला है। अब वह चुनाव के वक्त वोट डालने भी नहीं जाता।

शांतनु के स्वभाव में खास तरह की अस्थिरता है। अब तक वह तीन नौकरियाँ छोड़ चुका है। एम० ए० करने के कुछ दिन बाद उसे एक कालेज में नौकरी मिल गयी थी। लेकिन कालेज में पढ़ाना उसे पसंद नहीं था। लेकिन वह नौकरी लीव वैकेन्सी पर छह महीने के लिए थी। इस-लिए किसी हद तक कौतूहलवश उसने उस को-एजूकेशनल कालेज में नौकरी ले ली। फिर चाहे जिस कारण से हो कालेज के प्रबंधकों को वह बड़ा पसंद आ गया और छह महीने बीतने पर भी उसे नौकरी से अलग नहीं किया गया। वह वहीं रह गया। लेकिन चार साल बाद अचानक उसने नौकरी छोड़ दी। जब दोस्तों ने पूछा तब उसने जवाब दिया कि बड़ा एकरस हो गया था। हर साल एक ही विषय पढ़ाना पड़ता है। हालांकि असली कारण का एक-दो लोगों ने अनुमान कर लिया था। उसी साल शांतनु अपने क्लास की छात्रा जयश्री से प्रेम करने लगा था। इसलिए जयश्री के कालेज छोड़ने के साथ शांतनु ने भी नौकरी छोड़ दी थी।

उसके बाद छह महीने के लिए शांतनु को रेडियो में नौकरी मिली थी। उस समय उसके दोस्त मुलाकात होते ही उससे पूछते थे कि क्यों रे

शांतनु आज आबोहवा की क्या खबर है ? हालाँकि शांतनु ने रेडियो में एनाउन्सर की नौकरी नहीं ली थी और रेडियो पर एक बार भी उसका कंठस्वर सुनाई नहीं पड़ा था, लेकिन दोस्त लोग बराबर मजाक करते थे कि रेडियो वेव के जरिये सांकेतिक भाषा में जयश्री तक खबर पहुँचाने के लिए ही उसने वह नौकरी ली है।

रेडियो की नौकरी भी शांतनु ने एक दिन अचानक छोड़ दी। लेकिन क्यों, इसका ठीक से पता नहीं चल सका। हालाँकि दोस्तों ने कहा कि महीनों से कैसा आँधी-तूफान चल रहा है ! आबोहवा ज्यादा खराब होने की वजह से उसका मन उस नौकरी में नहीं लगा।

उसके बाद शांतनु कई महीने बेरोजगार रहा। लेकिन उसे कोई खास आर्थिक कष्ट नहीं भोगना पड़ा। बल्कि प्रेम के प्रथम पाठ के रूप में उसे जब-तब अकेले कमरे में बिस्तर पर लेटकर सूनी दीवार की तरफ देखने, लंबी साँस छोड़ने और आकाश-पाताल की चिंता करने का मौका मिल गया। लेकिन उसकी वह हालत ज्यादा दिन नहीं रही। एक दोस्त की मदद से उसे फिर एक विदेशी जहाज कम्पनी के स्थानीय दफ्तर में असिस्टेंट मैनेजर की नौकरी मिल गयी। इस नौकरी में तनख्वाह अच्छी है। कम से कम उसकी सभी पिछली नौकरियों से तनख्वाह बहुत ज्यादा है। इस नौकरी को लेने के पीछे एक कारण है। शांतनु ने सोचा कि उसकी कम्पनी शायद उसे साल में एक बार विदेश घूम आने का पास देगी। लेकिन उसका ख्याल गलत निकला।

बेरोजगारी के इस जमाने में शांतनु का जब मन हुआ तब नौकरी छोड़ देना और फिर नौकरी पा जाना थोड़ा आश्चर्यजनक लग सकता है। लेकिन उसमें कुछ विशेष योग्यताएँ हैं। पब्लिक स्कूल में पढ़ने के कारण वह अनर्गल काम-चलाऊ अंग्रेजी बोल सकता है, मोटे तौर पर इकॉनॉमिक्स की अच्छी डिग्री उसके पास है और वह देखने में भी खूबसूरत है। नौकरी के बाजार में अब भी इन तीन चीजों का दाम कम नहीं है। पारिवारिक सूत्र का कोई फायदा उठाने पर भी वह बराबर अच्छे

स्कूल-कालेजों में पढ़ा है, उसके सहपाठी दोस्तों का सम्पर्क भी कुछ कम नहीं है और उन दोस्तों ने उसे कभी नहीं छोड़ा।

शांतनु देखने में अच्छा है, इसमें कोई-शक नहीं है। लेकिन जयश्री उसे जितना सुंदर समझती है उतना वह नहीं है। पुरुषों के रूप के बारे में ठीक-ठीक बता पाना संभव भी नहीं है। हो सकता है कि गोरे रंग के बारे में लड़कियों में कोई खास कमजोरी हो। रंग के हिसाब से शांतनु बहुत गोरा है। उसका डील-डौल लंबा-चौड़ा है। वह स्मार्ट है। फिर भी उसकी नाक जरा दबी हुई है। दोनों भौंहें कुछ मोटी हैं। आँखों की पुतलियाँ एकदम काली नहीं, बल्कि उसमें थोड़ा भूरापन है। एकाएक देखने पर वह चीनी या जापानी लग सकता है। लेकिन जब वह खुलकर हँसता है, तब लगता है कि एक शिशु मानो किसी मंत्रबल से एकाएक सत्ताईस साल का जवान हो गया है।

पहले ही बताया गया है कि शांतनु के स्वभाव में थोड़ा उतावलापन है। जब भी वह अकेला रहता है, तभी वह सोचता है कि उसे कुछ करना पड़ेगा। जिस तरह वह रह रहा है, जिन्दगी बिता रहा है, वह ठीक नहीं है। लेकिन उसे क्या करना चाहिए, इसका अभी तक पता नहीं चलता। बहुत-से लोगों को तो जिंदगी भर इसका पता नहीं चलता, बहुत-से लोग बीच रास्ते में ही उसकी तलाश छोड़ देते हैं, लेकिन शांतनु ने अभी तक हिम्मत नहीं हारी।

शांतनु किसी तरह के सांसारिक बंधन से बँधा नहीं है। रोजी-रोटी के लिए भाग दौड़ करनी पड़े, ऐसा भी उसकी मजबूरी नहीं है। अच्छी नौकरी वह कर रहा है। अच्छा साफ सुथरा घर उसका इंतजार करता है। ऐसा आदमी तो ऐसे ही घर को फर्नीचर से सजाता है, दीवार पर तस्वीर टाँगता है, दरवाजे पर वेलकम लिखा गर्दखोर बिछाता है, लेकिन शांतनु को उस सबमें रुचि नहीं है। वह कुछ और चाहता है और किसी गुण के कारण नहीं, अपने चरित्र के इसी पहलू की वजह से वह इस कथा का नायक बन सका है।

बीच में एक बार शांतनु सोचने लगा था कि यहाँ के बैंक से सारा रुपया-पैसा निकालकर इंगलैंड चला जाऊँ और वहाँ लंदन स्कूल ऑव् इकॉनॉमिक्स में पढ़ाई शुरू कर दूँ। इसके लिए उसने पत्र-व्यवहार भी शुरू कर दिया था, लेकिन एकाएक उसका उत्साह खत्म हो गया। जब वह अध्यापन करना ही नहीं चाहता, तब अर्थशास्त्र पर शोध करके क्या करेगा ? फिर दोबारा छात्र बनने की इच्छा भी नहीं थी। जहाज कम्पनी में नौकरी लेकर जहाज से सातों समंदर की सैर करेगा, ऐसी बचकानी योजना एकाएक उसके दिमाग आ गयी। और वह नौकरी में लग गया।

लेकिन इस समय शांतनु का सारा उतावलापन जयश्री के लिए है। जयश्री से परिचित होने के बाद ही वह किसी नारी के प्रथम सम्पर्क में आया हो ऐसी भी बात नहीं थी। किसी समय उसके घर में अनेक स्त्री-पुरुषों का आना-जाना था। किसी न किसी कॉन्फरेन्स के उपलक्ष में उसके घर में अक्सर बीस पचीस लड़के लड़कियों को रात बितानी पड़ी थी। कभी-कभी ऐसा भी हुआ कि घर में ज्यादा भीड़ हो जाने से एक ही कमरे में आठ दस लोग पूरे फर्श पर बिस्तर बिछाकर लेट गये थे। बचपन में सोते समय कितनी बार शांतनु का हाथ बगल में लेटी किसी नारी पर पड़ा है। फिर उस हालत में अक्सर जैसी बदतमीजी हो जाती है, उसका भी थोड़ा-बहुत अनुभव उसे था।

अक्सर शांतनु के घर में प्राइवेसी नाम की चीज नहीं रहती थी। इसलिए कैशोर या प्रथम यौवन में स्त्रियों के शरीर के बारे में जानने के आग्रह से कभी शांतनु को छिपकर ताक-झांक नहीं करनी पड़ी। जब उसकी उम्र अठारह साल थी तब उन दिनों की एक प्रख्यात समाज-सेविका की छोटी बहन ने उसे मकड़ी के जाले में फँसाना चाहा था। समाजसेविका की उस बहन की उम्र शांतनु की उम्र से कम से कम दस साल ज्यादा थी। उस घटना का गरमागरम ब्योरा देने की यहाँ जरूरत नहीं है। इतना कहना ही काफी है कि शांतनु अपने सुकृत्य के बल पर ही उस जाल को तोड़कर बाहर निकल सका था।

इसके अलावा जब भी शांतनु अपने कॉलेज के दोस्तों के घर गया तब उनकी बहनों या दूसरी लड़कियों से उसकी जान-पहचान हुई। उस ने उनके साथ वैडमिंटन खेला और पिकनिक में जाकर हँसी-मजाक किया। याने, कोई लड़की आकर उससे प्यार की बात करे और उसका सिर चकरा जाय, ऐसी हालत उसकी नहीं थी। अच्छी नौकरी मिलने के बाद अपना घर सँभालकर किसी खूबसूरत लड़की से शादी करनी पड़ेगी—ऐसी बात भी उसने कभी नहीं सोची थी। फिर भी जयश्री ने उसका सर चकरा दिया। कब कौन किसका सर चकरा देता है, यही तो आदिम रहस्य है।

पहला आकर्षण जयश्री की तरफ से देखा गया था। लड़कियों से काफी परिचय होने के बावजूद शांतनु उनके सामने हमेशा थोड़ा शरमीला बना रहता है। कॉलेज में पढ़ाते समय वह बड़ा रोबीला अध्यापक नहीं था और क्लास में ज्यादातर सिर नीचा किये रहता था। क्लास में आगे की कई बेंचों पर लड़कियाँ बैठती थीं, इसलिए जब भी उसे निगाह उठानी पड़ती थी, वह सीधे पीछे वाली बेंचों की तरफ देखता था, जिस पर लगभग उसी की उम्र के छात्र होते थे।

फिर भी अविवाहित और सुदर्शन अध्यापकों के लिए छात्राओं के मन में हीरो-वर्शिप की थोड़ी बहुत भावना रहती ही है। स्मार्ट लड़कों से ज्यादा शरमीले पुरुष ही लड़कियों को ज्यादा पसन्द आते हैं। हर साल कई लड़कियाँ शांतनु से प्यार करने लगती थीं। कई लड़कियों ने अपने घर में उसे प्राइवेट ट्यूटर भी रखना चाहा। लेकिन उससे शांतनु विचलित नहीं हुआ। उसने हँस-हँसकर दोस्तों को वह कहानी सुनायी है और लड़कियों की चिट्ठियां दिखायी हैं। लेकिन किसी भी छात्रा का वह प्राइवेट ट्यूटर नहीं बना। किसी से उसने अपने फ्लैट में आकर पाठ समझने के लिए नहीं कहा। जयश्री उसके क्लास की कई लड़कियों में एक थी। शांतनु ने कभी उसकी तरफ ठीक से देखा भी नहीं था।

लेकिन शिमला में देखना पड़ गया। शांतनु अपनी बड़ी दीदी के पास

शिमला गया हुआ था। स्कैंडल पॉयंट पर एक दिन वह अकेला खड़ा था और लाल साड़ी और लाल स्वेटर में एक लड़की उसके सामने आकर हाथ जोड़कर बोली थी—सर आप मुझे पहचान रहे हैं ?

पहले तो शांतनु को जरा बुरा लगा था। उसके मन में आया था कि क्या यहाँ भी अर्थशास्त्र से छुटकारा नहीं मिलेगा ? क्या यहाँ भी छात्र-छात्राएँ मिल जायेंगे।

लेकिन चेहरे पर मुलायम मुस्कराहट लाकर शांतनु ने कहा—हाँ, तुम तो थर्ड इयर की...

कॉलेज से लगभग डेढ़ हजार मील दूर मुलाकात हो गयी, शायद इसीलिए छात्रा ने अपने अध्यापक का ज्यादा लिहाज नहीं किया। हलकी खिलखिलाहट के साथ ही जयश्री ने पूछा—आप ठीक से पहचान रहे हैं न ? बताइए तो मेरा क्या नाम है ?

थर्ड इयर का क्लास शांतनु बस दो-तीन महीने से ही लेने लगा था, इसलिए सभी लड़के-लड़कियों के नाम उसे याद नहीं थे। फिर भी इस लड़की की याद आयी। आगे दायें वाली बेंच पर बैठती है। यह और एक दूसरी लड़की अक्सर आपस में फुसफुसाकर बात करती रहती हैं। शांतनु ने अपने दिमाग को खूब टटोला और तब कहा—हाँ, याद है। तुम्हारा नाम अनुराधा है न ?

—जी, जवाब सही नहीं है। अनुराधा तो मेरे पास बैठती है।

—तो तुम्हारा क्या नाम है ?

—आपने याद नहीं रखा न ?

जयश्री के साथ उसका छोटा भाई था। वह बड़ा चुलबुला और नट-खट था। वह एक मिनट भी एक जगह चुप खड़ा रहना नहीं चाहता। ज्यादा देर बात नहीं हो सकी। जयश्री बोली—सर, चलिए न हमारे घर। वहीं काली मंदिर के पास है।

शांतनु ने किसी तरह टालने के लिए कहा—ठीक है, किसी दिन आऊँगा...

—आज ही चलिए न !

—आज नहीं। आज एक काम है।

—कैसा काम ? मैं तो देख रही हूँ कि आप काफी देर से यहाँ खड़े हैं। क्या कोई आनेवाला है ?

घनिष्ठता न रहने पर कोई ऐसा सवाल नहीं करता। शांतनु को जरा अटपटा लगने लगा। किसी छात्रा के सामने खड़े होकर बात करने में उसे ऐसा ही लगता है। छात्रा तो कोई लड़की नहीं है, वह तो छात्रा है और छात्रा कुछ और ही होती है। इसलिए शांतनु ने गम स्वर में कहा—हाँ, एक जने के आने की बात है। और किसी आऊँगा...

तब जयश्री ने शांतनु को अपने मकान का पता दिया और शांत मकान का पता पूँछ लिया उसके बाद वह भाई की उँगली पकड़कर गयी।

शांतनु वहीं खड़ा रहा। उसे कौन काम था ! उसे तो बस धीरे-विला जाने वाली उस शाम को सिर्फ देखते रहना था। किसी के आने की बात नहीं थी।

दूसरे दिन जाने का वादा था। लेकिन वह तो शांतनु ने यं टालने के लिए कह दिया था। वह जयश्री के घर नहीं गया।

उसके एक दिन बाद शांतनु लोअर बाजार में घूम रहा था अचानक बड़े-बड़े ओलों के साथ बारिश शुरू हो गयी। वह भागकर दुकान की शरण में पहुँचा तो वहाँ उसने देखा कि जयश्री और उ घर के कई लोग खड़े थे।

जयश्री अपनी माँ अलका देवी को खींच लायी और बोली— यही हमारे मास्टर साहब हैं, जिनके बारे में मैंने कहा था। वादा क भूल जाते हैं....

अलका देवी ने उस दिन शांतनु के साथ बड़ा मधुर व्यव किया था। वे ही जबर्दस्ती शांतनु को अपने घर ले गयी थीं। उस

जयश्री के पिताजी हृषीकेश बाबू ने भी देर तक शांतनु से बातें की थीं। उन्होंने ही जयश्री से कहा था—दुर्गापूजा के बाद मास्टर साहब से मुलाकात हुई है, तूने उनको प्रणाम किया ? अपने जमाने में तो हम...

पाँव छूकर कोई प्रणाम करे इसमें शांतनु को घोर आपत्ति है। लेकिन पिताजी की बात पर जयश्री पाँव छूकर प्रणाम करके ही मानेगी। देर तक उसी पर हुज्जत होती रही। हालाँकि बाद में हृषीकेश बाबू ने जब सुना कि शांतनु की उपाधि सरकार है, तब वे भी असमंजस में पड़ गये। शिक्षक अगर अब्राह्मण है तो क्या ब्राह्मण छात्रा उसके पाँव छूकर प्रणाम कर सकती है ? चाहे कुछ भी हो, लेकिन किसी ब्राह्मण का किसी अब्राह्मण के पाँव छूना....

शिमला छोटी जगह है, इसलिए बार-बार मुलाकात होना अस्वाभाविक नहीं है। कभी घर के लोगों के साथ, कभी छोटे भाई का हाथ पकड़कर आती-जाती या कभी अकेली जयश्री से शांतनु की मुलाकात होने लगी। कालेज के बारे में बातें खत्म होने पर दूसरी बातें शुरू हो गयीं। शांतनु को पता चल गया कि जयश्री बड़ी सरल लड़की है और उसकी बातों में किसी तरह का दाँव-पेंच नहीं रहता। फिर उस खूबसूरत लड़की की तलवार-सी चमचमाती देह और आचरण की मादकता ने अंदर ही अंदर शांतनु को छू लिया। आकर्षक अकेली उस लड़की का नहीं था। सिर के ऊपर विशाल जगमगाते आसमान, दूर-दूर पहाड़ों की रेखाओं और बहुत दूर से आती हवा के मुलायम स्पर्श ने भी अपना काम किया। विशालता की अनुभूति के बीच चंचल झरने के छलछलाते जल की मिठास की तरह वह क्वारी लड़की शांतनु को बड़ी मोहमयी लगी। शांतनु ने अपनी छाती में सुख की अनुभूति का मीठा दर्द महसूस किया। उसे लगा कि उसकी छाती का काफी हिस्सा बहुत दिनों से सूना पड़ा था और वह सूनी जगह उतनी ही बड़ी है जितने में वह तरुणी समा जाय।

उस दिन स्कैंडल पॉयंट से इन्द्रधनुष दिखाई पड़ने लगा। शिमला का

यह बड़ा प्रसिद्ध दृश्य है। उसे देखने के लिए वहाँ काफी लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गयी। जयश्री अपने घर के लोगों से दूर हटकर शांतनु के पास चली आयी। इधर-उधर की दो-चार बातों के बाद रेलिंग पर नाखून से लकीर खींचती हुई जयश्री बोली—शिमला में जिस दिन आपसे पहली मुलाकात हुई थी, उस दिन आप ठीक इसी जगह खड़े थे। आप उस दिन किसका इंतजार कर रहे थे ?

मुस्कराकर शांतनु ने उत्तर दिया—अब समझ रहा हूँ कि तुम्हारा ही इंतजार था।

उसके बाद शांतनु को मुक्ति नहीं मिली। उसके बाद उसे जयश्री के क्लास में पढ़ाते समय बड़ा कष्ट होने लगा। उसके लिए जयश्री की तरफ आँख उठाकर देखना मुश्किल हो गया, लेकिन बिना देखे भी बड़ी तकलीफ होने लगी। कालेज कम्पाउंड में कहीं जयश्री की आवाज सुन लेने पर या वह नाम लेकर किसी के पुकारने पर भी शांतनु का दिल धड़कने लगता। शांतनु जैसे बुद्धिवादी युवक का क्यों ऐसा हाल हुआ, यह किसी की भी समझ में नहीं आया।

पास होकर जयश्री कालेज से चली गयी तो शांतनु ने उस कालेज की नौकरी छोड़ दी। जयश्री यादवपुर यूनिवर्सिटी में भरती हो गयी। शांतनु रोज वहाँ इतना चक्कर लगाने लगा कि सबको बुरा लग गया। शुरू-शुरू में शांतनु और जयश्री के मिलने-जुलने में कोई बाधा नहीं थी, लेकिन गलती शांतनु ने कर दी। वह जयश्री से मिलने प्रायः रोज जाने लगा और उसकी उस अधीरता का नतीजा यह हुआ कि वह अनन्त देवी की निगाह में पड़ गया। उन दिनों उसकी हालत यह थी कि एक बार सवेरे जयश्री को फोन करेगा, उसके कालेज जाने से पहले एक बार उससे मिल लेगा और जब वह कालेज से लौटेगी तब फिर।

किसी-किसी दिन तो जयश्री को उसके घर के पास तक पहुँचाकर थोड़ी देर बाद शांतनु ने फोन किया कि वह ठीक से घर पहुँच गयी है या नहीं। जयश्री के लिए वह बुरी तरह परेशान रहने लगा। लेकिन अब

मेल-जोल में वाधा पड़ने लगी थी, इसलिए शांतनु बहुत ज्यादा बेचैन रहने लगा था।

एक दिन मैंने शांतनु से पूछा था—क्या तू भी शादी करके घर-गृहस्थी में उलझ जायेगा? तू तो बड़े मजे में था!

फीकी मुस्कान के साथ शांतनु ने जवाब दिया था—था तो बड़े मजे में....

वह रविवार का सवेरा था। शांतनु उस समय भी बिस्तर छोड़कर नहीं उठा था, नौ बज चुके थे। उसने नौकर से चाय मँगायी थी, बेड-साइड टेबिल पर चाय का जूठा कप पड़ा था।

शांतनु बिस्तर पर लेटा अखवार पढ़ रहा था। उसने मुझसे पूछा—चाय पियेगा? ठहर, मैं चाय बनाता हूँ!

मैंने कहा—रहने दे, तुझे उठने की जरूरत नहीं है।

—फिर तू ही उस केटली में पानी भरकर हॉटप्लेट पर रख दे। मैं बना दूँगा।

कुर्सी खींचकर मैं बैठ गया और बोला—तेरी आजाद जिंदगी कितनी अच्छी है। कब उठना होगा और कब कहाँ जाना पड़ेगा—तुझे किसी बात की चिंता नहीं है। कोई ताकीद करनेवाला भी नहीं है। ऐसी जिंदगी छोड़कर तू शादी करने चला है....

शांतनु बोला—कभी न कभी सभी शादी करते हैं। बता, लोग और क्या करते हैं?

मैं थोड़ा अनमना हो गया था, बोला—हाँ, सभी तो करते हैं। लेकिन तेरे बारे में हम लोगों का कुछ और ही ख्याल था।

—क्यों? मैंने कौन-सी गलती की है? सिर्फ मेरे बारे में ऐसा ख्याल होने का क्या कारण है?

—क्योंकि तुझे कई बातों का आराम है। तुझ पर किसी तरह का पारिवारिक उत्तरदायित्व नहीं है। बंगाल में इसी एक कारण से कितने लड़कों की उच्चाकांक्षा बौनी बन जाती है! तुझे रुपये-पैसे के लिए बहुत

ज्यादा सोचना नहीं पड़ता। पढ़ने-लिखने में तू तेज है। हम लोगों को उम्मीद थी कि तू कोई न कोई बड़ा काम करेगा! कम से कम देश के लिए....

—कैसा बड़ा काम ?

—यह मैं नहीं जानता! वह तो तुझको तय करना होगा!

—लेकिन मुझे लगता है कि मनुष्य अपने हृदय से जो कुछ करना चाहता है, उसी में सक्सेसफुल होना कोई बड़ा काम करना है। मैं जयश्री को चाहता हूँ....

—लेकिन बहुत से लोग इसे तेरी पलायनवादी मनोवृत्ति कहेंगे।

—कहने दे! लेकिन एक बात पूछता हूँ। अगर भूकम्प के समय कोई दरार से दूर भाग जाय तो क्या उसे कोई एस्केपिज़म कहेगा ?

—वह तो प्राकृतिक विपत्ति है। उससे मनुष्य के जीवन की किसी अन्य घटना की तुलना नहीं हो सकती। यह तो सिर्फ तुलना करने के लिए तुलना की गयी...

—तुझे अपने फेवरिट कवि की पंक्तियाँ याद हैं ?

अद्भुत अँधेरा छाया है
इस धरती पर आज!
अंधे ही सबसे ज्यादा
देख रहे हैं आज!
जिस हृदय में प्रेम नहीं है....
प्रीति नहीं है...
प्यार की हलचल नहीं है...
बिना उसके मशवरे के
इस दुनिया के सारे
काम-काज रुके हैं आज!

(जीवनानंद दास)

क्या सचमुच इस संसार की हालत ठीक ऐसी ही नहीं है ? क्या यह प्राकृतिक विपत्ति से कम भयानक है ? अब भी जिनके शरीर पर गेंडे की खाल नहीं है, अब भी जिनमें मन नाम की कोई चीज है, उनके लिए अपने को अपने में समेट लेने के अलावा और क्या चारा है ?

मैंने हँसते हुए कहा—अरे ! तू प्यार करने लगा है तो क्या अब कविता भी पढ़ने लग गया !

—दैट्स राइट ! जब आदमी प्यार करने लगता है तब उसमें कई अच्छे गुण पैदा हो जाते हैं । एक से प्यार करने के बाद इन्सान बहुत कुछ से प्यार करना सीख लेता है । तब वह सारे संसार से प्यार करना चाहता है ।

थोड़ी देर हम चुपचाप एक दूसरे को देखते रहे । सिगरेटें जलती रहीं । उसके बाद शांतनु ने मुझसे उसके एक विचित्र दुःख के बारे में कहा । सचमुच, मैंने कभी उस तरह से नहीं सोचा था ।

केटली का पानी उबलने लगा था । पानी उबलकर हॉटप्लेट पर गिरकर छर्र-छर्र आवाज करने लगा । लेकिन हम लोगों का उधर कोई ख्याल नहीं था । लेकिन जब ख्याल हुआ तब शांतनु ने झटपट बिस्तर से उतरकर स्विच ऑफ कर दिया । उसने केटली उतारकर उसमें चाय की पत्ती डाल दी और मेरी तरफ विचित्र उदास आँखों से देखकर कहा—सुनील, तुझसे एक बात कह रहा हूँ, पता नहीं तू विश्वास करेगा या नहीं । जयश्री को देखने के बाद मुझे अपनी माँ की याद बहुत ज्यादा आती है । मुझे ऐसा लगता है कि जयश्री मेरे जीवन में माँ की कमी को पूरा कर देगी ।

—इसका मतलब ?

—घर के सब लोगों से नाता तोड़ने के बाद मुझे सचमुच मुक्ति का आनन्द मिला था । चाहे जो जितनी आजादी की बात करे, भले ही वह आजादी पारिवारिक जीवन में दुर्लभ हो, लेकिन अकेले रहने की यह आजादी भी कभी-कभी दारुण बन जाती है । क्या तू कभी इस तरह

अकेला रहा है कि समझ सकेगा ? विश्वास कर, जयश्री से जान-पहचान होने के बाद से मुझे अपनी माँ न होने की कमी ज्यादा महसूस होने लगी है। जब मेरी माँ मरीं तब मैं बहुत छोटा था, इसलिए इतने दिन माँ ठीक से याद ही नहीं आयीं...

—साइकॉलॉजी की किताब में इस तरह की मनःस्थिति का जरूर कोई नाम मिल जायेगा....

—धत् तेरी साइकॉलॉजी की ! यह मेरी जिन्दगी की बहुत बड़ी सचाई है। इतने दिनों बाद मुझे याद आया कि बीमार पड़ने पर मैं खुद इलाज कराने जाता हूँ, लेकिन कोई मेरे माथे पर हाथ रखकर यह नहीं कहता कि अरे ! इतना तेज बुखार है ! बदन एकदम जला जा रहा है ! मैं क्या खाना पसंद करता हूँ, वह भी मुझे अपने मुँह से कहना पड़ता है, नहीं तो किसी को पता नहीं चलता। यह कितना बड़ा दुःख है, तू नहीं समझ सकेगा !

—लेकिन अपनी माँ के अलावा क्या कोई दूसरी स्त्री ऐसा समझ सकती है ?

—जरूर समझ सकती है। तू अच्छी तरह सोचकर देख, स्नेह और प्रेम दोनों करीब-करीब एक जैसे हैं। एक-दो विशेष बातें छोड़ दी जायें तो दोनों एक हैं—है न ? तू ऐसा हरगिज मत सोच कि मैं किसी लड़की की सिर्फ सुन्दरता से मुग्ध होकर...

—सुंदरता से आँखें चौंधिया जाती हैं। तब हित-अहित का ज्ञान नहीं रहता। यह मनुष्य की बहुत बड़ी लेकिन स्वाभाविक कमजोरी है।

—लेकिन मुझमें वैसी कमजोरी नहीं है। खूबसूरत लड़कियाँ मैंने पहले भी बहुत देखी हैं, जयश्री से भी बहुत ज्यादा खूबसूरत, लेकिन वही तो सब कुछ नहीं है। सिर्फ खूबसूरती देखकर मेरा सिर नहीं चकराता।

—तुझे पता है न, जब आदमी पागल होता है, तब उसे अपने पागल-पन का पता नहीं चलता।

—बेकार की बात मत कर ! तू मेरे काम में अड़ंगा लगाने क्यों

आया है ? मुझे पता है कि जयश्री मेरी जिंदगी की कई कमियाँ पूरी कर देगी, मैं भी उसकी जिंदगी की—खैर ! नारी और पुरुष दोनों एक दूसरे का भरोसा कर विचित्र आनन्द पाते हैं ।

—ठीक है, तुझे अगर वह आनन्द मिले तो हमें खुशी ही होगी । अब बता, भरपूर आनन्द पाने का वह दिन कब तय किया है ?

—किसी भी दिन !

अकेला रहा है कि समझ सकेगा ? विश्वास कर, जयश्री से जान-पहचान होने के बाद से मुझे अपनी माँ न होने की कमी ज्यादा महसूस होने लगी है। जब मेरी माँ मरीं तब मैं बहुत छोटा था, इसलिए इतने दिन माँ ठीक से याद ही नहीं आयीं...

—साइकॉलॉजी की किताब में इस तरह की मन:स्थिति का जरूर कोई नाम मिल जायेगा....

—धत् तेरी साइकॉलॉजी की ! यह मेरी जिन्दगी की बहुत बड़ी सचाई है। इतने दिनों बाद मुझे याद आया कि बीमार पड़ने पर मैं खुद इलाज कराने जाता हूँ, लेकिन कोई मेरे माथे पर हाथ रखकर यह नहीं कहता कि अरे ! इतना तेज बुखार है ! बदन एकदम जला जा रहा है ! मैं क्या खाना पसंद करता हूँ, वह भी मुझे अपने मुँह से कहना पड़ता है, नहीं तो किसी को पता नहीं चलता। यह कितना बड़ा दु:ख है, तू नहीं समझ सकेगा !

—लेकिन अपनी माँ के अलावा क्या कोई दूसरी स्त्री ऐसा समझ सकती है ?

—जरूर समझ सकती है। तू अच्छी तरह सोचकर देख, स्नेह और प्रेम दोनों करीब-करीब एक जैसे हैं। एक-दो विशेष बातें छोड़ दी जायें तो दोनों एक हैं—है न ? तू ऐसा हरगिज मत सोच कि मैं किसी लड़की की सिर्फ सुन्दरता से मुग्ध होकर...

—सुंदरता से आँखें चौंधिया जाती हैं। तब हित-अहित का ज्ञान नहीं रहता। यह मनुष्य की बहुत बड़ी लेकिन स्वाभाविक कमजोरी है।

—लेकिन मुझमें वैसी कमजोरी नहीं है। खूबसूरत लड़कियाँ मैंने पहले भी बहुत देखी हैं, जयश्री से भी बहुत ज्यादा खूबसूरत, लेकिन वहाँ तो सब कुछ नहीं है। सिर्फ खूबसूरती देखकर मेरा सिर नहीं चकराता।

—तुझे पता है न, जब आदमी पागल होता है, तब उसे अपने पागलपन का पता नहीं चलता।

—बेकार की बात मत कर ! तू मेरे काम में अड़ंगा लगाने क्यों

आया है ? मुझे पता है कि जयश्री मेरी जिंदगी की कई कमियाँ पूरी कर देगी, मैं भी उसकी जिंदगी की—खैर ! नारी और पुरुष दोनों एक दूसरे का भरोसा कर विचित्र आनन्द पाते हैं।

—ठीक है, तुझे अगर वह आनन्द मिले तो हमें खुशी ही होगी। अब बता, भरपूर आनन्द पाने का वह दिन कब तय किया है ?

—किसी भी दिन !

Ah ! Sije Souffre, on Souffre aux cieux !
—M. D-Valmore

(आह ! मुझे अगर दुःख मिले तो स्वर्ग में उनको भी जरूर दुःख मिलेगा ।)

—मैं ये परदे सब फेंक दूँगी ।

शांतनु बिना कुछ कहे धीरे-धीरे हँसने लगा ।

—पूरा एक सेट नया परदा खरीदना पड़ेगा । दीवार का डिस्टेम्पर भी बदलना पड़ेगा । मुझे सफेद दीवार ही अच्छी लगती है, नहीं तो कोई हलका पेस्टल शेड—लेकिन तुम्हारे घर की दीवार का रंग कितना गहरा नीला है !

—लेकिन मकान तो मेरा नहीं है ।

—नहीं है, न सही । किराये पर लेते समय भी नया लैंडलार्ड से कह नहीं सके ?

—मैं तो सब-टेनेंट हूँ । तुम तो कभी किराये के मकान में रही नहीं, कैसे जानोगी यह सब ? किराये के मकान में इतना नखरा नहीं चलता !

—नखरा किराये के मकान में ही ज्यादा चलता है ! किसने कहा है कि मैं किराये के मकान में नहीं रही ? हम लोगों का मकान भी तो अभी नौ साल पहले ही खरीदा गया है । इसके पहले हम लोग भवानीपुर के एक मकान में रहते थे—अभी अनुराधा जहाँ रहती है, वहीं पास में । कितने बड़े-बड़े कमरे थे । फिर तुम भी कितने दिन से किराये के मकान में रह रहे हो ?

—अच्छा, ठीक है, तुम्हारी पसंद से कोई बढ़िया फ्लैट किराये पर लूँगा—इस मकान में तो नहीं रहूँगा ।

जयश्री चुलबुली तितली की तरह सारे कमरे में घूम रही थी, अब बिस्तर पर आकर बैठ गयी और बोली—रविवार वाला अखबार है ?

लाओ, किराये के मकानों का विज्ञापन देखूँ...

शांतनु ने पूछा—क्या अभी देखना पड़ेगा ?

—इसका मतलब ? तुम्हारा क्या इरादा है ? क्या तुम यही चाहते हो कि जब मैं एकदम बूढ़ी हो जाऊँगी, तभी तुम मुझसे शादी करोगे ?

शांतनु हँसने लगा।

सवेरे शांतनु उस समय भी बिस्तर छोड़कर उठा नहीं था कि दरवाजे में खट्-खट् आवाज होने लगी। शांतनु ने आँखें बंद किये हुए ही कहा था—अन्दर आ जाओ, खुला है। कई दिनों से कॉलिंग बेल खराब पड़ा है। बिहारी नौकर भोर में आकर चिल्लाना शुरू कर देता है, तो भी शांतनु सुन नहीं पाता। इसलिए जभी नींद खुल जाती है, तभी वह उठकर दरवाजे की सिटकिनी खोलकर फिर सो जाता है।

शांतनु के फ्लैट में दो कमरे हैं। एक बड़े कमरे को दो भागों में बाँटा गया है, आगे की तरफ बैठक है और पीछेवाले में शांतनु सोता है।

आते ही जयश्री ने एक झटके में शांतनु के बदन से चादर हटा दी थी तो शांतनु बड़े जोर से घबड़ा गया था। शांतनु अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर सका था !

जयश्री पहले कभी शांतनु के घर नहीं आयी थी और आज आयी तो इतने सवेरे और इतनी सज-धजकर !

शांतनु झटपट उठा। उसने अलगनी से कमीज लेकर पहन ली।

जयश्री बोली—क्या तुम मेरे साथ शिष्टता बरत रहे हो ? तुमने मुझे देखकर कमीज क्यों पहन ली ?

—क्या बात है ? अचानक इस वक्त कैसे चली आयीं ?

—यों ही चली आयी, आज से यहीं रहूँगी।

—सचमुच क्या हुआ है, बताओ न ?

—कुछ नहीं हुआ। यों ही चली आयी !

—इतने सवेरे ?

—लग रहा है कि मेरे आने पर तुम खुश नहीं हुए। ठीक है, मैं जा रही हूँ।

—अरी, ठहरो, ठहरो....

अव शांतनु को जल्दी से उठ कर जयश्री का रास्ता रोकना पड़ा।

जयश्री सीधी चली जा रही थी।

शांतनु की आँखों में नींद की खुमारी अभी वनी हुई थी।

जयश्री का हाथ पकड़कर शांतनु ने उसे खींचकर कुर्सी पर बैठाया और उसका हैंडबैग पास में रख दिया। उसके बाद शांतनु वोला—खुश होने और न होने का सवाल ही नहीं उठता—मुझे अब भी न जाने क्यों विश्वास नहीं हो रहा है। नींद से जगकर पहली वार आँखें खोलते ही तुम्हें देखूँगा—भला इस पर कैसे विश्वास हो सकता है। बताओ, तुम सचमुच आयी हो न? कहीं मैं सपना तो नहीं देख रहा हूँ? या कोई जादू?

—या देखने में भ्रम तो नहीं हो रहा है! मेरा बदन भी छूकर देखो कि मैं ही सचमुच हूँ या नहीं।

जयश्री ने हलके गुलाबी रंग की साड़ी पहन रखी थी। ताजा खिले गुलाव के अंदर के हिस्से में जैसा रंग रहता है, करीव-करीव वैसा ही था साड़ी का रंग। सवेरे की रोशनी में यह रंग अच्छा लगता है। उसने जूड़ा नहीं वनाया, खुले वाल पीठ पर फैले हुए थे। इतने सवेरे ही वह नहाकर निकली थी, इसलिए उसके वालों से चिकनापन झलक रहा था। उसकी भौंहें भी भीगी-भीगी-सी लगीं।

जयश्री का हाथ टेवुल पर रखा हुआ था और शांतनु के वहुत करीव। जयश्री ने अपना हाथ और आगे वढ़ाकर मजाक में कहा—देखो, छूकर देखो न!

गोरे सुडौल हाथ की सुंदरता ने शांतनु की दृष्टि को अपनी ओर खींच लिया। ब्लाउज़ स्लीवलेस था। संगमरमरी वाँह पर कोई आभूषण नहीं था, सिर्फ एक कंगन के अलावा। उँगलियों के नाखूनों में स्वाभाविक

लाली थी, बीचवाली उँगली में अँगूठी थी और उसमें पानी के झाग जैसा सफेद नग। उँगलियाँ ऐसी कि उन्हें चंपे की कलियाँ कहना अनुचित न होगा।

शांतनु ने धीरे-धीरे जयश्री के हाथ पर अपना हाथ रखा। अपने हाथ की गरमी के मुकाबले उसे जयश्री का हाथ कितना ठंढा और मक्खन-सा मुलायम लगा। उस हाथ की छोटी-सी मुट्ठी में न जाने कितनी शांति छिपी है। जयश्री ने बहुत धीरे-धीरे कहा—अब भी विश्वास नहीं हो रहा है क्या ? छूकर देखा, तब भी नहीं ?

दूसरे ही क्षण शांतनु ने अपना हाथ झट से हटाकर कहा—अभी मेरा नौकर आ जायेगा। पता नहीं, तुम्हें देखकर वह क्या सोचेगा ?

—क्या सोचेगा ?

—पहले तो वह विश्वास भी नहीं कर सकेगा, उसके बाद सोचेगा कि तुम शायद—याने रातभर से यहीं हो।

उदासीन स्वर में जयश्री बोली—सोचा करे !

—खैर, तुम्हारी हिम्मत की तारीफ करनी पड़ेगी। एकदम इस तरह चले आना—ऐसा कोई और लड़की नहीं कर सकती। इस मकान के सब लोग मुझे एकदम दूसरी तरह का आदमी समझते हैं—और सवेरे-सवेरे मेरे ही कमरे में एक जीती-जागती हसीन लड़की....

जयश्री ने तीखी आँखों से शांतनु की तरफ देखकर कहा—तुमने तो कहा था कि मेरे मकान में कोई मेरे बारे में माथा-पच्ची नहीं करता। अब तुम्हीं अपनी बदनामी के डर से क्यों परेशान हो रहे हो ?

—नहीं, ऐसी बात नहीं है !

—फिर क्या है ? मेरे आने पर तुम खुश नहीं हुए।

शांतनु अब उठकर जयश्री के सामने आया। उसने गुस्से से भरी जयश्री की ठुड्डी को हाथ से छूकर बड़े मीठे स्वर में कहा—खुशी से ज्यादा मुझे आश्चर्य हुआ है, यह तो सही है। असल में बात क्या है जानती हो, मैं तुम्हें चाहता हूँ, बहुत ज्यादा चाहता हूँ, लेकिन लोगों की

निगाह से बचकर चोरी-छिपे कुछ भी पाने की इच्छा मुझे नहीं है। माँ बाप से छिपाकर, पड़ोसियों की निगाह बचाकर चोरी-छिपे किसी कमरे में किसी लड़की से मिलने में बचपना तो है ही, उसमें मुझे पाप का भी थोड़ा अहसास होता है। मुझे वैसा अच्छा नहीं लगता। मैं चाहता हूँ सीधे....

—तुम तो बड़े प्यूरीटन लग रहे हो? इसमें चोरी-छिपे की क्या बात है? हम कोई बच्चे तो हैं नहीं, हमारी भी अपनी इच्छा-अनिच्छा नाम की कोई चीज है!

शांतनु जयश्री के कंधे पर हाथ रखकर थोड़ा झुककर खड़ा हो गया। एक शिशु को समझाने के ढंग से उसने स्नेह भरे स्वर में कहा—खैर, सच-सच बताओ तो, जोश में आकर घर में कुछ करके तो नहीं आयीं?

—अगर किया भी है तो क्या होगा?

—कुछ नहीं। सारा जिम्मा मेरा है। लेकिन क्या किया है?

—कुछ भी नहीं! यों ही चली आयी!

—आने दिया? किसी ने रोका नहीं?

—किसी से पूछा ही नहीं। कई दिन -रात को ठीक से नींद नहीं आयी, सवेरा होने से पहले जग जाती थी, फिर लेटे-लेटे—आज तो एकदम अच्छा नहीं लगा, इसलिए नहाकर निकल पड़ी। मैंने सिर्फ नौकरानी से कह दिया है कि मैं थोड़ी देर के लिए बाहर जा रही हूँ!

—घर में तुम्हारी खोज नहीं होगी?

—जरूर होगी। हुआ करे!

जयश्री अपनी ही धुन में खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली—इससे तो और मजा होगा। माँ-बाप और चाचा-चाची सब परेशान होकर चारों तरफ ढूँढ़ेंगे, टेलीफोन करेंगे और हो सकता है कि थाने और अस्पताल तक लोग दौड़ जायें। फिर उसके बाद मैं भली-चंगी घर लौट जाऊँगी। कोई पूछेगा तो कह दूँगी कि बस, जरा घूमने चली गयी थी! कभी-कभी ऐसा करना ठीक रहता है, समझ गये? कम से कम

उनको यह समझा देना जरूरी है कि मेरी इच्छा और अनिच्छा की भी कोई कीमत है मैं भी अपना भला-बुरा समझती हूँ और अपने को संभाल-कर चल सकती हूँ—

जाड़े में हड़बड़ी में जिस तरह कोई बदन से चादर उतार कर रख देता है, उसी तरह हलके स्वर में शांतनु बोला—ठीक है, आज तुम लौट नहीं सकती ! दिनभर मैं तुम्हें रोक रखूँगा।

—तुम्हारा दफ्तर ?

—भाड़ में जाय दफ़्तर ! आओ, पहले ब्रेकफास्ट कर लिया जाय ! मेरे पास अंडे, सैलमी और पावरोटी हैं। तुम चाय बनाना जानती हो ?

—जी नहीं ! चाय कैसे बनायी जाती है ? क्या पहले चाय की पत्ती सिल-वट्टे से पीस लेनी पड़ती है ?

दो युवा-हृदयों के हास-परिहास से उस कमरे की घुटन एकदम गायब हो गयी। खिड़की से साफ नयी हवा का झोंका आया। शांतनु का नौकर दोनों को देखने के लिए झाड़-बुहार के बहाने अंदर आया और गूँगी आँखों से उनको देखने लगा। थोड़ी देर में अपना काम निपटाकर वह चला गया। फुर्तीले हाथों से बिस्तर हटाकर एक-दो चीजों को सही ढंग से रखकर पल भर में जयश्री ने कमरे की शक्ल बदल दी। फिर वह कमर में आँचल लपेटकर अंडे तलने लगी। केटली में चाय की पत्ती भीग रही थी।

शांतनु बोला—आज दिनभर हम इस कमरे से बाहर नहीं निकलेंगे। सिर्फ बात करते रहेंगे। दोपहर को अगर भूख लगे तो…

जयश्री ने गर्दन टेढ़ी कर कहा—थोड़ी देर में अनुराधा आयेगी।

—अनुराधा ? वह क्यों आयेगी ?

—उसी के साथ तो आयी। वह कॉलिज गयी है। आज उसे बस दो क्लास लेने हैं, नौ बजे तक चली आयेगी।

जरा रुककर शांतनु बोला—वाह बड़ा अच्छा रहेगा। तीनों मिल कर खूब गपशप करेंगे।

फिर चालीस मिनट में वे दोनों इतना हिल-मिल गये कि हाथ-मुँह धो आने के बाद शांतनु ने एकदम शिकायत भरे लहजे में कहा—अरे! अभी तक चाय नहीं बनी ? तुमने इतनी देर कर दी ?

जयश्री ने गंभीर स्वर में कहा—ठहरो जी, इतनी जल्दी मत मचाओ पावरोटी तो सेंक लूँ....

—अच्छा, चाय रहने दो। एक बात कहूँ जयश्री ?

—क्या ?

—सभय कहूँ या निर्भय होकर ?

—सभय।

—जरा पास आओगी ? चाय से पहले कोई और चीज खाने को मन कर रहा है।

भौंहें टेढ़ी कर जयश्री बोली—नहीं !

निराश प्रेमी की तरह बिस्तर पर गिरकर शांतनु लेट गया। दूसरे ही क्षण सिगरेट जलाने के बाद उसने करवट लेकर केहुनी पर सिर रख दिया और एकटक वह जयश्री की व्यस्तता देखने लगा।

शांतनु धीरे-धीरे बोला—दो दिन से मिजाज बड़ा खराब था, लेकिन आज कितना अच्छा लग रहा है। फिर भी डर रहा हूँ कि कहीं मेरा यह सौभाग्य क्षणस्थायी सिद्ध न हो। जयश्री, आज घर कितना सुंदर लग रहा है। आज तुम इस घर की हर चीज के संग जँच रही हो...

—एकदम नहीं ! ये परदे कितने बेहूदे हैं।

टेबुल पर चाय के कप और नाश्ता रखा हुआ है। बिस्तर पर शांतनु पलथी मारकर बैठा है। जयश्री कुर्सी पर बैठी है एकाएक देखने से ही लगता था कि किसी नये दम्पत्ति के नये सवेरे का दृश्य है। लेकिन जयश्री आज इस घर में पहली बार आयी थी। असल में जयश्री खुद न आती तो शांतनु कभी भी उससे आने के लिए नहीं कहता।

अब शांतनु दाढ़ी बनाने लगा था। जयश्री उससे सटी खड़ी थी। प्रतिदिन एकरस काम भी आज कितने अच्छे लग रहे थे। शांतनु अपने

को बड़ा हलका महसूस कर रहा था। अब उसे हरारत महसूस नहीं हो रही थी। न जाने उसके मन में कैसी चंचलता भर गयी थी।

आज शांतनु शीशे की तरफ देखकर जान-बूझकर ज्यादा मुँह बना रहा था आँखमार रहा था और होंठों को सिकोड़कर मुँह में भर रहा था—मानो दाढ़ी बनाना बहुत बड़ी होशियारी और जोखिम का काम है। शीशे में उसके चेहरे के पास जयश्री का चेहरा दिखाई पड़ रहा था—और दिन तो इस कमरे में सूनापन रहता था, खामोशी रहती थी। बहुत दिनों की सूनी खामोशी के बीच आज मानो वीणा बज उठी थी। शांतनु ने सोचा—यह सुरूपा नारी मेरी है—जिस तरह मैं उसे चाहता हूँ, वह भी मुझे उसी तरह चाहती है। सिर्फ यही बोध उसकी छाती में उथल-पुथल मचा देता है। कौन कितने दिन जिन्दा रहेगा, इसका कोई ठिकाना नहीं है। कितनी ही तरह की विपत्तियाँ और दुर्घटनाएँ हैं, लेकिन उनके बावजूद जिस मनुष्य को इस अनुभूति का स्वाद नहीं मिला, उसके समान कंगाल और दुःखी इस दुनिया में कौन है? हाँ, इस समय संसार में शांतनु से ज्यादा सुखी और कोई नहीं।

जयश्री ने हलके से शांतनु की पीठ पर अपना गाल रखा। इससे शांतनु के हाथों की हरकत रुक गयी। उसका सारा ध्यान अपनी पीठ की उस जगह पर केन्द्रित हो गया। झन्-झन् आवाज के साथ मानो कहीं कोई साँकल टूटी। अब उससे रहा नहीं जा रहा था। वह मुड़कर खड़ा हो गया।

शांतनु को खड़ा होते देखकर जयश्री दूर हट गयी और बोली—अरे, पहले दाढ़ी तो बना लो....

चारों आँखें कई पल अपलक रुकी रहीं। उसके बाद शांतनु बोला—ठीक है, मैं दाढ़ी बना रहा हूँ, लेकिन तुम तो पास आकर खड़ी हो जाओ।

शांतनु जब दूसरी बार गालों में साबुन लगाने लगा तब जयश्री बोली—लाओ, मैं लगा देती हूँ।

इस पर शांतनु ने मुँह आगे कर दिया और दीवार पर जैसे रंग

पोता जाता है वैसे ही जयश्री शांतनु के चेहरे पर ब्रश फेरने लगी। यह कैसा जादू का खेल है, इसमें कैसा सुख है, वह वही दोनों बता सकते थे। मजाक में जयश्री ने शांतनु के होंठों और नाक पर साबुन पोत दिया। शांतनु घबड़ा गया, उसके मुँह से निकला—अरे! अरे!—और इतने में बाहर दरवाजे पर दस्तक हुई।

जयश्री बोली—शायद अनुराधा आयी है!

—ठहरो, कहीं अनुराधा की जगह कोई और न हो। मैं देख रहा हूँ—

तौलिये से मुँह का साबुन पोंछकर शांतनु दरवाजे की तरफ बढ़ा। नहीं, और कोई नहीं, अनुराधा ही है।

शांतनु बोला—अरे, आओ। तुम्हारा ही इंतजार हो रहा था। तुम नहीं आयी, इसलिए हमने दोबारा चाय नहीं पी।

हँसी को भौंहों में समेटकर अनुराधा बोली—सच?

जयश्री बोली—तूने नौ बजे तक आने के लिए कहा था, लेकिन अभी कितने बजे हैं?

—साढ़े नौ! क्या बताऊँ, बस मिलने में इतनी परेशानी होती है, किसी तरह आ ही नहीं पा रही थी।

—बहुत दूर आना भी तो पड़ा।

—जयश्री, अबतो तू घर चलेगी न?

—घर नहीं जाऊँगी तो और कहाँ जाऊँगी?

शांतनु ने अनुराधा से कहा—ठहरो तो! अभी आयी और अभी चलने के लिए तैयार हो गयी। पहले बैठो तो! जयश्री अभी नहीं जायेगी, आज वह दिन भर यहीं रहेगी। उसी ने कहा है...

—वाह! यह तो बड़ी अच्छी बात है। रहे न!

—तुम भी तो रहोगी?

—मैं? नहीं, मैं नहीं! मुझे आज जल्दी घर लौटना है। माँ की तबीयत ठीक नहीं है, जाकर मुझे खाना बनाना पड़ेगा।

जयश्री ने अनुराधा से कहा—थोड़ी देर बैठ न, मैं भी तो तेरे संग चलूँगी। वह दफ्तर जाते समय हम दोनों को छोड़ देगा...

निराशा भरे स्वर में शांतनु बोला—तो हम लोगों का दिनभर वाला प्रोग्राम आज नहीं हो पायेगा ?

—फिर किसी दिन होगा, अभी बहुत दिन पड़े हैं। पहले तुम दूसरा फ्लैट ढूँढ़ लो। यह फ्लैट मुझे पसंद नहीं है।

—मैं कल ही से नये फ्लैट की तलाश में लग जाऊँगा।

टेबुल पर हैंडबैग रखकर अनुराधा बोली—हाँ, आपका यह मकान न जाने कैसा है ! मैं जब आ रही थी, तब बाहर गेट के पास एक आदमी विचित्र ढंग से मेरी तरफ देख रहा था !

शांतनु ने पूछा—कौन था ?

—मुझे क्या पता ! लगा, कोई ऐंग्लो-इंडियन है। इस तरह देख रहा था जैसे कुछ कहेगा। लेकिन उसने कुछ कहा नहीं।

—अच्छा, समझ गया। वह एक बूढ़ा यहूदी है।

—बहुत बूढ़ा तो नहीं है !

—हाँ, अधेड़ है। उससे मेरी बड़ी दोस्ती है। उसका नाम लॉकहार्ट है।

—क्या नाम है ?

—लॉकहार्ट ! बड़ा भला आदमी है।

—लेकिन वह वैसे बेहूदे ढंग से क्यों देखता है ?

—वह कोई खास बात नहीं है। उसे आँख की बीमारी है। दो बार उसने आपरेशन कराया है, फिर भी ठीक नहीं हुआ। किसी ने उसने कहा है कि सवेरे हरे रंग की तरफ देखा करो तो आँखें ठीक हो जायेंगी। इस-लिए वह रोज तड़के उठकर हमारे गेट के सामने जो अशोक का पेड़ है, उसी की तरफ आँखें फाड़कर देखता रहता है। आज तुमने भी तो हरी साड़ी पहनी है, शायद इसीलिए उसने तुम्हें चलता-फिरता पेड़ समझ लिया हो या माधवी लता का गुच्छा...

—धत् ! आप तो अपने मन से बनाकर पता नहीं क्या-क्या कह रहे हैं !

खैर, दाढ़ी बना लेने के बाद शांतनु बालों में कंघी करने लगा और जयश्री दूसरी बार चाय बनाने लगी।

अनुराधा शांतनु की तरफ देखकर बोली—आज आपका चेहरा सूखा-सूखा क्यों लग रहा है ?

—नहीं तो !

—हाँ, पता नहीं, कैसा लग रहा है....

—वह कुछ नहीं है। परसों मुझे थोड़ा बुखार आ गया था।

घबड़ाकर जयश्री ने पलटकर पूछा—क्या तुम्हें बुखार आया था ? अभी तक तुमने कुछ नहीं कहा ?

—ऐसी कोई बात नहीं, जरा हरारत-सी थी।

—देखूँ, इस वक्त तो बुखार नहीं है ?

निस्संकोच आगे बढ़कर जयश्री ने शांतनु के माथे पर हाथ रखा। थोड़ा असमंजस में पड़कर शांतनु ने अनुराधा की तरफ देखा।

अनुराधा की आँखें दूसरी तरफ थी, वह फर्श की तरफ देख रही थी। खेल-खेल में वह पाँवों से चप्पल उतारकर फिर पहनने लगी। उसके होंठों के कोनों में अकारण ही दबी हँसी थी। उस तरफ देखकर शांतनु ने न जाने क्या समझने का व्यर्थ प्रयास किया।

उसके बाद शांतनु ने फिर जयश्री की तरफ ध्यान दिया। जयश्री बार-बार हाथ से शांतनु का माथा छूकर देखने लगी थी। उस कोमल आकुल हाथ के स्पर्श से शांतनु का सारा शरीर सिहरने लगा। शायद एक युग बाद उसके तपते माथे पर किसी नारी ने हाथ रखा था।

शांतनु ने गौर किया कि परेशान होने पर जयश्री अधिक सुंदर लगती है। आज का यह सवेरा उसके लिए अचानक इतना अच्छा होगा, क्या यह उसी को पता था। उसने जयश्री की हथेली को अपने माथे से हटाकर अपनी मुट्ठी में जरा दबाया !

●

हजारों बार अगर समीरण आकर कानों में प्रार्थना करता है, तो भी क्या कभी पंकजिनी कनक उदयाचल पर अपने मिहिर को देखे बिना खिलती है ?

—माइकेल मधुसूदन दत्त

ऑफिस जाने के लिए हृषीकेश बाबू तैयार हो चुके हैं। शीशे के सामने खड़े होकर टाई बाँध लेने के बाद वे हाथ पीछे की तरफ फैलाकर खड़े हो गये। जयश्री ने उन्हें कोट पहना दिया। फिर बटन लगाकर हृषीकेश बाबू बोले—जरा मसाला ला दे बिटिया—पता नहीं, मुँह का जायका कैसा हो गया है....

मसाले की डिबिया लाकर जयश्री बोली—मुँह का जायका बिगड़ गया है तो मुंह धो लीजिए न....

—धोया तो कई बार! खाना खाते समय न जाने कैसा लगा, तभी से मुंह का जायका बिगड़ा हुआ है....

—थोड़ी इलायची मुंह में रख लीजिए।

हृषीकेश बाबू ने बैग हाथ में लेकर कहा—कल दफ्तर जाते समय तुझे नहीं देखा था मीटू, कहाँ थी ?

—कल एक दोस्त के घर गयी थी।

—अच्छा !

हृषीकेश बाबू इससे ज्यादा कैफियत कभी अपनी लड़की से नहीं मांगते। वे खुश होकर बोले—देख तो तेरा चाचा तैयार हो गया है या नहीं।

पिताजी के साथ जयश्री दूसरी मंजिल में आ गयी। परेश बाबू रोज देर लगाते हैं। अब भी वे टाई की गाँठ ठीक कर रहे हैं। उनकी पत्नी ने ताकीद करके कहा—अरे, जल्दी कीजिए न! जेठ जी आ गये हैं। आप ऑफिस जाते समय भी देर करते हैं और लौटते समय भी। लेकिन आज जल्दी चले आइएगा। मीठू, आज थियेटर देखने चलेगी न?

जयश्री ने पूछा—कैसा थियेटर चाची जी?

—न्यू एम्पायर में। शेक्सपियर के नाटक खेलने वाले इंगलैंड से आये हुए हैं। उनके दफ्तर के सुगत बाबू को चार पास मिले हैं....

जयश्री ने चेहरे को जरा कठोर बनाकर कहा—आप चली जायँ। मूझे थियेटर देखना अच्छा नहीं लगता।

—क्यों री? सुना है कि इन लोगों का नाटक बड़ा अच्छा होता है। दिल्ली में...

—आप लोग जाइए, मैं नहीं जाऊँगी।

हृषीकेश बाबू और परेश बाबू अलग-अलग दफ्तरों में नौकरी करते हैं, लेकिन एक ही कार से जाते हैं। कमरे से निकलते समय परेश बाबू ने जरा जयश्री को प्यार किया और कहा—क्यों री मीठू, तू दिनों दिन दुबली क्यों होती जा रही है?

—मैं कहाँ दुबली हो गयी? कौन मुझे दुबली कहेगा?

—तो क्या स्लिम हो रही है? आजकल तो वह फैशन है न। तू अपनी चाची को देख न, तुझसे दूनी क्या, तिगुनी होगी...

सुजाता ने आँखें तरेरकर पति की तरफ देखा तो परेश बाबू खटाखट सीढ़ी से नीचे उतरने लगे। हृषीकेश बाबू पहले ही कार में जाकर बैठ गये थे। परेश बाबू कार में बैठकर ड्राइवर से बोले—चलो....

दोनों सगे भाई हैं, लेकिन उनकी शक्ल-सूरत में कोई मेल नहीं है। हृषीकेश बाबू काफी लंबे हैं। उम्र हो जाने पर भी उनके सिर के सब बाल नहीं पके और वे बड़े शांत स्वभाव के हैं। परेश बाबू जरा चंचल प्रकृति के, नाटे, मोटे-तगड़े और उनकी चांद एकदम चिकनी है। परेश

वावू हृषीकेश वावू से दस साल छोटे हैं।

कार से दफ्तर जाते समय परेश बाबू की जल्दबाजी का एक कारण यह है कि वे सिगरेट नहीं पी सकते। आज भी वे भैया के सामने सिगरेट नहीं पीते। हृषीकेश वावू पान या सिगरेट कभी नहीं छूते। लेकिन सिगरेट की कमी पूरी करने के लिए इतनी देर में परेश वावू दो-तीन बार मुँह में पान भर लेते हैं।

हृषीकेश वावू के चेहरे पर अव भी वेचैनी वनी है। थोड़ी देर चुप रहने के वाद वे वोले—खाते समय न जाने क्या मुँह में पड़ गया, अभी तक मुँह का जायका विगड़ा हुआ है।

—तो आज एक बीड़ा पान खाकर देखिए न !

—नहीं।

फिर थोड़ी देर के लिए खामोशी बनी रही। हृषीकेश बावू फिर अपनी धुन में कहने लगे—गुरुदेव को आने के लिए लिखा था। उनकी चिट्ठी मिली है, इसी शनिवार को आ रहे हैं।

अव परेश वावू के चेहरे से लगा कि वे जरा अप्रसन्न हो गये हैं। थोड़ी उपेक्षा के साथ उन्होंने कहा—हम अपनी वुद्धि से कुछ नहीं कर सकते तो गुरुदेव ही आकर क्या करेंगे ?

—गुरुदेव मेरे मन की शांति के लिए आयेंगे। उनसे वात करने पर मुझे आनन्द मिलता है।

—गुरुदेव के आने पर घर में वड़ा भीड़-भड़क्का बढ़ जाता है। रात-दिन लोग आते रहते हैं....

—सो तो आयेंगे ही। जो लोग गुरुदेव का आदर करते हैं...

फिर थोड़ी देर खामोशी रही। उसके वाद थोड़ा आगा-पीछा कर परेश वावू वोले—एक वार आप उस लड़के से वात करेंगे ?

—कौन लड़का ?

—हमारे ऑफिस के जिस लड़के के वारे में आपसे कहा था—सुगत रायचौधुरी। भाभी को तो वह लड़का वड़ा पसंद है।

—तुम्हारी भाभी ने उस लड़के को देखा है।

—हाँ, एक दिन भाभी सुजाता के साथ कहीं गयी थीं, रास्ते में मुलाकात हो गयी थी। सुजाता उस लड़के को अच्छी तरह जानती है। लड़का क्वालिफायड है, सात साल विलायत में था, यहाँ भी नौकरी में उसका केरियर ब्राइट है, फैमिली अच्छी है और देखने-सुनने में भी अच्छा....

—फिर उससे मेरे बात करने की क्या जरूरत है? तुम भी तो बात कर सकते हो।

—हाँ, लेकिन उसके माँ-बाप से किसी दिन....

—ठीक तो है, कब चला जायेगा तुम तय कर लो। गुरुदेव के रहते रहते अगर बात हो जाय तो अच्छा है। लेकिन एक बात है, वे लोग पहले लड़की देखे बिना...

—सो तो देखेंगे ही। लेकिन समझ रहे हो न, इंगलैंड-रिटर्न लड़का है, उसी की राय अहमीयत रखती है। मीठू को एक बार देख लेगा तो वह जरूर पसंद करेगा। लेकिन मीठू जैसी जिद्दी लड़की है, तुम जानते हो, क्या वह राजी होगी?

इस सवाल को कोई महत्त्व न देकर हृषीकेश बाबू बोले—क्यों नहीं राजी होगी? मैं कहूँगा तो वह राजी हो ही जायेगी। जब शादी करनी ही पड़ेगी तब वह भी एक बार लड़के को...

—लेकिन मीठू तो एक दूसरे लड़के को पसंद करती है। वही लड़का जो प्रोफेसर है लेकिन वह तो ब्राह्मण नहीं है।

हाथ हिलाकर हृषीकेश बाबू ने असहिष्णुता जाहिर की और कहा—अरे, वह सब कुछ नहीं है।

—तो इस लड़के को किसी दिन घर पर बुला लूं? लेकिन मुश्किल यह है कि विलायत रह आने पर भी बड़ा शर्मीला है, याने फार्मल ढंग से लड़की देखना इसे नापसंद है।

हृषीकेश बाबू का दफ्तर पहले पड़ता है इसलिए वे पहले पहुँच गये।

कार से उतरते समय वे बोलें—देखो, क्या कर सकते हो।

हृषीकेश बाबू का आँफिस छोटा है, लेकिन यह उनका अपना है। याने इस दफ्तर के आधे हिस्से के मालिक वे स्वयं हैं और दूसरे आधे हिस्से का मालिक कभी दफ्तर में नहीं आता। कर्मचारी अब भी हृषीकेश बाबू से डरते हैं, उनका आदर करते हैं और उनके सामने कोई जोर से बात नहीं करता। हृषीकेश बाबू खुद भी बहुत धीरे बात करते हैं और दिन भर में शायद कभी ही अपने चेम्बर से निकलते हों।

अपने चेम्बर में पहुँचकर उन्होंने बैग रखा और उसके बाद कोट उतारा। टेबुल पर शीशे के नीचे एक संन्यासी का फोटो रखा हुआ था जटाजूटमंडित विशालकाय सुपुरुष, ये ही उनके गुरु हैं। वे काफी देर तक उस फोटो की तरफ देखते रहे। मानो मन ही मन अपने गुरुदेव से बातें कर रहे हों।

हृषीकेश बाबू उस फोटो की तरफ देख ही रहे थे कि उनकी निगाह दूसरी तरफ गयी। टेबुल पर से चींटियों की एक कतार चल रही थी। सभी चींटियाँ बड़ी व्यस्त थीं और दोनों तरफ उनके आने-जाने में विराम नहीं था।

अब हृषीकेश बाबू का ध्यान चींटियों के कतार के छोर की तरफ गया। टेलीफोन और कलमदान के बीच एक जगह कुछ मरा पड़ा था। वह तितली, माँय या गुबरैला था, ठीक से पहचानने का अब कोई उपाय नहीं था, क्योंकि वह ढेर सारी चींटियों से ढका हुआ था।

आज दो कारणों से हृषीकेश बाबू का मन उदास था। पहला कारण तो यह था कि आज उनके बेयरा ने उनका टेबुल साफ नहीं किया था। कितने साल गुजर गये, लेकिन ऐसी गफ़लत उसने कभी नहीं की। दूसरा कारण यही अशुभ लक्षण था। तितली या गुबरैला, कुछ भी हो, वह उन्हीं के टेबुल पर क्यों मरा? फिर इतनी चींटियाँ इस दफ्तर में हैं, यह भी उनको कहाँ पता था?

बड़े ही उदास मन से हृषीकेश बाबू ने बेयरा को बुलाने के लिए घंटी बजायी।

भैया के कार से उतर जाते ही परेश बाबू ने सिगरेट जला ली थी और उसके साथ ही उनकी आँखें मुंद आयी थीं। अभी उनके दफ्तर पहुँचने में दसेक मिनट की देर थी और रोज इतनी देर वे थोड़ा आराम कर लेते हैं। भोजन करने के बाद हलकी झपकी आती है और उस समय सिगरेट का कश लेते हुए आँखें बन्द कर आराम करने में बड़ा मजा आता है। लेकिन दफ्तर पहुँचते ही उनमें चुस्ती और फुर्ती लौट आती है।

लंच ब्रेक में परेश बाबू ने सुगत रायचौधुरी को पकड़ा। सिगरेट ऑफर कर उन्होंने कहा—कहिए जनाब कब आ रहे हैं हमारे घर ?

सुगत के पोशाक-पहनावे में बड़ा सलीका था। क्रीम लगाकर उसने बालों में कंघी की थी, ताकि एक भी बाल हवा में न उड़े। दाढ़ी चिकनी बनायी गयी थी, जिससे उसके गोरे गालों में नीलापन झलकने लगा था। सूट की कटिंग विलायती थी और जूतों की पालिश शीशे की तरह चमकदार। यानी इंगलैंड-रिटर्ण्ड होने पर भी उसमें थोड़ा पुरानापन झलकता है, क्योंकि आजकल बहुत-से इंगलैंड-रिटर्ण्ड लड़के असली अंग्रेजों की तरह परिपाटी की उतनी परवाह नहीं करते। फिर सुगत बड़ा विनयी और भद्र था। उसकी बातचीत से उसके शालीन रुचि-बोध का पता चलता था।

सुगत हँसकर बोला—किसी दिन आ जाऊँगा....

—किसी दिन नहीं, कल ही आइए। कल आप हमारे घर चाय पीजिये। आज तो आप थियेटर जा रहे हैं, मेरी भतीजी वहां नहीं आ सकेगी। कल आप जरूर हमारे यहाँ आइए....

सुगत जरा सोचकर बोला—कल ? कल रहने दीजिए, कल मुझे एक ....

—फिर परसों ?

—परसों ? लेकिन परसों भी—इस हफ्ते रहने ही दीजिए न।

—क्यों, क्या बात है बताइए न ? जब भी मैं आपसे अपने घर चलने के लिए कहता हूँ, तभी आप टाल क्यों देते हैं ? क्या आप डरते हैं ?

कोई जवाब दिये बिना सुगत चेहरे पर मुस्कराहट लिये चुपचाप खड़ा रहा। लेकिन परेश बाबू ने छोड़ा नहीं। उन्होंने फिर कहा—साफ साफ बताइए न, कहीं और तय हो चुका है क्या ? अगर ऐसा है तो बात अलग है, लेकिन यदि ऐसा नहीं है तो एक बार मेरी भतीजी को देखने पर आप समझ ही जायेंगे। अपनी भतीजी है, इसलिए मैं नहीं कह रहा हूँ। हाँ, तो बताइए, कहीं बात पक्की हो चुकी है ?

—नहीं, नहीं ऐसी कोई बात नहीं है।

—तो क्या शादी न करने का इरादा है ?

—जी नहीं, ऐसी भी कोई कसम नहीं खायी है।

—तो फिर लड़की देखने के मामले में इतनी टाल-मटोल क्यों ? देखिए जनाब, यह इंगलैंड नहीं है दिस इज़ बेंगाल ! चटपट शादी कर लीजिए, इस समय आप उनतीस साल के हैं, यही तो सही वक्त है ! क्या फिर विलायत भागने की बात सोच रहे हैं ? बहुत-से लोग ऐसा करते हैं....

—शायद मैं भी चला जाऊँ।

—क्या वहाँ जाकर मेम से शादी करेंगे ? वैसा करेंगे तो जिन्दगी भर परेशान रहेंगे—मैं अभी से बता देता हूँ...

सुगत अब जोर से हँसकर बोला—खैर जो आप कहिए, लेकिन हम लोगों को मेम से ही शादी करनी चाहिए। बंगाली लड़कियों से कैसे शादी होती है, यही मैं नहीं समझ पा रहा हूँ। टु बी फ्रैंक, लड़की-ओड़की देखना मुझे पसंद नहीं है। लेकिन इसके अलावा और कैसे शादी हो सकती है ? किसी लड़की से जान-पहचान होने का कोई चारा भी तो नहीं है। फॉरेन जाने से पहले मैं जिन लड़कियों को जानता था, उनमें से

बहुतों की शादी हो चुकी है, जिनकी नहीं हुई, अब वे शादी के लायक नहीं भी रहीं। अब दूसरी लड़कियों से जान-पहचान करने का उपाय नहीं है। हाँ, उनके माँ-बाप के जरिये ऐसा हो सकता है, लेकिन वह ऐब्सर्ड है !

परेश बाबू ने ध्यान से सुगत की सारी बातें नहीं सुनी थीं। सिर्फ एक-दो बार उन्होंने सुगत को बीच में टोकने की कोशिश की थी। लेकिन सुगत की बात खत्म होते ही वे बोले—आप उस तरह लड़की देखने की बात क्यों सोच रहे हैं ? अब वह प्रिमिटिव रिवाज कहाँ है ? आप हमारे घर आयेंगे, चाय पियेंगे, मेरी भतीजी से जान-पहचान हो जायेगी और आप उससे बात करेंगे। किसी के घर कोई जाता है तो क्या जान-पहचान नहीं होती ? क्या आप स्वयं उससे शादी की बात छेड़ेंगे ?

—लेकिन पहले से अगर इरादा मालूम रहे तो अच्छा रहता है। है न ?

—इतना सोचने पर काम नहीं चलता। आप आकर देखिए न ! अब बताइए कि कब आ रहे हैं ? तो परसों ही तय रहा ?

सुगत ने अब जरा कठोर होकर कहा—नहीं, अभी रहने ही दीजिए....

फिर सुगत उठकर अपने कमरे में चला गया।

अपने कमरे में जाकर काम शुरू करने से पहले सुगत हथेली पर ठुड्डी टिकाये थोड़ी देर मुस्कराता-सा बैठा रहा। उसके बाद उसने ड्रॉयर से एक नीला लिफाफा निकाला। अपने देश में लौटने के बाद उसे किसी अपरिचित लड़की से यही पहली चिट्ठी मिली थी। उसने फिर उस चिट्ठी को पढ़ा। लिखावट अच्छी नहीं है। पता चल जाता है कि जोश में आकर यह छोटा-सा खत लिखा गया है।

सुगत बाबू,

मेरे पिताजी और चाचाजी मेरी शादी के लिए बड़े बेचैन हो गये हैं। मैं अपनी चाचीजी से अक्सर आपका नाम सुनती हूँ। मतलब साफ

है। लेकिन मैं आपसे एक बात बता देना चाहती हूँ कि मेरी शादी पहले से तय हो चुकी है। मेरी शादी वहीं होगी—उसमें कोई रद्दो-बदल नहीं हो सकता! आप अगर मेरी थोड़ी-सी मदद करें तो मैं बहुत सारी झंझटों से बच सकती हूँ। आपको मैं नहीं जानती, फिर भी आपसे अनुरोध कर रही हूँ कि आप कभी मेरे घर मत आइए और मेरे लिए विषम स्थिति पैदा मत कीजिए। मैं आशा करती हूँ कि आपको अपनी पसंद मुताबिक पत्नी मिल जायेगी और आप जीवन में सुखी भी होंगे। इसलिए आप मुझे भी सुखी होने दें। एक अनुरोध और है—कृपा करके इस का जिक्र किसी से मत कीजिए।

—जयश्री मुखर्जी

चेहरे पर विचित्र उत्सुकता लिये सुगत देर तक उस खत की तरफ देखता रहा। यों तो वह बड़ा शिवैलरस युवक है, किसी और से प्यार कर रही किसी तरुणी से जोर-जबर्दस्ती करने की बात कभी उसके मन में नहीं आती। इसलिए कहना नहीं पड़ेगा कि वह कभी उस लड़की के रास्ते में रोड़ा नहीं अटकायेगा। लेकिन उस लड़की के चाचा उसे बहुत ज्यादा परेशान कर रहे हैं—खैर, वह भी धीरे-धीरे ठीक हो जायेगा।

लेकिन एक बात है, सुगत को उस लड़की को एक बार देखने की बड़ी इच्छा हुई। इस चिट्ठी से सुगत को पता चल गया था कि वह लड़की बड़ी तेजस्विनी है और उसका मामला बड़ा इंटरेस्टिंग। क्या उस लड़की को एक बार देखा नहीं जा सकता? खैर, देखा जायेगा।

विष की क्या जलन है, वह कैसे समझेगा जिसे साँप ने कभी डँसा न हो ?

—अनुराधा, तुम मुझे थोड़ा-सा जहर लाकर दे सकती हो ?

—रूमा भाभी, आप ऐसी बात क्यों कह रहीं हैं ?

—नहीं अनुराधा, अब मुझे जीने की कतई इच्छा नहीं है। इस तरह जिंदा रहने का भी क्या मतलब हो सकता है ? मेरा जो होना था हो चुका है, अब मैं उस आदमी को बराबर तकलीफ ही दे रही हूँ।

—आप फिर ठीक हो जायेंगी और तब सब कुछ ठीक हो जायेगा।

—मुझे झूठा आश्वासन देने से कोई फायदा नहीं है ! मैं सब जानती हूँ। यों तो मैं ठीक हूँ लेकिन मेरी रीढ़ कभी जुड़ नहीं सकती। मैं कभी सीधी खड़ी नहीं हो सकती।

—आजकल चिकित्सा के क्षेत्र में कितनी तरक्की हुई है। आप शायद नहीं जानतीं, वरना ऐसा....

—लेकिन वह सब मेरे लिए नहीं है ! तुम बस मुझे थोड़ा-सा जहर लाकर दे दो...तुम पर कोई दोष नहीं लगेगा, मैं चिट्ठी लिखकर छोड़ जाऊँगी कि मैं अपनी इच्छा से...

उस परिस्थिति को थोड़ा हलका बनाने के लिए अनुराधा ने हँसकर कहा—जहर कहाँ मिलता है, यह मुझे कैसे पता चलेगा ? जहर अगर मिल सकता तो मैं ही न खा लेती !

—तुम क्यों जहर खाओगी ? तुम्हें क्या तकलीफ है भला ?

—है। कभी-कभी मुझे भी जहर खाने की इच्छा होती है।

अनुराधा अब भी हँस रही थी, लेकिन रूमा भाभी के चेहरे पर मुस्कान नहीं थी। सूखे, पीला पड़े चेहरे पर दो आँखें भर दमक रही थीं। रूमा भाभी किसी समय सचमुच बड़ी खूबसूरत थीं, वह अब भी उन्हें

देखने से पता चल जाता है। काफी लम्बी हैं। उनके शरीर का ढाँचा ही बताता है कि कभी उनका स्वास्थ्य बड़ा अच्छा था।

रूमा भाभी ने फिर बड़ी बेचैनी से कहा—नींद की कुछ गोलियों का भी जुगाड़ नहीं कर सकतीं? अगर वही लाकर मुझे दो तो तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा, बल्कि तुम किसी का सच्चा उपकार ही करोगी। मैं तुम्हारे भैया से भी यही कहती हूँ...

—क्या आप सचमुच मरना चाहती हैं? मर जाने पर तो सब कुछ खत्म हो जाता है। उसके बाद कुछ भी नहीं रहता!

रूमा भाभी ने मुँह फेरकर बाहर खिड़की की तरफ देखा और उसके बाद भर्रायी आवाज में मानो अपने आपसे से कहा—क्या पता, उसके बाद और कुछ है या नहीं। लेकिन कभी-कभी मैं सपना देखती हूँ कि फिर मैं छोटी बन गयी हूँ, ठीक वैसी जैसी मैं फ्रॉक पहनकर पहले छत पर बैडमिंटन खेला करती थी...नहीं अनुराधा, अब इस तरह जिंदा रहने को मेरा मन नहीं करता!

—क्या आप अपनी लड़की के बारे में भी नहीं सोचतीं? अभी रिनी कितनी छोटी है....

रूमा भाभी की आँख की कोर से एक बूंद आँसू बड़ी धीमी गति से ढुलक गया। हथेली की पीठ से उसे पोंछकर वे बोलीं—जिंदा रहकर ही मैं उसके लिए क्या कर रही हूँ?

इधर-दो-तीन दिनों से रूमा भाभी बहुत ठीक हैं। शायद इसीलिए अब उन्हें मरने की इच्छा ज्यादा सता रही है! संसार के रूप-रस-गंध की बात उन्हें बार-बार याद आ रही है। जब उनकी तबीयत ज्यादा खराब रहती है, तब वे प्रणवेश दा को ज्यादा झिड़कती हैं। अनुराधा ने यह देखा है। हालांकि प्रणवेश दा बड़े सीधे हैं और कभी वे जोर से एक शब्द नहीं बोलते।

रूमा भाभी के लिए अनुराधा के मन में बड़ी सहानुभूति है, फिर भी एक बीमार व्यक्ति से मौत के बारे में देर तक बातें करते रहना उसे

अच्छा नहीं लगता। प्रणवेश दा के लिए भी उसके मन में हमदर्दी है, लेकिन प्रणवेश दा से बचकर चले बिना कोई चारा भी तो नहीं है।

रूमा भाभी ने पूछा—रिनी कहाँ है? बहुत देर से उसकी आवाज नहीं मिली। आजकल तो वह मेरे पास आती ही नहीं।

अनुराधा बोली—रिनी ऊपर है, हमारे घर में खेल रही है।

—वह जरूर तुम लोगों को परेशान करती होगी।

—नहीं, नहीं, वह कभी किसी को परेशान नहीं करती—बड़ी अच्छी लड़की है। मैं जाकर अभी उसे भेज रही हूँ।

रूमा भाभी के पास से उठ जाने का मौका पाकर अनुराधा मन ही मन खुश हुई। इस कमरे में आने-जाने के लिए प्रणवेश दा का कमरा पार करना पड़ता है। प्रणवेश दा कुर्सी पर आराम से बैठकर कोई मोटी किताब पढ़ रहे थे। अनुराधा उनसे कुछ कहे बिना चली जा रही थी, लेकिन उन्होंने किताब पर से निगाह हटाये बिना कहा—अनुराधा, सुनो...

अनुराधा ने तो कोई गलती नहीं की, फिर क्यों वह चोरी से दबे पाँव भागी जा रही थी? वह ठिठककर खड़ी हो गयी और बोली—कहिये!

—जरा इधर आओ।

—कहिए न।

—इधर आओ।

प्रणवेश दा की आवाज में न जाने क्या रहता है, जिसे आसानी से टाला नहीं जा सकता। दूर खड़े रहकर शांत व्यक्तित्व वाले उस पुरुष से नहीं कहा जा सकता कि नहीं, नहीं, मुझे काम है, अभी मैं बात नहीं कर सकती। जितना हो सका, स्वाभाविक बनने की कोशिश कर अनुराधा आगे बढ़ी और टेबुल से थोड़ा फासला रखकर खड़ी हो गयी। फिर वह बोली—कहिए?

बड़े आराम से प्रणवेश दा ने किताब को मोड़कर टेबुल पर रख दिया।

अनुराधा ने देखा कि वह किताब कांट की लिखी Critique of Pure Reason थी। मशीनरी की विदेशी फर्म के सेल्स डिपार्टमेंट में जो आदमी नौकरी करता हो, उसे ऐसी नीरस कही जानेवाली किताब पढ़ने का शौक क्यों है, यह अनुराधा किसी तरह नहीं समझ सकी। शायद प्रणवेश दा कुछ और वनना चाहते थे, शायन वचपन में उनके मन में कुछ और वनने की महत्त्वाकांक्षा रही हो, लेकिन जीवन का वह स्वप्न भंग हो गया हो।

प्रणवेश दा ने अनुराधा की तरफ देखा। उनकी आँखों में वही सर्व-ग्रासी दृष्टि थी जिससे अनुराधा का सारा शरीर सिहर उठता है। थोड़ी देर प्रणवेश दा उसी तरह देखते रहे। उनका सारा शरीर मानो सुन्न पड़ गया था। थोड़ी देर के लिए उनमें कोई हरकत नहीं रही। उसके वाद उनका वह आवेश दूर हुआ और वे सँभलकर बैठ गये। फिर दवी लंवी साँस छोड़कर वे बोले—दो दिन से तुम्हें देखा नहीं।

—कल भी तो मैं आयी थी।

—दोपहर को तो मैं नहीं रहता। लेकिन तुम जब आती हो, मैं समझ पाता हूँ। मुझे पता चल जाता है।

—क्या आप मुझसे कुछ कहेंगे?

—हाँ।

लेकिन प्रणवेश दा ने कुछ नहीं कहा। टेबुल से किताव नीचे गिर पड़ी तो आवाज हुई। प्रणवेश दा ने झटपट उसे उठा लिया और वड़े जतन से उस पर लगी धूल झाड़ी। मानो उनकी प्रिय पुस्तक इससे गंदी हो गयी थी। उसके वाद उन्होंने अनुराधा की तरफ देखा।

—अरे, आप तो कुछ नहीं कह रहे हैं? अव मैं जाऊँगी।

—अरे हाँ, जरा रुको।

ड्रायर खोलकर प्रणवेश दा ने कागज का छोटा-सा वक्सा निकला। उसे अनुराधा की तरफ वढ़ाकर उन्होंने कहा—देखो तो, यह कैसी चीज है? आज एकाएक खरीद लिया...

वक्सा देखकर ही अनुराधा पहचान गयी थी। उसने उसमें से विदेशी

परफ्यूम की शीशी निकाली ! फिर उसने एक नारी की स्वाभाविक उत्ते-जना से कहा—वाह ! यह तो बढ़िया चीज है ! इण्टिमेट ! इसकी खुशबू बहुत बढ़िया होती है !

प्रणवेश दा बोले—बढ़िया है न ? खैर, मैं तो यह सब सेंट-ओंट पहचानता नहीं।

—यह तो इम्पोर्टेड है ! सभी इसका नाम जानते हैं। आपकी रुचि की तारीफ करनी पड़ती है।

—सचमुच इसे बढ़िया कह रही हो ? या यों ही....

उस बक्से को लौटाने के लिए हाथ बढ़ाकर अनुराधा बोली—नहीं, सचमुच बढ़िया है....

प्रणवेश दा ने उस बक्से को वापस नहीं लिया, बल्कि काफी शरमाते हुए कहा—यह मैं तुम्हारे लिए लाया हूँ।

अनुराधा का चेहरा एकाएक लाल हो गया। उसने तीखे स्वर में कहा—क्यों ? मेरे लिए क्यों ले आये ?

प्रणवेश दा ने हँसने की कोशिश कर कहा—क्यों, इसके पीछे कोई तर्क नहीं है। कांट ने भी कहा है कि तर्क से संसार के सारे रहस्यों का भेद नहीं खुलता।

—ठीक है, लेकिन मैं क्यों लूँगी ? आप यह भाभी को दीजिए। भाभी खुश होंगी।

प्रणवेश दा ने ड्रायर खोलकर सेंट का उसी तरह का दूसरा बक्सा निकाला और कहा—मैं दो लाया हूँ। एक रूमा के लिए और दूसरा तुम्हारे लिए।

—दो-दो ले आये ! काफी पैसा लगा होगा ?

—नहीं, मुझे कुछ सस्ते में मिल गये थे।

—फिर दोनों ही भाभी को दीजिए, मैं नहीं लूँगी।

—क्यों ?

—मैं तो परफ्यूम इस्तेमाल ही नहीं करती।

—फिर तुम इसका नाम कैसे जान गयीं ? देखते ही पहचान गयीं...

—यह तो सभी लड़कियाँ जानती हैं ! मेरी जान-पहचान की कई लड़कियाँ यह सेंट इस्तेमाल करती हैं।

—अनुराधा, अगर तुम इसे ले लोगी तो मुझे बड़ी खुशी होगी। मैं तुम्हारी बात सोचकर ही इसे लाया हूँ।

प्रणवेश दा के स्वर में ऐसी दर्दभरी प्रार्थना थी कि अनुराधा मन ही मन काँप गयी। लेकिन दूसरे ही क्षण उसने अपने को कठोर बना लिया। क्या रूमा भाभी बगल के कमरे से यह सब सुन नहीं रही हैं ? मनुष्य का कोई एक अंग दुर्बल हो जाने पर अक्सर उसके दूसरे अंग अधिक सबल हो जाते हैं। रूमा भाभी तो कम से कम इतना समझ ही रही होंगी कि अनुराधा रिनी को बुलाने के लिए चली थी, लेकिन अभी तक उस कमरे में है।

फिर उसी स्वर में प्रणवेश दा ने कहा—तुमको यह देना चाहा तो क्या कोई गलत काम हुआ ?

अनुराधा कठोर स्वर में बोली—लेकिन मैं क्यों आपसे इतनी कीमती चीज़ लूं ?

क्योंकि यह तुम्हारे लायक है। तुम कितनी खूबसूरत हो, अगर यह सेंट लगाकर तुम्हें जरा भी खुशी होगी तो मैं अपने को धन्य समझूंगा।

—नहीं ! आप मुझसे इस तरह की बातें मत कीजिए !

—ठहरो, चली मत जाओ। क्या यह तुम नहीं लोगी ?

—कह तो दिया कि नहीं।

—मैं यह तुम्हारे लिए लाया था। अब इसके यहाँ रहने की कोई जरूरत नहीं है।

प्रणवेश दा ने शीशी खोलकर बेहिचक सारा सेंट वेस्ट पेपर बास्केट में उड़ेल दिया। फिर शीशी भी उन्होंने वहीं फेंक दी।

अनुराधा ने कभी प्रणवेश दा को नाराज होते नहीं देखा था। लेकिन इस समय दारुण क्रोध से उनके दोनों जबड़े कड़े पड़ गये थे। फिर भी

उनका क्रोध मानो खुशबू बनकर सारे घर में फैल गया। विदेशी परफ्यूम की भीनी मादक सुगंध से हवा महमहा उठी। प्रणवेश दा कुर्सी छोड़कर एक बार भी नहीं उठे। बस, वे तीव्र दृष्टि से अनुराधा की तरफ देखते रहे। उस दृष्टि ने और सुगंध के उस झोंके ने अनुराधा को अंदर तक झकझोर दिया। वह झटपट उस कमरे से बाहर निकल गयी।

अनुराधा ट्राम में चढ़ने जा रही थी कि उसने देखा कि अंजन तेजी से उसी तरफ आ रहा है। अनुराधा ट्राम में चढ़ गयी। उसके बाद चलती ट्राम में गिरते-पड़ते अंजन भी चढ़ गया। उसने खूब हँसकर पूछा—कहाँ जा रही हैं टुकू दी ?

—एमहर्स्ट स्ट्रीट की तरफ जा रही हूँ। वहाँ मेरी एक मौसी रहती हैं।

दो लोगों ने अनुराधा को देखकर अँगड़ाई ली। फिर वे एक-दूसरे की तरफ देखकर लेडीज सीट छोड़कर खड़े हो गये। अनुराधा बैठ गयी तो और किसी को बैठने का मौका न देकर अंजन चट से उसकी बगल में बैठ गया। फिर उसने कहा—एमहर्स्ट स्ट्रीट जा रही हो, लेकिन बस से न जाकर ट्राम से क्यों ?

अनुराधा अंजन से बात करना नहीं चाहती थी। दिनों दिन अंजन बहुत ज्यादा बिगड़ता जा रहा है। लेकिन ऐसे मामूली सवालों का जवाब दिये बिना रहा भी तो नहीं जा सकता ! अनुराधा बोली—बस के लिए काफी देर से खड़ी थी, लेकिन मिली नहीं। इसीलिए ट्राम में बैठ गयी। एसप्लैनेड से बदल लूँगी। तुम कहाँ जा रहे हो ?

—यों ही हवाखोरी करने निकल पड़ा।

मानो सारी हवा खिड़की के पास है और ट्राम के अन्दर जरा भी हवा नहीं है। मानो इसी हवा के लिए अंजन अनुराधा की तरफ ज्यादा खिसककर बैठ गया।

कंडक्टर के आने पर अंजन पैसा निकालने लगा, लेकिन अनुराधा को मजबूर होकर दो टिकट लेने पड़े। फिर थोड़ी देर बाद अंजन को मानो याद पड़ गया और उसने अनुराधा से कहा—अभी आप एमहर्स्ट स्ट्रीट जायेंगी ? क्या दिमाग खराब हो गया है ?

—क्यों ? क्या हुआ है ?

—कालेज स्ट्रीट में काफी गड़बड़ है। देख नहीं रही हैं कि उधर की सारी बसें बंद हैं ?

—सच ?

—सच नहीं तो क्या मैं मन से बनाकर कह रहा हूँ !

घबड़ाहट के मारे अनुराधा की भौंहें सिकुड़ गयीं। एसप्लैनेड पहुँचकर वह समझ गयी कि अंजन की बात शायद झूठ नहीं है। वहाँ ट्रामों-बसों में बड़ी अव्यवस्था थी। कालेज स्ट्रीट की तरफ कोई भी ट्राम या बस नहीं जा रही थी। हालाँकि दूसरे रास्ते से भी एमहर्स्ट स्ट्रीट जाया जा सकता है, लेकिन उस रास्ते का भी क्या हाल है क्या पता ? अनुराधा को किसी तरह की जोखिम उठाने की इच्छा नहीं हुई।

अंजन अब भी साथ लगा हुआ था। उसे भगाने के अंदाज में अनुराधा ने कहा—अच्छा, मैं चली....

—अभी आप कहाँ जायेंगी ? चलिए, मैं आपके साथ चल रहा हूँ।

—मैं कहीं नहीं जाऊँगी।

—अरे, घर तो लौटेंगी ? चलिए, मैं आपके साथ चलूँगा....

—क्यों ? तुम तो हवाखोरी के लिए निकले हो, हो गयी हवाखोरी ?

—टुकू दी, चलिए न, जरा आउट्रम घाट की तरफ चला जाय। आपको आठ बजे तक घर पहुँचा दूँगा !

अनुराधा ने हँसकर पूछा—अच्छा अंजन, क्या तुम्हारी कोई गर्ल फ्रेंड नहीं है ? तुम्हारी उम्र के लड़कों....

झट से अंजन ने कहा—आपका भी तो कोई बॉय फ्रेंड नहीं है !

—तुमने कैसे जान लिया ?

—अच्छा, चलिए तो, जरा आउट्रम घाट पर जाकर बैठा जाय। वहीं बैठकर यह सब बातें होंगी। वहाँ ऐसी फर्स्ट क्लास हवा चलती है कि पूछिए मत। फिर कोई खर्चा भी नहीं!

अनुराधा बोली—देख रहे हो, कैसे बादल छाये हुए हैं? ऐसे वक्त मुझे हवाखोरी की इच्छा नहीं है, फिर तुमसे उस विषय पर बात भी मैं नहीं करना चाहती। अभी मैं उस टेलीफोन बूथ पर जाकर टेलीफोन करूँगी—तुम भागो तो!

—क्यों मुझे इस तरह भगा रही हैं? क्या और किसी से अपायंट-मेंट है?

—हाँ, है।

—हाँ, हाँ, मैं सब समझता हूँ। वैसी कोई बात तो मुझे लगती नहीं!

—कैसी बात?

—अरे, चलिए तो, मैं आपके साथ टेलीफोन बूथ तक चल रहा हूँ....

बेदाम के बंदे की तरह अंजन अनुराधा के साथ लगा रहा। उसने काले रंग का तंग पेंट पहन रखा था, कमीज भी वैसी ही तंग और कान की लोलकी तक खत। खैर, यह सब बुरा नहीं लगता। सिर्फ उसके होंठों में थोड़ा चालाक बनने का-सा खिंचाव न होता तो उसे सुदर्शन कहा जा सकता था। उम्र में वह अनुराधा से छोटा है, लेकिन यह मानो उसे याद नहीं रहता। कम से-कम उसकी बातचीत से तो ऐसा ही लगता है। इसी-लिए अनुराधा उसे पसंद नहीं करती।

लेकिन इस समय अंजन से छुटकारा पाने का और कोई उपाय नहीं था। एसप्लैनेड भीड़ से भरी है, फिर भी अनुराधा उससे डाँटकर नहीं कह सकती कि तुम चलो यहाँ से! मेरे पास से हटो!

अब अनुराधा को लगा कि इससे अच्छा तो किसी लड़के से यों ही प्यार का खेल खेलना रहता! जब वह कालेज में पढ़ती थी तब रजत नाम का लड़का उसके पीछे बहुत पड़ता था! रजत का डील-डौल काफी लंबा-चौड़ा था। अगर अनुराधा उसी को प्रश्रय देती तो अच्छा रहता।

इस तरह प्यार करने से लड़कियों को सड़क पर चलते समय कम से कम एक अंगरक्षक तो मिल जाता है। उसके बिना आजकल लड़कियों का अकेले चलना वाकई मुश्किल है। अगर ट्राम या बस में भीड़ हो तो मन-चले लोग बदन से सटकर खड़े हो जाते हैं। अकेले सिनेमा देखने जाना भी मुश्किल होता है। अकेले टैक्सी से कहीं जाना तक खतरे से खाली नहीं है। लड़कियों के लिए बस-स्टॉप पर देर तक खड़े रहना भी संभव नहीं है। अगर रजत जैसा कोई अभी साथ रहता तो क्या अंजन उसके पास आने की हिम्मत करता !

अनुराधा टेलीफोन कर रही थी और बूथ के बाहर खड़ा अंजन हीरो जैसा सिगरेट पी रहा है। टेलीफोन कर लेने के बाद अनुराधा बाहर निकली तो अंजन ने बड़े सहज ढंग से कहा—चलिए !

—कहाँ ?

—चलिए तो सही ! आज मैं आपको कुछ खिलाना चाहता हूँ....

—मैं कहीं नहीं जाऊँगी। अभी मुझे सीधे घर जाना है।

—अच्छा टुकू दी, यह तो बताइए कि आप मुझे देखते ही क्यों ऐसा करती हैं ? क्या मैं कोई आवारा लड़का हूँ। अभी तो आप एमहर्स्ट स्ट्रीट जा रही थीं—वहाँ से लौटने में कम से कम दो घंटे लग जाते। फिर आप अभी से घर लौटकर क्या करेंगी ? अगर घूमने का मन न हो तो चलिए, कोई पिक्चर ही देखी जाय !

एकाएक अनुराधा ने विचार बदल लिया। उसने कहा—ठीक है, चलो। कोई फिल्म देखी जाय, लेकिन टिकट का पैसा मैं दूँगी।

अंजन खुश होकर बोला—नो ऑब्जेक्शन ! आजकल रुपये-पैसे के मामले में मैं भी बड़ा टाइट चल रहा हूँ। खैर, कोई नौकरी मिल जाय तो....

—क्या नौकरी के लिए कहीं कोशिश कर रहे हो ?

—अरे नहीं ! आजकल तो सिर्फ बेवकूफ लोग नौकरी के लिए कोशिश करते हैं। उससे सिर्फ पैसे और एनर्जी की बरबादी होती है।

बस, कई लोगों से कह रखा है, अगर नौकरी लगनी होगी तो उसी से लग जायेगी !

—सिर्फ लोगों से कह रखने से क्या नौकरी मिलती है ?

—इसके अलावा और कैसे नौकरी मिलती है ? यह समझ लीजिए कि कुछ लोगों का मर्डर किये बिना नौकरी के लिए जगहें खाली होने का कोई चांस नहीं है। खैर, आप लोगों को कोई परेशानी नहीं है। अब भी लड़कियों को फटाफट नौकरी मिल जाती है !

—कभी नहीं। मेरे साथ जो लड़कियाँ पढ़ती थीं, उनमें से कई अभी तक बेकार हैं। कइयों को तो नौकरी की इतनी सख्त जरूरत है कि....

यह सब बस कहने के लिए है। लड़कियाँ तो सिर्फ शौकिया नौकरी करती हैं !

—तुम लोगों का ख्याल बड़ा अच्छा है ! मैं जो नौकरी करती हूँ, वह भी शौकिया है न ?

—आपके पिताजी तो अभी नौकरी करते हैं ?

—तुम्हारे पिताजी भी तो नौकरी करते हैं अंजन। मैं यह इनकार नहीं करती कि तुम्हारे लिए नौकरी बहुत जरूरी है, लेकिन अभी जो तुमने मर्डर करने की बात कही, उसी तर्क के सहारे अगर कोई मेरे पिताजी और तुम्हारे पिताजी का मर्डर कर दे तो ?

—बस, बस, अब वह बात रहने दीजिए। देर हो जायेगी तो टिकट नहीं मिलेगा...

सिनेमा हॉल में पहुँचकर शुरू में अनुराधा को सब कुछ बड़ा अच्छा और स्वाभाविक लगा था। इंटरवल में अंजन अनुराधा के लिए पॉप कॉर्न खरीदकर लाया और इधर-उधर की बातें होने लगीं।

फिल्म शुरू होने के बाद घने अँधेरे में अंजन ने अनुराधा के कंधे पर अपना हाथ रख दिया। अनुराधा को यह बात बुरी लगी, लेकिन उसने कुछ कहा नहीं। वह जरा हिल-डुलकर सीधी बैठ गयी, शायद इसी से अंजन अपना हाथ हटा ले। लेकिन उसने हाथ नहीं हटाया। बल्कि थोड़ी

देर बाद अनुराधा ने अपनी बाँह पर अंजन की उँगली का स्पर्श महसूस किया। किसी कीड़े की तरह वह उँगली रेंगकर आगे सरकने लगी। अनुराधा ने तेज निगाह से अंजन की तरफ देखा, लेकिन दोनों की आँखें नहीं मिलीं। मानो अंजन को भी कुछ भी पता नहीं था और वह बड़े ध्यान से फिल्म देख रहा था।

अनुराधा ने जबर्दस्ती अंजन का हाथ हटा दिया। उस वक्त तो हाथ हट गया, लेकिन एक-दो मिनट बाद वह फिर लौट आया। अब और बर-जोर होकर। इस बार अंजन ने अनुराधा की बाँह जकड़ ली। असहनीय क्रोध और पश्चात्ताप से अनुराधा को क्रोध उमड़ आया। अब वह ज्यादा हिलने-डुलने की हिम्मत न कर सकी। कहीं अगल-बगल के लोगों को न पता चल जाय। अनुराधा ने अंजन की हरकत को स्वाभाविक ढंग से स्वीकार कर लेने की कोशिश की, लेकिन उसका सारा ध्यान अपनी दायीं बाँह पर कसे एक कठोर हाथ की तरफ लगा रहा।

परदे पर पाँच गुंडे घुड़सवार नायक का पीछा कर रहे थे। कितना भयानक रोमांचकारी दृश्य था और कितनी तेज गति की नाटकीयता। इधर अंजन की दोनों उँगलियाँ बहुत धीरे-धीरे अनुराधा की छाती की तरफ बढ़ रही थीं। और अंजन की आँखें परदे पर लगी थीं। अनुराधा को रुलाई आ गयी। ये सब आखिर क्या चाहते हैं? वे सब लड़कियों को समझते क्या हैं।

अंजन की उँगलियाँ अनुराधा की छाती तक पहुँच गयीं तो अनुराधा लाज-शरम भूलकर आगे की तरफ झुक गयी। एक झटके में उसने अंजन का हाथ हटा दिया। अब अंजन एक बार ललचायी आँखों से अनुराधा की तरफ देखकर मुस्कराया। अनुराधा ने दोनों आँखों से आग बरसा-कर अंजन की तरफ देखा, लेकिन उस अँधेरे में अंजन उस आग को कितना देख सका कहा नहीं जा सकता।

अब थोड़ी देर अंजन शांति से फिल्म देखता रहा। अनुराधा फिल्म की कहानी का सिलसिला खो चुकी थी। अब उसे कुछ भी अच्छा नहीं

लग रहा था। वह बस मन ही मन सोच रही थी कि कब यह मुई फिल
खत्म होगी। अनुराधा सावधान होकर बैठ गयी। अब वह किसी कीम
पर सीट की पीठ से टिककर नहीं बैठेगी!

गोली लगते ही नायक घोड़े से गिर पड़ा और हॉल में बैठे दर्शकों
से बहुतों के मुँह से दबी चीख निकली। ठीक उसी वक्त अंजन के ए
हाथ ने अनुराधा की जाँघ दबोच ली। मानो अंजन भी डर गया हो
अनुराधा एकदम सिहर उठी। किस तरह एक मर्द ने उसकी जाँघ पक
ली। उसने जबर्दस्ती अंजन का हाथ हटाना चाहा, लेकिन वह ऐसा
कर सकी। अंजन ने अपनी फौलादी उँगलियों से उसकी जाँघ को पक
रखा था। वह जबर्दस्ती करके भी उन उँगलियों को नहीं हटा पा रह
थी। अपने अंदर के गुस्से से ज्यादा अनुराधा को यह सोचकर शर्म हो
लगी कि आसपास का कोई अगर देख ले तो उसे कितनी बुरी लड़
समझेगा।

अनुराधा का चेहरा तमतमा उठा, उसकी आँखें जलने लगीं औ
उसकी जाँघ पर मानो जलन होने लगी। आखिर वह क्यों फिल्म देख
आयी? ऐसे लड़के पर विश्वास करके उसने वाकई बड़ी भारी गलत
की। उसने सोचा था कि यह लड़का रोज पीछे पड़ता है, इसलिए ए
दिन उसके साथ सिनेमा देख लेने से क्या बिगड़ जायेगा! लेकिन अंज
ने असल में सिनेमा देखना नहीं चाहा था। आउट्रम घाट जाने पर भ
वह वहाँ सिर्फ घूमने-टहलने नहीं जाता। अनुराधा किसी तरह उसक
हाथ हटा नहीं सकी। जोर से चिकोटी काटने पर भी उसने हाथ नह
हटाया, सिर्फ मुँह फेरकर मुस्करा दिया। मजबूर होकर अनुराधा
उसी जगह उसका हाथ जोर से पकड़े रखा, ताकि वह हाथ और किस
तरफ न जाय! सिल्क की साड़ी से ढँकी अनुराधा की जाँघ पर ए
बदतमीज लड़के की उँगलियाँ चुभती रहीं।

शो खत्म होने पर सिनेमा हॉल से चुपचाप दोनों निकल आये
थोड़ी देर बाद भीड़ से निकलकर अंजन ने स्वाभाविक स्वर में, स्वाभावि

हँसी के साथ कहा—बड़ी अच्छी फिल्म थी। पॉल न्यूमैन ने बड़ा अच्छा काम किया है। आपको यह पिक्चर कैसी लगी ?

अनुराधा ने कोई जवाब नहीं दिया।

—टुकू दी, आपको यह फिल्म अच्छी नहीं लगी ?

—अंजन, अब तुम कभी मुझसे बात मत करना !

—अरे ! क्या हो गया है ?

बाहर की रोशनी में अनुराधा ने अंजन के चेहरे की तरफ अच्छी तरह से देखा। उसके चेहरे पर किसी तरह का अपराध-बोध नहीं था। सिर्फ हलका-सा कौतुक था। मानो यह भी एक खेल था। उसी तरह हलके स्वर में अंजन ने पूछा—थोड़ी चाय पीकर चलेंगी ?

—नहीं।

—आपको देर हो रही है ? ठीक है, चलिए टैक्सी ले ली जाय। आपने फिल्म दिखा दी, मैं टैक्सी का किराया....

—जहाँ तुम्हारा मन हो जाओ ! मैं बस से जाऊँगी....

—आप एकाएक मुझ पर इस तरह बिगड़ क्यों गयीं ? क्या हो गया है ? नथिंग सीरियस !

—अंजन, यह तो बताओ कि तुम मुझे क्या समझते हो ?

—क्या समझूँगा ?

—मैं तुमसे उम्र में बड़ी हूँ, तुम मुझे दीदी कहते हो, फिर भी इस तरह की बदतमीजी....

—अच्छा, यह बात है ! अरे, लड़कियाँ भी तो कितने लड़कों को भैया कहती हैं और उन्हीं के साथ सब कुछ चलता रहता है....

—अब मैं तुमसे कभी बात करना न

को देखने पर...

अंजन ने आँखें मटकाकर कहा—वाह

बाजा बंद कर प्रणवेश दा से गुपचुप बातें

कर दिया तो अंधेर हो गया !

—अंजन !

—अब मुझे यह सब नखरा मत दिखाइए ! मैं सब जानता हूँ ! क्या आप समझती हैं कि कोई आपको नहीं देखता ? प्रणवेश दा भी अपनी बीवी को धोखा देकर आपके साथ...

—अंजन, तुम यह सब क्या कह रहे हो ?

—मैं ठीक कह रहा हूँ। आप मुझे अपना मुँह खोलने के लिए मजबूर मत कीजिए। बस, यही समझ लीजिए टुकू दी, कि मुझे मत छेड़िए ! आप ज्यादा इधर-उधर करेंगी तो मैं मुहल्लेभर में सबसे यह बात कह दूँगा ! तब आपको पता चल जायेगा। तब पता नहीं, कहाँ रहेगा आपका प्रणवेश दा और कहाँ रहेंगी आप !

—तुम जिससे चाहो और जो चाहो कह सकते हो।

पास आकर अंजन ने अनुराधा का हाथ पकड़ने की कोशिश की और कहा—आप क्यों एकाएक इस तरह टेम्पर लूज कर रही हैं टुकू दी ? मैंने तो आपसे ऐसा कुछ नहीं कहा !

अनुराधा बोली—अगर तुमने फिर मुझे छूने की कोशिश की अंजन, तो मुझसे थप्पड़ खाओगे।

आजकल सड़क पर जरा-सी बात होते ही भीड़ इकट्ठी हो जाती है। अंजन और अनुराधा के पास भी कई लोग खड़े हो गये। कौन क्या सोच रहा है, उधर अनुराधा का कोई ख्याल नहीं था। वह तेज कदमों से बस स्टॉप की तरफ चली गयी। कुछ दूर अंजन उसके साथ चलता रहा, फिर हारकर वह पीछे रह गया।

लगभग एक हफ्ते बाद रात आठ बजे के करीब अनुराधा हाजरा रोड के मोड़ से लौट रही थी। अंजन भी अपने दो-तीन दोस्तों के साथ उसके पीछे लगा हुआ था। बीच-बीच में वे अनुराधा से सटकर चलने लगते और उसे सुनाकर ढेर सारी गंदी बातें कहने लगते। अनुराधा

होंठों को दबाये चल रही थी। वह जिस मकान में रहती है, उसी मकान में अंजन रहता है। इसलिए उससे कुछ कहा नहीं जा सकता। लेकिन अनुराधा क्या करे? किससे कहे? सड़क से और भी कितनी लड़कियाँ आ-जा रही हैं। उनमें से कितनी ही अकेली भी हैं। लेकिन उनको तो कोई परेशान नहीं कर रहा है!

इतने में अचानक शांतनु से भेंट हो गयी। शांतनु सामने से आ रहा था। अनुराधा उसे देखकर जरा असमंजस में पड़ गयी। उसने एक बार सोचा कि एक-दो बातें कहकर शांतनु को टाल दूँगी। कहीं अंजन वगैरह शांतनु के सामने ही कुछ न कह दें! लेकिन दूसरे ही क्षण अनुराधा ने मन की सारी ग्लानि निकालकर दूर फेंक दी। क्या उन आवारा लड़कों के डर से वह अपने स्वाभाविक जीवन के सुख से भी वंचित रहेगी! उसे तो शांतनु से बात करने में अच्छा ही लगता है।

बात करते-करते दोनों हाज़रा पार्क की रेलिंग पकड़कर खड़े हो गये। अनुराधा ने कनखियों से देखा कि अंजन वगैरह थोड़ी दूर पर थोड़ी देर रुके रहे और उसके बाद धीरे-धीरे खिसक गये।

अनुराधा ने चैन की साँस ली और मुस्कराकर पूछा—कहिए, कितने दिन से मुलाकात नहीं हुई?

शांतनु ने हाथ का पंजा पूरा फैलाकर कहा—पूरे पाँच दिन!

—हाँ, आजकल बड़ी कड़ाई चल रही है! उस दिन सवेरे के ऐडवेंचर के बाद...

—उससे कुछ नहीं आता-जाता। मैं फ्लैट की तलाश में हूँ, शायद जल्दी ही मिल जायेगा। मैंने रजिस्ट्रार को नोटिस भी दे दी है।

—वाह! इंतजाम एकदम पक्का हो गया है। लेकिन कन्या ही अगर न मिले तो...

—क्या उसे कोई जबरन रोक सकेगा? जयश्री जरूर चली आयेगी...

जरा रुककर शांतनु बोला—खूब ठंड पड़ने लगी है, चलो कहीं बैठकर चाय पी ली जाय....

—नहीं, बहुत देर हो गयी है, जरा रुको न। आज मन भी बड़ा उदास लग रहा है। जयश्री से मुलाकात नहीं होती। इसलिए तुमसे बात करने पर भी अच्छा लगता है।

—शहद के बदले गुड़, यही न ?

—ऐसी बात क्यों कह रही हो ? तुम कुछ हो और जयश्री कुछ और है। क्या तुमसे मेरी यों ही दोस्ती नहीं हो सकती ?

—तो फिर चाय की दुकान पर नहीं, मेरे घर चलिए। वहीं आपको चाय पिलाऊँगी।

शांतनु ने जरा सोचकर कहा—तुम्हारे घर जाऊँगा ? किसी के घर जाने के लिए रात ज्यादा तो नहीं हो गयी ?

—नहीं, नहीं, मेरे घर में वैसी कोई बात नहीं है। फिर मेरा घर ज्यादा दूर भी नहीं है।

—आज रहने दो। बल्कि चलो, तुम्हें घर तक छोड़ आऊँ, लेकिन आज चाय नहीं पिऊँगा।

थोड़ी दूर चलने के बाद शांतनु ने पूछा—तुम्हारे बारे में एक बात समझ में नहीं आती। न जाने क्यों तुम बड़ी रहस्यमयी लगती हो !

—सो भला किस तरह ?

—क्या तुम्हारा कोई घनिष्ठ मित्र नहीं है ?

—क्यों नहीं है, कई हैं।

—मैं वैसे मित्र की बात नहीं कह रहा हूँ। मेरा मतलब है कि क्या तुमने कभी किसी से प्यार नहीं किया ?

—नहीं।

—क्यों ?

—वैसा कोई मिला नहीं इसीलिये !

—बात समझ में नहीं आयी।

—समझ में न आये तो क्या किया जाये....

—सच-सच बताओ न, वैसा कोई नहीं मिला या जो मिले हैं उनमें

से कोई तुम्हें पसंद नहीं है ?

—बड़ा मुश्किल सवाल है।

—अगर कोई युवक आकर बड़ी आंतरिकता के साथ तुमसे कहे कि मैं तुमसे प्यार करता हूँ, तो तुम क्या करोगी ?

—जिस तरह आपने जयश्री से कहा है ?

—हाँ ! समझ लो कि मुझसे कई गुना अच्छा कोई युवक आकर...

अनुराधा हलके ढंग से मुस्कराकर बोली—क्या आप मेरी शादी की बात तय कर रहे हैं ?

—अनुराधा, तुम जवाब देने में कतरा रही हो।

—पहले आप यह तो बताइए कि ऐसा क्यों पूछ रहे हैं ?

—यों ही ! सिर्फ जानने की इच्छा हो रही है...

—मैं उसे ठुकरा दूँगी।

अनुराधा की बात में इतना बल था कि उसके बाद शांतनु को एक-दो मिनट रुक जाना पड़ा। फिर उसने पूछा—क्या तुम बड़ी घमंडी हो ?

—हाँ, यही मेरा एक घमंड है। मैं किसी को ठुकराने का अवसर पाने के लिए बेचैनी के इंतजार कर रही हूँ। लेकिन अफसोस की बात है कि अभी तक वैसा कोई मिला नहीं।

—भला, कौन ठुकराये जाने के लिए जान-बूझकर तुम्हारे पास आयेगा ?

—आप और जयश्री ही संसार के अंतिम प्रेमी-प्रेमिका हैं ! आप दोनों में मैंने सच्चा प्यार देखा है। आप दोनों के अलावा संसार में शायद कोई किसी से प्यार नहीं करता। मुझे भी प्यार पर विश्वास नहीं है।

—तुम्हारी बात अगर सही होती तो बुरा न होता। अपने को संसार का अंतिम प्रेमी समझने में बड़ा अच्छा लगता है। लेकिन तुम्हारी बात सही नहीं है। प्यार मिटा नहीं है। अब भी इन्सान प्यार के लिए बेचैन है। हालांकि अवसर पहचानने में गलती हो जाती है।

बात करते-करते दोनों अनुराधा के मकान के पास वाले मोड़ पर आ

पहुँचे।

अनुराधा बोली—तो आज आप हमारे घर नहीं चलेंगे ?

—आज नहीं, और किसी दिन आऊँगा।

—और किसी दिन तो आयेंगे ही। जयश्री को साथ लेकर कभी तो न्योता खाने आना पड़ेगा ही। मैंने माँ से आप दोनों के बारे में बताया है।

आज भी दरवाजे के पास अंजन खड़ा था। अनुराधा ने उसकी तरफ नहीं देखा। दूसरी मंजिल पर प्रणवेश दा के कमरे का दरवाजा खुला था। प्रणवेश दा दरवाजे की तरफ मुँह किये बैठे थे। उनके हाथ में किताब थी। सीढ़ी पर आहट पाकर उन्होंने सिर उठाकर देखा। अनुराधा ने उनकी तरफ ध्यान नहीं दिया। वह सीधे ऊपर चली गयी।

अनुराधा के जीवन में भी कभी एक राजकुमार आया था। उस समय वह इलाहाबाद में रहती थी। उसकी उम्र तब सत्रह साल थी। वह आज भी समझ नहीं पाती कि वह शख्स पागल था या और कुछ !

बादल दत्त अनुराधा के भैया का दोस्त था। वह काफी दिनों से विलायत में रह रहा था। वहीं एक महीने के लिए अपने घर आया था और किसी नौकरी के सिलसिले में इंटरव्यू देने इलाहाबाद गया था। बादल देखने में बंगाली नहीं लगता था। वह छह फुट के करीब लम्बा और वैसा ही चौड़ा था। उसका रंग पठानों जैसा गोरा था और दाढ़ी फ्रेंचकट। बड़ा विचित्र आदमी था। कभी कहता था—ओफ् ! कैसी सड़ी गरमी है। मन करता है कि दूसरे ही प्लेन से इंगलैंड लौट जाऊँ, इस गरमी में क्या कोई काम-काज हो सकता है। फिर थोड़ी देर बाद कहता था—यह देश मुझे एकदम अच्छा नहीं लगता। यहाँ कोई भी कामचलाऊ नौकरी मिल जाय तो यहीं रह जाऊँ। अब वहाँ जाकर क्या होगा ? खाने के लिए टेबुल के सामने बैठकर कहता था—आप कुछ भी कहें मौसी जी, इतने मसाले से पकाया गया गोश्त अब मुझे एकदम अच्छा नहीं लगता। इससे गोश्त का असली स्वाद ही नहीं मिलता। हाँ, साहब लोगों का खाना बढ़िया

बढ़िया होता है। फिर उसी के बाद वह पाँच-छह हरी मिर्चें चबा जाता था और कहता था—इंगलैंड में हरी मिर्च नहीं मिलती बस, यही एक परेशानी है !

उतना भारी-भरकम शरीर लेकर भी वह कितना फुर्तीला था। इलाहाबाद में तीन दिन तक वह अनुराधा के घर में था। तीनों दिन अनुराधा के घरवाले उसको लेकर परेशान थे। जून का महीना था। इलाहाबाद में भयानक गरमी थी। उसके लिए भी उसे हर वक्त शिकायत थी। मानो सूरज की गरमी के लिए भी अनुराधा के घर के लोग ही जिम्मेदार थे। लेकिन उस गरमी में भी उसे दाढ़ी बनाने के लिए गरम पानी की जरूरत पड़ती थी। नहाने के लिए गरम पानी चाहिए था। तीन दिन वह अनुराधा के घर में था, लेकिन उसके व्यवहार से उसके लिए किसी तरह की कृतज्ञता प्रकट नहीं होती थी। उसने कभी किसी को कोई उपहार तो दिया ही नहीं, उलटे हर चीज पर मानो उसका अधिकार था। कभी-कभी वह अनुराधा के छोटे भाई को उठाकर इस तरह हवा में उछालता था कि घर के लोग देखकर डर जाते थे।

उस विशालकाय आदमी को देखकर अनुराधा को कभी-कभी डर लगता था। इसलिए अनुराधा उसके पास ज्यादा नहीं जाती थी। वह उस समय बस स्कर्ट छोड़कर साड़ी पहनने ही लगी थी। अच्छी लगनेवाली हलकी धूपछाँही दुनिया की शकल उसके सामने झलकने लगी थी। उस समय कभी-कभी एकाएक उसका मन उदास हो जाता था और कभी-कभी बड़ी खुशी महसूस होती थी। जरा-सी बात पर मन को ठेस लगती थी। उसे आज भी उन दिनों की बातें खूब याद हैं !

बादल दत्त ने ही पहले अनुराधा को तू कहकर पुकारा था। अनुराधा को देखकर उसी ने कहा था—वाह ! तू तो काफी लम्बी हो गयी है। जब तुझे देखा था, तब तू इतनी सी थी और नंगे बदन घूमा करती थी। तुझे याद है ?

अनुराधा को याद नहीं था। लेकिन वैसी बातें उसे पसंद नहीं आयी

थीं। जब वह नौ-दस साल की थी; हो सकता है तभी बादल ने उसे देखा हो, लेकिन तब भी वह कैसे नंगे बदन घूम सकती थी!

माँ-बाप के सामने ही बादल ने उसके कंधे पर हाथ रखकर पूछा था —तेरी क्या उम्र है? सत्रह? अरे। मैंने सोचा था, तू पंद्रह साल की होगी! किस इयर में पढ़ती है?

बादल की उम्र उस समय सत्ताईस-अट्ठाईस साल से ज्यादा नहीं थी, लेकिन वह बड़े-बूढ़ों की तरह बातें करता था। उतने साल विलायत में रहने के बाद भी वह कभी घर में बातचीत करते समय अंग्रेजी का इस्तेमाल नहीं करता था।

शुरू-शुरू में बादल उसकी तरफ ध्यान ही नहीं देता था, सिर्फ बीच-बीच में हुक्म करता था—यह ले आ, वह ले आ। अनुराधा वह सब काम दूसरों पर टाल कर दूर-दूर बनी रहती थी। रात को खाना खाते वक्त टेबुल के सामने बैठकर पॉलिटिक्स पर जबर्दस्त बहस छिड़ जाती थी। भैया, पिताजी और बादल दलीलों का तूफान खड़ा कर देते थे। उसी के दौरान कभी-कभी बादल टेबुल के नीचे से हाथ बढ़ाकर अनुराधा का एक हाथ पकड़ लेता था। अनुराधा बुरी तरह डर जाती थी। ऐसा अनुभव उसकी कल्पना से परे था। वैसा करते हुए बादल एक बार भी अनुराधा की तरफ नहीं देखता था। उसके होंठों पर हलकी मुस्कराहट होती थी और वह जोर-शोर से बहस करता जाता था। घर में सभी की मौजूदगी में बादल वैसा करता था। अनुराधा घबड़ा जाती थी कि कहीं कोई देख न ले। माँ सोच भी नहीं सकती थी कि वह जब खाना परोस रही थी, तब भी दैत्य जैसे उस विशालकाय पुरुष ने टेबुल के नीचे से अनुराधा का हाथ जोर से पकड़ रखा था। शरीर छोड़ने से पहले शायद सती की जैसी काठ मारने की-सी हालत हो गयी थी, कुछ वैसी ही हालत उसकी भी हो जाती थी और वह उसी तरह चुपचाप बैठी रहती थी।

लेकिन एक भी बात नहीं होती थी, सिर्फ हाथ पकड़कर बैठे रहना। खाना खा चुकने के बाद बादल और कुछ नहीं किया करता था। अधूरी

वहस पूरी करने के लिए वह भैया और पिता के साथ बैठने के कमरे में चला जाता था। इस तरह डर खत्म होने के बाद अनुराधा के मन में उस आदमी के लिए दारुण आग्रह पैदा हुआ था।

वादल सवेरे काफी देर से सोकर उठता था। साहबों के मुल्क में रहने का कोई लक्षण उसमें नहीं था। उस दिन सवेरे अनुराधा उसे चाय देने गयी थी। विचित्र किस्म का स्लीपिंग सूट पहने लेटे-लेटे वह अखबार पढ़ रहा था। चाय का प्याला रखने की आवाज से उसने सिर उठाकर अनुराधा को देखा और मुस्करा दिया। उसके वाद उसने उँगली हिलाकर कहा—अरी, सुन! सुन!

अनुराधा ने पूछा—क्या?

जैसे एक छोटे वच्चे को बुलाया जाता है, वैसे अनुराधा को बुलाकर वादल ने कहा—अरी, सुन तो! पास आ....

सकुचाती हुई अनुराधा थोड़ा आगे वढ़कर वोली—क्या कह रहे हैं?

—क्यों तू ही मुझे चाय देने आती है? घर में और कोई नहीं है क्या?

शर्म के मारे अनुराधा का चेहरा लाल हो गया। क्या इस तरह की वात कोई किसी से पूछता है? फिर क्या उस आदमी ने यही सोचा था कि अनुराधा अपनी इच्छा से चाय देने गयी थी? ऐसी वात तो अनुराधा कभी सोचती ही नहीं!

—क्यों री? जवाव क्यों नहीं दे रही है? घर में नौकर-चाकर तो हैं।

—माँ ने मुझी से कहा था।

—माँ ने कहा?—वस इतना कहकर वादल हा-हा कर हँसने लगा। उसने हँसते हुए चाय का कप उठाकर कहा—तेरी माँ ने तुझे क्यों भेजा, पता है? नहीं पता? शायद मैं तुझे पसंद कर तुझसे शादी कर लूँ, इसीलिए....

अव तो लज्जा से ज्यादा अपमान हुआ। अनुराधा के कान गरम हो गये। सत्रह साल की उम्र में शादी किस वात की?

अनुराधा झल्लाकर बोली—हरगिज नहीं ! आप बेकार की बातें मत कीजिए।

— अरी, तू चली क्यों जा रही है ? सुन। इंगलैंड जायेगी ?

—नहीं।

—लेकिन मैं सचमुच तेरे इंगलैंड जाने का इन्तजाम करा सकता हूँ।

—नहीं, मैं वहाँ नहीं जाऊँगी।

—अरी, तूने क्या सोच लिया है ? क्या मैं तुझसे सचमुच शादी करने जा रहा हूँ ? तू तो अभी कितनी छोटी है !

उस दिन अनुराधा को इतना गुस्सा आया था कि उसका मन कर रहा था कि अभी दौड़कर जाये और माँ से खूब लड़े। क्या माँ ने सचमुच ऐसी बात सोच ली थी ? मैं मर जाऊँगी तो भी ऐसे विचित्र आदमी से शादी नहीं करूँगी।

अनुराधा को माँ से लड़ने का मौका नहीं मिला। उसी दिन दस-ग्यारह बजे घर में तहलका मच गया था। अचानक बादल के पेट में भयानक दर्द शुरू हो गया था। दर्द भी कैसा भयानक था कि वह बुरी तरह छटपटाने लगा। उतने लंबे-चौड़े आदमी को भैया और पिताजी दोनों ने मिलकर पकड़ रखा था। फिर भी वे उसे बिस्तर पर नहीं रख पा रहे थे। वह छटपटा रहा था और चीख रहा था—देशी-विदेशी भाषा में उसका चीखना भी बड़ा विचित्र लग रहा था।

तीन-तीन डाक्टर आये थे और तीनों उसको लेकर परेशान हो गये थे। किसी तरह उसको सँभाला नहीं जा पा रहा था। आखिर हालत यह हो गयी कि सभी लोग डर गये—कहीं उसे कुछ हो न जाय। दूर इंगलैंड से तीन दिन के लिए इलाहाबाद आकर अगर वैसे अच्छे स्वास्थ्य वाले आदमी को कुछ हो गया तो उसके घरवालों के मन की क्या हालत होगी ? कहीं से, किसी तरह का फूड पायजनिंग तो नहीं हो गया ? लेकिन सवेरे उसने चाय, अंडा और टोस्ट के अलावा कुछ भी तो नहीं खाया—घर के दूसरे लोगों ने भी तो वही खाया था।

दर्द की वेचैनी के साथ वादल इस कदर चिल्लाने लगा कि उन लोगों के घर के सामने भीड़ लग गयी। देखते-देखते वादल का वुखार भी वढ़ता गया। अंत में कई लोगों ने उसे जोर से पकड़ कर रखा, डाक्टर ने पेथीडिन की सुई लगायी, अव वह धीरे-धीरे वेहोश हो गया। वैसा विशाल शरीर पेथीडिन की सुई से भी आसानी से कावू में नहीं आता। लेकिन कुछ देर वाद वह धीरे-धीरे सो गया।

शाम को पता चला कि उसकी किडनी में स्टोन हो गया है और यह दर्द उसी की वजह से है। कभी-कभी यह दर्द बड़ा भयानक हो जाता है। रात आठ बजे के करीव वादल ने आँखें खोलीं और खूव हँसकर कहा—साल भर पहले भी मुझे एक वार ऐसा ही दर्द हुआ था। उस समय आपरेशन नहीं कराया गया, लेकिन अव लगता है कि कराना ही पड़ेगा। खैर, घवड़ाने की कोई वात नहीं है। मुझे और पहले वेहोश कर दिया जाता तो इतनी परेशानी नहीं होती।

घर के सव लोगों ने चैन की साँस तो ली, लेकिन उनको कम वुरा नहीं लगा। वादल ने दूसरे ही दिन चले जाने की वात कही तो किसी ने आपत्ति नहीं की। वादल का शरीर काफी कमजोर हो गया था, फिर भी दूसरे दिन शाम के प्लेन से उसने दिल्ली जाने का निश्चय कर लिया। अस्पताल के वारे में उसे वड़ा डर था। अगर अस्पताल में ही भरती होना है तो इलाहावाद के वदले दिल्ली में ठीक है। वहाँ जान-पहचान का डाक्टर है और जेव में पौंड के नोटों की गड्डी। वह इंटरव्यू नहीं दे सका। हो सकता है, इंगलैंड लौटकर ही वह आपरेशन कराये।

दूसरे दिन दोपहर में पूरा मकान खाली था। पिताजी दफ्तर गये थे, भैया भी कहीं गये हुए थे और माँ सो रही थीं। अनुराधा रेलवे क्वार्टर्स में अपनी किसी वांधवी से मिलने जा रही थी कि वादल ने उसे वुला लिया। वादल को वाहर वाला कमरा दिया गया था। उसी में लेटा-लेटा वह खिड़की से सड़क की तरफ देखा करता था।

आज वादल ने अपनी आवाज को थोड़ा मुलायम वनाकर अनुराधा

को बुलाया—अरी सुन !

अनुराधा उस आदमी को एकदम पसंद नहीं करती, लेकिन वह अशिष्टता भी नहीं कर सकती। बाहर से खिड़की के पास जाकर उसने कहा —क्या है ?

—अंदर आ, तुझसे थोड़ी देर बातें करूँ।

—मैं एक काम से जा रही हूँ।

—अभी किसी काम से जाने की जरूरत नहीं है। मेरे पास आकर थोड़ी देर बैठ।

—सचमुच मुझे एक काम है, मैं हो आऊँ तभी ठीक है।

—थोड़ी देर बाद चली जाना। मुझे एक गिलास पानी तो देती जा....

कोई पानी माँगे तो इनकार नहीं किया जा सकता। अगर कोई यों ही पानी माँगे तो भी। अनुराधा शीशे के गिलास में पानी ले गयी। बादल पूरा पानी गटागट पी गया। बोला—वाह ! बड़ा ठंढा पानी है। एक गिलास और तो ला....

उसके पहले अनुराधा ने उसे बहुत थोड़ा पानी पीते देखा था। लेकिन इस समय वह तीन गिलास पानी पी गया। उसके बाद वह बोला—किडनी का मामला है, इसलिए ज्यादा पानी पीना पड़ता है। आधे घंटे बाद मुझे फिर पानी की जरूरत पड़ेगी, तब कौन देगा ?

अनुराधा बोली—मैं आपके लिए यहाँ एक जग पानी रख देती हूँ।

—नहीं, तू थोड़ी देर बैठ। कल दिन भर सोता रहा, इसलिए आज नींद नहीं आ रही है। तुझसे थोड़ी देर गप लड़ाने को मन कर रहा है। यहीं बैठ न....

जरा खिसककर बादल ने अपने बिस्तर पर अनुराधा के लिए जगह कर दी। अनुराधा वहाँ नहीं बैठी, लेकिन इस तरह कोई आग्रह करे तो चले जाना भी संभव नहीं होता। वह एक कुर्सी खींचकर बैठ गयी। एक ही दिन की बीमारी में बादल के चेहरे की रंगत बदल गयी थी। अब

उस चेहरे पर रूखेपन के बदले थोड़ी उदासी थी। अनुराधा ने उस दिन पहली बार उस आदमी की तरफ अच्छी तरह देखा। वह समझ गयी कि रूखेपन के छद्मवेश के बावजूद वह आदमी सुंदर है। इतना बड़ा शरीर, फिर भी उसमें थोड़ा-सा बचपन है।

बादल ने पूछा—अच्छा तेरा नाम क्या है री? मैं बार-बार भूल जाता हूँ। अनुराधा? अनुराधा का क्या अर्थ है? खैर, अर्थ कुछ भी हो यह नाम तुझे नहीं जँचता। यह नाम बड़ा सीधा-सादा है।

—क्या मैं सीधी-सादी नहीं हूँ?

बादल बड़ी-बड़ी आँखें फैलाकर एकटक अनुराधा की तरफ देखता रहा। वह बस चुपचाप देखता रहा। कोई अनुराधा की तरफ उस तरह से देखता था तो अनुराधा का वदन सिहर उठता था। साधारण आदमी तो इस तरह से नहीं देखता।

अपनी आवाज एकदम बदलकर बड़ी हार्दिकता से बादल बोला—तू बड़ी खूबसूरत है। तेरी खूबसूरती में न जाने कैसा तीखापन है। यही तो मुझे अच्छा लगता है। सचमुच तू बड़ी खूबसूरत है, तुझे इस घर में अच्छा नहीं लगता....

अनुराधा सिर नीचा किये खड़ी रही।

बादल ने फिर पूछा—अच्छा, मैं जो तुझे खूबसूरत कह रहा हूँ, इससे तुझे कैसा लग रहा है? क्या इसके पहले और किसी ने तुझे ऐसा कहा है?

इस बार भी अनुराधा कोई जवाब नहीं दे सकी। कोई पुरुष रूप की प्रशंसा करता है तो उस प्रशंसा में भी ऐसा जादू रहता है, इसका भी उसे पता नहीं था। उसका सत्रह साल का शरीर धीरे-धीरे काँप उठा। सचमुच, ऐसा तो कभी किसी ने उससे नहीं कहा था।

बादल बोला—तेरी नाक का अगला हिस्सा जरा ऊपर की तरफ उठा हुआ है। उससे तीखापन प्रकट होता है। बहुत कम लड़कियों में ऐसा रहता है। तेरे सिर में बाल भी खूब हैं। अंग्रेज लड़कियाँ देख लेंगी

तो उनको खूब जलन होगी। तेरे चेहरे पर बुद्धि की झलक है और देखने से ही पता चल जाता है कि तेरा बदन बड़ा मुलायम है।

—बादल दा, अब मैं जाऊँ...

—कहाँ ? क्या मेरे पास बैठने को मन नहीं कर रहा है ?

—नहीं, ऐसी बात नहीं है...

—फिर तू उतनी दूर क्यों बैठी है ? मेरा मन कर रहा है कि तुम से खूब प्यार करूँ...

फिर अनुराधा को कोई मौका न देकर बादल हड़बड़ाकर पलंग से उठा। बीमार विशालकाय उस पुरुष ने बड़ी आसानी से अनुराधा को गोद में लेकर पलंग पर बिठा दिया। उसने अनुराधा का कोई अपमान नहीं किया। उसने सिर्फ आदेश के स्वर में कहा—चुपचाप यहाँ बैठी रहो, एकदम मत हिलना....

अनुराधा बुरी तरह घबड़ा गयी, लेकिन उसने चिल्लाने की हिम्मत नहीं की। गटागट और एक गिलास पानी पीकर बादल आकर धम से पलंग पर बैठ गया। दर्द के मारे पलंग कराह उठा। अनुराधा की तरफ देखकर बादल बोला—अब बताओ....

—क्या बताऊँ ?

—अरे हाँ, तुम तो कुछ बोलोगी नहीं ! हाँ, तुम चुपचाप बैठी रहो, कुछ मत बोलो, मैं तुमसे प्यार करूँगा...

हलके से अनुराधा का गाल छूकर बादल बोला—वाह ! कितना मुलायम है, कितना मुलायम ! कितना सुंदर...

अनुराधा के गले के पास रुलाई की तरह न जाने क्या अटक गया। उसने असहाय होकर कहा—क्या कर रहे हैं बादल दा ?

चुप ! कुछ मत बोलो।

अनुराधा के और करीब आकर बादल ने उसकी पीठ पर अपनी नाक रख दी और कहा—वाह ! तुम्हारे बदन की खुशबू कितनी बढ़िया है। सिर्फ बंगाली लड़कियों के बदन में ऐसी खुशबू होती है—गोरी

वरसने के वाद तुलसी के पौधे से जैसी खुशवू आती है ठीक वैसी ! समझ गयी अनुराधा, मेमसाहबों के वदन से वड़ी विचित्र वू आती है—किसी हद तक विल्लियों के बदन से जैसी वू निकलती है....

अनुराधा अब उठने की कोशिश करने लगी, लेकिन वह नहीं उठ सकी। वादल ने उसे दोनों हाथों से जकड़ रखा था। एक ताकतवर आदमी पागल की तरह उसके सारे बदन की खुशवू सूँघ रहा था। अनुराधा के मन में थोड़ा डर समा गया। वह किसी तरह उस ताकतवर आदमी के हाथ से निकलकर भागना चाहती थी। लेकिन उसे उस आदमी की वह हरकत वहुत अच्छी भी लग रही थी। उसका शरीर मानो चुम्बक वन गया था।

सत्रह साल की अनुराधा के प्रथम यौवन में यही पुरुष का पहला स्पर्श था। भय, लज्जा और अच्छा लगना—कुल मिलाकर उसकी विचित्र हालत हो गयी। कमरे की खिड़की या दरवाजा बंद करने की तरफ वादल का जरा भी ध्यान नहीं था—मानो यह सव कुछ वड़ा स्वाभाविक हो रहा था। वैसे ही स्वाभाविक ढंग से वह उस खामोश दोपहर में अनुराधा की काँप रही छाती में अपना मुँह दवाकर गरम-गरम साँस छोड़ने लगा।

थोड़ी देर वाद वादल अनुराधा को छोड़कर चित लेट गया। छत की तरफ देखकर उसने मानो अपने आपसे कहा—आह ! वड़ा अच्छा लग रहा है। लग रहा है कि मेरा सारा दर्द ठीक हो गया है। तू कितनी खूबसूरत है टुकू ! सुंदर चीज छूने पर सारा रोग दूर भाग जाता है।

उसके वाद वादल ने फिर अनुराधा की तरफ देखकर कहा—तू यह मत समझना कि मैं वुरा आदमी हूँ। क्या तू मुझे वुरा समझ रही है ?

अनुराधा ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसका सारा शरीर थर-थर काँप रहा था।

वादल ने अनुराधा का हाथ पकड़कर झकझोरा और कहा—क्यों री, जवाव क्यों नहीं दे रही ? सुन, आज शाम को मैं दिल्ली जा रहा

हूँ। जाना ही पड़ेगा, क्योंकि मुझे बहुत जरूरी काम है। मैं दस-बारह दिन बाद फिर आऊँगा। मैं तुझे चाहता हूँ। तू मेरे साथ चलेगी न? शादी बहुत जल्दी कर लेनी होगी। क्यों? चलेगी न?

अनुराधा खामोश रही।

—दस-बारह दिन में ही मैं लौट आऊँगा। तब मैं तेरे पिताजी से कहूँगा। दिल्ली से तुझे खत लिखूँगा। तू जवाब तो देगी न? क्यों? जवाब देगी या नहीं? शरमाने से काम नहीं चलेगा। बस, मैं तुझे चाहता हूँ। तुझे कोई छुएगा, यह मैं बरदाश्त नहीं कर सकूँगा। क्यों? मेरी चिट्ठी का जवाब देगी न?

—दूँगी।

—ठीक? मैं वहाँ जाते ही तुझे....

लेकिन बादल ने कोई चिट्ठी नहीं लिखी थी। दिल्ली में करीब एक हफ्ता रहने के बाद वह कलकत्ते चला गया था। वहाँ भी उसने किसी नौकरी के लिए इंटरव्यू दिया था, लेकिन तनख्वाह उसे पसंद नहीं आयी थी। फिर वह इंगलैंड लौट गया था। अनुराधा ने उम्मीद की थी कि वह कम से कम इंगलैंड से ही कोई पत्र लिखेगा लेकिन वह भी उसने नहीं लिखा। साल भर बाद उसने पेरिस से अनुराधा के भैया के पास पिक्चर पोस्टकार्ड भेजा था, लेकिन उसमें अनुराधा का नाम तक नहीं था। उस ने लिखा था कि अब भी आपरेशन नहीं हो पाया है और इस बीच दो बार पेट में दर्द हुआ है। उस दर्द के समय उसे किसी खूबसूरत लड़की के पास होने से आराम मिला था या नहीं कहा नहीं जा सकता।

अनुराधा बहुत दिनों तक अपनी बचकानी आशा लेकर बादल की चिट्ठी का इंतजार करती रही थी लेकिन अब वह नहीं करती। घर में अब भी कभी बादल के बारे में बात छिड़ने पर सब कहते हैं—वह लड़का एकदम पागल है! लेकिन वह कैसा पागलपन था, अनुराधा कभी समझ नहीं सकी।

अब अनुराधा जान गयी है कि बादल ने उससे कभी प्यार नहीं

किया। वह सिर्फ लोभ था। अंग्रेजी कहानी-उपन्यास में जिसे अफेअर कहा जाता है, बादल इलाहाबाद आकर उसी तरह का कुछ कर गया था। उससे ज्यादा और कुछ नहीं। उसने किसी से प्यार नहीं किया। वह प्यार में कतई विश्वास नहीं करता।

अँधेरे में लेटे-लेटे अचानक अनुराधा की आँखों में आँसू आ गये। अब वह काफी समझदार और कठोर बन गयी थी। बहुत दिन हो गये थे, वह रोयी नहीं थी। रात के अँधेरे के अलावा और किसी वक्त उसकी आँखों में आँसू नहीं आते थे।

लेकिन अपने जीवन में प्यार का यह अभाव भी बहुत बड़े बोझ के समान था, अनुराधा को आज पहली बार पता चला। माँ-बाप-भाई-बहन सभी उससे प्यार करते हैं, फिर भी दारुण अकेलापन उसे सताता है। वह खुद भी किसी से प्यार नहीं कर सकी। जिनको उसने देखा है, सभी उसे अपने छोटे लगे हैं। फिर प्यार क्या है ? वह शारीरिक आकर्षण के अलावा जरूर कुछ और है, लेकिन वह क्या है, उसका पता अब तक किसी ने उसे नहीं बताया।

अनुराधा ने आँसू पोंछ लिये। रोशनी जलाकर वह फिर किताब पढ़ने लगी। किताबों की दुनिया में अब भी लोग एक-दूसरे से प्यार करते हैं। पवित्र प्रेम के लिए कितने नायक-नायिकाओं का जीवन बरबाद हो जाता है। यह सब पढ़ने में बड़ा मजा आता है। अनुराधा को प्रेम की कथाएँ उत्तरी ध्रुव की भ्रमण-कथा जैसी लगती हैं।

रुनुक-झुनुक बजे कंगन !
राधा को खरीदूँ या श्याम को ?

जयश्री, मैं दो दिन दफ्तर नहीं गया। सिर्फ यही नहीं, एक बार के लिए भी मैं घर से नहीं निकला। नहीं, नहीं, मैं बीमार नहीं हूँ। यों ही। लग रहा था कि एकदम अकेला रहने पर तुम्हें हर वक्त अपने पास पाऊँगा।

यह चिट्ठी तुम अपने कमरे में पढ़ोगी। वहाँ एकांत होगा। तुम जरूर कमरे का दरवाजा और खिड़कियाँ बंद कर लोगी, ताकि तुम्हारी माँ देख न लें। तब उस निर्जन कमरे में मैं तुम्हारे बहुत पास रहूँगा और इस चिट्ठी के जरिये तुमसे गुपचुप बातें करूँगा। मैं तुम्हारा—(ये दो शब्द लिखकर काट दिये गये थे)।

दो दिन किसी आदमी से मेरी मुलाकात नहीं हुई। सवेरे जो लड़का आकर मेरे कमरे की सफाई और दूसरे काम करता है, वह जब आया मैं बिस्तर से नहीं उठा। कल शाम को किसी ने मेरे दरवाजे पर कई बार दस्तक दी थी, लेकिन मैंने दरवाजा नहीं खोला था। मैं समझ गया था कि तुम या अनुराधा नहीं हो। लड़कियाँ उतने जोर से दरवाजा नहीं पीटतीं। शायद मेरा कोई दोस्त था। लेकिन किसी से मुलाकात करने की इच्छा नहीं हुई। आज कोई नहीं आया।

दोनों दिन बड़े विचित्र ढंग से कटे। इस तरह कभी एकदम अकेला मैं नहीं रहा। लेकिन मेरे लिए समय काटने की समस्या नहीं रही। कभी-कभी मैंने किताब पढ़ने की कोशिश की है, लेकिन उसमें भी मन नहीं लगा। खैर, तुम तो हर घड़ी मेरे पास थीं और मैं सिर्फ तुमसे बातें करता रहा। क्या तुम्हें पता नहीं चला ? क्या एक बार भी तुम्हें मेरी याद नहीं आयी ?

लेकिन क्यों मैं इस तरह अकेला रहा जानती हो ? जानने पर तुम शायद हँसोगी। आजकल तुम्हें घर से निकलने नहीं दिया जा रहा है, इसलिए मैंने सोचा कि मैं भी तुम्हारी तरह घर में कैद रहूँ। फिर भी अपनी इच्छा से रहने और दूसरों की इच्छा से रहने में बड़ा अंतर है! इसके अलावा तुम तो अपने घर में एकदम अकेली नहीं हो, वहाँ दूसरे लोग भी हैं। खैर, मैंने यह महसूस किया कि अकेले रहने पर बार-बार तेज भूख लगती है। दोनों दिन मैंने खिचड़ी बनायी थी और उसी के साथ अंडा तल लिया था। मैंने स्वयं बनाया था, इसलिए मैं नहीं कह रहा हूँ, लेकिन खाना सचमुच बढ़िया बना था। किसी दिन तुम्हें भी खिलाऊँगा। क्या तुम खाना पकाना जानती हो ?

उस दिन सवेरे जैसे आयी थीं, वैसे और किसी दिन तुम नहीं आ सकतीं ? उस दिन सवेरे की बात मुझे जिंदगी भर याद रहेगी। अब भी मेरे कमरे की कुर्सी में तुम्हारा स्पर्श जड़ा हुआ है। शीशे की तरफ देखने पर अब भी मानो तुम्हारा चेहरा मैं देख पाता हूँ। आज दाढ़ी बनाते समय भी तुम बार-बार याद आ रही थीं।

हाँ, एक बात समझ में आ रही है कि इस तरह समय बिताने का कोई मतलब नहीं है। मुझे कुछ करना पड़ेगा। सोच रहा हूँ कि नये सिरे से पढ़ना-लिखना शुरू कर दूँ। लेकिन जब तक तुम नहीं आओगी, कुछ नहीं होगा। तुमको पूरी तरह से पाये बिना मन शांत नहीं होगा।

अब एक-दो काम की बातें करूँ! मैंने दो-तीन फ्लैट देखे हैं। उनमें से जोधपुर पार्क का फ्लैट अच्छा है। क्या तुम उसे एक बार नहीं देखोगी ? तुमको दिखाये बिना मैं फाइनल नहीं कर पा रहा हूँ। एक और मजेदार बात जानती हो ? बैचेलर सुन लेने पर बहुत-से मकान मालिक पीछे हट जाते हैं।

मैरेज रजिस्ट्रेशन ऑफिस में फार्म जमा किया जा चुका है। अगले महीने की आठ तारीख को एक मही[illegible]

याने अब बीस दिन बचे हैं और इस बीच ही सारा इंतजाम कर लेना होगा।

कई दिन पहले अनुराधा से मुलाकात हुई थी। उसने तुमसे जरूर कहा होगा। खैर, अनुराधा का क्या मामला है? वह हर वक्त इस कदर चुप रहती है कि उसे ठीक से समझा नहीं जा सकता। लगता है कि उसके साथ जरूर कोई मिस्ट्री है। तुम दोनों में कितनी दोस्ती है लेकिन तुम दोनों ही एकदम अलग तरह की हो। मुझे लगता है—(लिख कर फिर कुछ शब्द काट दिये गये थे)।

चिट्ठी का जवाब कल तक जरूर मिलना चाहिए। मकान देखने कैसे चला जायेगा, लिखना।

तुम कैसी हो जयश्री? बार-बार बस यही पूछने को मन करता है कि तुम कैसी हो? तुम ठीक हो न? तुम्हें कोई तकलीफ तो नहीं दे रहा है?

—शांतनु

जयश्री पलंग पर औंधी लेटी थी और अनुराधा अधलेटी बैठी थी। अब तक वह चिट्ठी दो बार पढ़ी जा चुकी थी।

अनुराधा हँसते-हँसते बोली—तुझे लिखा है न कि कमरे का दरवाजा बन्द कर अकेले में यह चिट्ठी पढ़ना! लेकिन तू तो मुझे पढ़ा रही है!

कोई जवाब न देकर जयश्री हँसी। उसके बाद वह बोली—यह तो बता कि उसे ऐसा ख्याल क्यों हो गया है कि मुझे घर में बंद रखा गया है? इस बीच मैंने दो बार फिल्म देखी और कल ही मैं मार्केट भी गयी थी।

—लड़कों को ऐसा सोचने में मजा आता है। प्रेमिका बंदिनी राजकन्या होगी और उसे उसका प्रेमी आकर छुड़ायेगा। एकदम कहानी की तरह...

—मेरे माँ-बाप मुझे बंद रखना कतई पसंद नहीं करते।

—फिर तू उससे मिलने क्यों नहीं गयी? बेचारा परेशान हो रहा है!

मैं जब भी बाहर निकलती हूँ, कोई न कोई साथ रहता है। खैर, मैनेज तो किया जा सकता है, लेकिन मैं जान बूझकर उससे मिलने नहीं जा रही हूँ।

—क्यों ?

—अगर रोज-रोज मुलाकात होती तो क्या वह इस तरह चिट्ठी लिखता ? क्यों ? बहुत बढ़िया चिट्ठी लिखता है न ? किसी तरह की बकवास नहीं है।

—ओफ ! चिट्ठी से इतना प्यार !

—नहीं अनुराधा, मुझे इन लड़कों की चिट्ठियाँ पहले भी मिली हैं। एक लड़का तो कविता लिखकर भेजा करता था। लेकिन ऐसी अच्छी चिट्ठी कभी किसी ने नहीं लिखी। अक्सर ऐसी चिट्ठियों में बेतुकी बातें रहती हैं....

—क्या तूने पहले भी कई बार प्यार किया है ?

—देख अनुराधा, प्यार करने की आदत तो मुझे बचपन से ही है !

यह बात कहकर जयश्री इस तरह हँसने लगी कि अनुराधा भी बिना हँसे नहीं रह सकी। जयश्री जब हँसती है, तब उसका सारा बदन काँप उठता है। हँसी रोककर जयश्री बोली—मैं सच कह रही हूँ। इस में जरा भी मजाक नहीं है। स्कूल फाइनल इम्तहान के समय मैं एक लड़के से इस तरह प्यार करने लगी थी कि मानो उसे न पाने पर मैं मर ही जाऊँगी। एक शादी के मौके पर उससे जान-पहचान हो गयी थी—बड़ा स्वीट लड़का था ! मैंने सोच लिया था कि अगर उससे मेरी शादी नहीं होती तो मैं आत्महत्या कर लूँगी।

—उसके बाद आत्महत्या रुक कैसे गयी ?

—उसके बाप ट्रांसफर होकर कानपुर चले गये, वहीं से वह चिट्ठी लिखा करता था। शुरू-शुरू में मैं कभी-कभी उसकी चिट्ठियों का जवाब देती थी, लेकिन उसके बाद—न तो मेरी हालत जानती है कि चिट्ठी लिखने के नाम पर मुझे बुख

हो गया।

—प्यार करने पर कैसा लगता है ?

—वाह-वाह ! तू नहीं जानती ?

—सचमुच मैं नहीं जानती।

—जब करने लगेगी तब समझ जायेगी। मैं समझ रही हूँ कि प्यार करने पर तुझे इस दुनिया का ख्याल नहीं रहेगा।

—क्यों ?

—कम उम्र से थोड़ा-बहुत प्यार करने की प्रैक्टिस रखना अच्छा होता है—नहीं तो आखिर में ऐसा ही होता है।

—खैर, तुझे तो प्रैक्टिस है। फिर तू शांतनु के प्यार में क्यों दीवानी बन रही है ?

—शांतनु की बात अलग है। बता, शांतनु जैसा लड़का ढूंढ़ने पर भी कहीं मिलेगा ?

—हाँ, प्यार करने पर ऐसा ही लगता है। शांतनु वैसे कोई असाधारण व्यक्ति नहीं है।

—हाँ, हाँ, मैं देखूँगी, तू जिससे प्यार करेगी उसे भी देखूंगी। अब एक चिट्ठी लिख दे अनुराधा। कल ही जवाब देने के लिए लिखा है....

—वाह-वाह ! क्या मैं सारी चिट्ठियाँ लिखा करूँगी। इसे तू ही लिख !

—प्लीज़, लिख दे। ऐसा मत कर ! मैं बना-बनाकर खत एकदम नहीं लिख सकती।

—शादी के बाद तू क्या करेगी ? तब तो मैं जाकर चिट्ठी नहीं लिखूंगी।

—शादी के बाद चिट्ठी लिखने की जरूरत नहीं पड़ती।

—मान ले कि शांतनु कहीं बाहर गया या तू....

—उस समय दो-चार लाइन लिख लूंगी। शादी हो जाने के बाद कोई प्रेम-पत्र नहीं लिखता।

—क्या शादी हो जाने पर प्रेम खत्म हो जाता है ?

—पता नहीं, यह सब मैं नहीं जानती । तू लिख तो....

—मैं क्या लिखूँगी ? बल्कि तू कहती जा, मैं लिख रही हूँ ।

—अब मैं क्या कहूँगी ? उसकी चिट्ठी तो तूने पढ़ ली है, अब उसी हिसाब से तू जवाब लिख दे । तुझसे यह सब खूब आता है । मैं बाद में कापी कर दूँगी । कहीं ऐसा न हो कि तुझसे जिसका प्यार हो उसे चिट्ठी लिखना ही न आये ।

—तब उसकी चिट्ठी कोई और लिखा करेगा !

दोनों सखियाँ हँस-हँसकर एक दूसरे पर लोटपोट होने लगीं । जयश्री के मकान की तीसरी मंजिल एकदम खाली रहती है, इसलिए कहीं कोई नहीं था । तीन-चार चिड़ियाँ छत की कारनिस पर बैठी आपस में लड़ रही थीं और इधर से दोनों लड़कियाँ हँस रही थीं ।

जयश्री उठकर पैड का कागज ले आयी । अनुराधा ठुड्डी से उँगली लगाये सोचने लगी । जयश्री बोली—मकान देखने के बारे में लिख दे, परसों जोधपुर पार्क में मेरी मौसी के यहाँ....

अनुराधा ने शांतनु का पत्र उठाकर एक बार और पढ़ लिया । उस की भौंहें सिकुड़ गयीं । दूसरे ही क्षण उसने मुस्कराकर कहा—लिख दूँ कि तू घर में कैद नहीं थी और आराम से पिक्चर देखती घूम रही थी !

—यह सब लिखने की जरूरत नहीं है ।

अनुराधा ने पूछा—बता, अबकी बार कैसे ऐड्रेस किया जाय ? प्रियतम, या हृदयेश्वर ?

—हट् !

—या आधुनिक कविता के ढंग पर—मेरे हृदय की गहराई में विचरने वाले !

—क्या मजाक हो रहा है ?

इस तरह हँसी-मजाक में थोड़ा समय और बीता । साफ दिल की दोनों तरुणियों को हँसी-मजाक बेहद पसंद था ।

जयश्री बोली—अब जल्दी-जल्दी लिख, नहीं तो माँ आ जायेंगी। वड़े सिम्पल ढंग से थोड़े में लिख दे। वड़ा हो जाने पर मुझसे कापी करते नहीं बनेगा। तू जो दो वार नाम लेकर ऐड्रेस करती है, वह बड़ा अच्छा है। उसी तरह लिख!

अनुराधा बोली—संबोधन कैसा रहेगा, वह तू बाद में बैठा लेना। तू अपनी पसंद से लिखना...

फिर अनुराधा लिखने लगी। उसे बीच-बीच में रुककर कलम होंठों में दबाना नहीं पड़ा। वह अनायास लिखती चली गयी। उसने जयश्री से कह दिया—लिखते समय ठोकना मत...

शांतनु,

सात-आठ दिन तुमसे मुलाकात नहीं हुई। लेकिन अपने मन में तुम्हें हर समय देखती रही हूँ। आज तुम्हारी चिट्ठी मिली तो तुम्हारे मन की वात भी सुन ली। मुझे लगा कि तुम जैसे मुझसे गुपचुप वातें कर रहे हो। मेरे कानों में एक-एक वात कह रहे हो। तुम कितनी अच्छी चिट्ठी लिख लेते हो, लेकिन मैं तुम्हारी तरह नहीं लिख सकती। तुम हर तरह से मुझसे कितने अच्छे हो। तुम क्या रोज मुझे ऐसी ही एक चिट्ठी नहीं लिख सकते?

(—अरी जयश्री, अगर वह रोज चिट्ठी लिखने लगे तो क्या मुझे भी रोज जवाव नहीं लिखना पड़ेगा?)

तुम रोज इस तरह चिट्ठी लिखा करना, लेकिन मैं रोज उसका जवाव नहीं दे पाऊँगी। मेरे साथ वहुत-सी परेशानियाँ हैं। फिर भी मन ही मन मैं तुम्हें रोज जवाव दिया करूँगी। क्या तुम नहीं सुन पाओगे?

हाँ, तुम उस तरह पागलपन मत किया करो। दो दिन कमरे में वंद रहने से भला क्या लाभ हो सकता है? उससे सेहत कभी अच्छी नहीं रहती। सच-सच वताओ तो, तुम्हें फिर वुखार तो नहीं हुआ? क्या कई दिन कोई तुम्हारी तरह खिचड़ी और अंडा खा सकता है? हाँ, तुम अपने हाथ से खाना मत वनाया करो। वहुत हो चुका! मुझे खिचड़ी

एकदम अच्छी नहीं लगती मुझे बड़ा अच्छा खाना पकाना आता है। मैं तुम्हें तरह-तरह की चीजें पकाकर खिलाया करूँगी।

(—अनुराधा, वह सब क्या लिख रही है? काट दे! वह लाइन काट दे।

अनुराधा ने मुस्कराकर वह लाइन काट दी।)

मुझे भी ठीक के खाना पकाना नहीं आता। लेकिन एक महिला है सोनाली सरकार, जिन्हें बहुत बढ़िया खाना पकाना आता है। उनकी किताब पढ़ने पर एक नौसिखिया भी बढ़िया मुगलई खाना बना सकता है। इसलिए कोई दिक्कत नहीं होगी।

उस दिन सवेरे बिना बताये चले जाने के लिए माँ ने मुझे बहुत डाँटा था। माँ ने कहा था कि अब अगर तू ऐसा करेगी तो घर लौटकर देखेगी कि मैं हार्टफेल होकर मर गयी हूँ। इसलिए आजकल सवेरे कहीं नहीं जा रही हूँ। लेकिन हाँ, और बीस-बाईस दिन मैं चुपचाप रहूँगी। लगता है, माँ तैयार हो जायेंगी। इधर उनका रुख थोड़ा नरम पड़ गया है। लेकिन पिताजी कोई बात सुनना ही नहीं चाहते। हालाँकि मैंने तय कर रखा है कि रजिस्ट्री के दिन मैं माँ से बताकर जाऊँगी या चिट्ठी लिखकर छोड़ बिना मैंने जिंदगी में कोई काम नहीं किया, इसलिए

(जयश्री बोली—तूने अपने बारे में यह सब क्या लिखा ? काट दे ! काट !

अनुराधा बोली—नहीं, मैं नहीं कटूँगी ।)

तुम ठीक-ठाक रहना । सेहत की तरफ ध्यान देना । आजकल ठंढ पड़ने लगी है, सिरहाने की तरफ की खिड़की खुली मत छोड़ देना । मैं अच्छी तरह हूँ । तुमने लिखा है कि मुझे कोई तकलीफ दे रहा है या नहीं । हाँ, दे रहा है । एक आदमी मुझे बहुत तकलीफ दे रहा है ! वह तुम हो !

—तुम्हारी जयश्री

अनुराधा से लिपटकर जयश्री बोली—चिट्ठी का अंत कितना बढ़िया हुआ है । यह सब मेरे दिमाग में नहीं आता !

बढ़िया प्रेम-पत्र लिखने के लिए अपनी प्रशंसा पर अनुराधा जरा शरमा गयी । उसका चेहरा लाल दिखाई पड़ा । उसने कहा—ठहर, ठहर, अभी चिट्ठी खत्म नहीं हुई । मैंने एक कहानी की किताब में पढ़ा है कि बहुत से लोग चिट्ठी खत्म करने के बाद एक जगह गोल निशान बनाकर लिख देते हैं कि मैंने यहाँ चूमा है, तुम भी चूमना !

—हट ! बदतमीज !

अनुराधा से चिट्ठीवाला पैड छीनकर जयश्री बोली—ठीक है, शादी के बाद मैं उससे सब कुछ बता दूँगी । मैं उससे कह दूँगी कि ये सब चिट्ठियाँ तूने लिखी थीं....

—ना, ना, यह सब मत बताना, हरगिज मत बताना ।

—क्यों नहीं बताऊँगी ? जरूर बताऊँगी ।

—मुझे शर्मिंदा होना पड़ेगा ।

—मैं तो वही चाहती हूँ । तब देखा जायेगा ।

—फिर मैं तेरे घर कभी नहीं जाऊँगी ।

—वह भी मैं देख लूँगी कि तू कैसे नहीं जाती !

ठीक उसी वक्त अलका देवी कमरे में आयीं । शांतनु की चिट्ठी बिस्तर

पर पड़ी थी, जयश्री ने झटपट उस पर तकिया रख दिया। अलका देवी ने उधर देखकर भी नहीं देखा। उनका चेहरा बड़ा गम्भीर था, फिर भी वे अनुराधा को देखकर जबर्दस्ती मुस्करायीं।

इधर-उधर की एक-दो बातों के बाद अलका देवी ने कहा—यहाँ तो अनुराधा भी है, इसी के सामने कह रही हूँ। मीठू, तू मेरी एक बात रखेगी?

जयश्री ने चौंककर पूछा—क्या?

—तेरे पिताजी कह रहे थे....

—फिर वही बात?

—पहले सुन तो! तेरे जो मन में आये करना, लेकिन तेरे बाप की इज्जत रखने के लिए तू जरा देर वहाँ बैठ तो जायेगी न, एक-दो बातें तो करेगी न? बस! तेरे बाप चाहते हैं कि तू उसे देख ले। बाद में न हो में उनसे कह दूँगी कि मुझे लड़का पसंद नहीं है।

इस पर जयश्री भभक उठी। गुस्सा हो जाने पर उसे होश-हवास नहीं रहता। वह किसी हद तक चिल्लाकर बोली—मेरा मजाक बनाना चाहती हैं? जिससे मैं किसी तरह शादी नहीं करूँगी, मुझे उसके सामने जाकर बैठना भी पड़ेगा! नखरे भरी बातों का जवाब भी देना पड़ेगा?

—घर में कोई आता है तो क्या उससे कोई बात नहीं करता?

—लेकिन यह तो वह बात नहीं है, क्या है वह आप भी जानती हैं और मैं भी जानती हूँ।

—देखो अनुराधा, तुम जरा समझाकर कहो तो। इसमें क्या बुराई है? अलका देवी ने अनुराधा से कहा।

अनुराधा विचित्र असमंजस में पड़ गयी। अब इस हालत में उसका यहाँ रहना ठीक नहीं था, लेकिन वह उठकर जा भी नहीं पा रही थी। मौसी जी शायद समझ रही हों कि यही जयश्री को उलटा-सीधा समझा रही थी। अनुराधा सिकुड़-सिमटकर आगा-पीछा करती हुई बोली—इसमें मैं क्या कहूँगी मौसीजी?

—तुम जरा उससे कहो न, कम से कम वह अपने बाप का ही ख्याल करके एक दिन थोड़ी देर के लिए...

—मौसी जी, चाहें आप जो कहें, लड़की देखनेवाली बात मुझे भी बुरी लगती है....

जयश्री बीच में बोल पड़ी—कौन आयेगा ? इस बार कौन आयेगा ?

कौन आयेगा, यह अलका देवी जानती तो थीं, लेकिन उन्होंने वह सब बताया नहीं। सिर्फ उन्होंने दबी आवाज में कहा—क्या पता ! तेरा चाचा कह रहा था कि सिर्फ लड़का आयेगा और कोई नहीं....

—चाचा के दफ्तर का वही आदमी ?

—पता नहीं, वही है कि....

—कोई भी आये, आप लोगों के सामने उसे मेरे हाथों अपमानित होना पड़ेगा, क्या वह अच्छा होगा ? माँ, आप मेरी बात सुन लीजिए, मेरी शादी तय हो चुकी है, अब उसमें कोई हेरफेर नहीं हो सकता।

आगे बढ़कर अलका देवी ने जयश्री की पीठ पर हाथ रखा। मुलायम स्वर में उन्होंने कहा—सुन, एकाएक इस तरह दिमाग खराब मत कर। शादी-ब्याह जिंदगी भर के लिए किया जाता है, इसलिए इस मामले में जोश में आकर कोई कदम नहीं उठाना चाहिए। शादी सिर्फ दो जनों की बात नहीं, दो परिवारों, कुटुंबों और इष्ट-मित्रों की भी होती है। इसमें सब लोग आयेंगे, खुशियाँ मनायेंगे और आशीर्वाद देंगे। इसलिए सबको दुःखी बनाकर, अपने लोगों को रुलाकर कुछ नहीं करना चाहिए...

—सब लोग तो सिर्फ एक दिन के लिए आयेंगे, सारी जिंदगी तो मुझे उसके साथ अकेले ही बितानी पड़ेगी। इसलिए मैं उसे पसंद नहीं करूँगी तो क्या दूसरे लोग करेंगे ?

—तेरे बाप, मैं, क्या हम लोग भी एक दिन के लिए हैं ?

अब जयश्री को रुलाई आ गयी। ज्यादा गुस्सा होने पर उसे रुलाई आ जाती है। आँखों में आँसू भर आये, लेकिन क्रोध का तेज जरा भी

कम नहीं हुआ और उसने माँ की तरफ देखकर कहा—माँ, आप क्यों नहीं समझ रही हैं ? मैंने आपको इतना समझाया....

माँ और बेटी दोनों का ध्यान एक-दूसरे की तरफ था। मौका पाकर अनुराधा धीरे-से बोली—मौसी जी, मैं जा रही हूँ।

पता नहीं किसी ने अनुराधा की बात सुनी या नहीं। दरवाजे के पास पहुँचकर अनुराधा ने फिर कहा—मैं जा रही हूँ जयश्री।

फिर अनुराधा कमरे से निकल गयी। अब जयश्री झटपट उठकर अनुराधा को छोड़ने चली।

उस संन्यासी का क्या हुआ?

ट्रेन दो घंटे लेट थी। परेश बाबू और सुजाता हावड़ा स्टेशन पर इंतजार कर रहे थे। परेश बाबू के आने की इच्छा नहीं थी, लेकिन इतनी उम्र हो जाने पर भी वे भैया की बात टाल नहीं सकते। आसनसोल से हृषीकेश बाबू के गुरुदेव जो आनेवाले हैं।

एक बेंच में जगह मिल गयी थी और दोनों वहीं बैठे थे, लेकिन दो-चार मक्खियाँ उन्हें परेशान कर रही थीं। हाथ हिलाकर भगाने पर वे दूर चली जातीं, लेकिन फिर लौटकर बदन पर बैठ जाती थीं। मनुष्य के शरीर पर बैठकर मक्खियों को क्या मिलता है, कहा नहीं जा सकता।

सुजाता ने कहा—मीठू को भी ला सकते थे। वह तो घर में अकेली बैठी होगी।

परेश बाबू ने नाराजगी भरे स्वर में कहा—कार में जगह नहीं होगी, सुना है, गुरुदेव के साथ उनके दो शिष्य भी आ रहे हैं।

—जगह हो जाती। मीठू को देखने पर गुरुदेव खुश होते।

—घर चलकर तो वे मीठू को देखेंगे ही।

—घर में देखना अलग बात है, अगर मीठू उनको रिसीव करने स्टेशन आती तो अलग बात होती। गुरुदेव मीठू से बहुत प्यार करते हैं।

—लेकिन मीठू बड़ी हो गयी है, अब वह क्यों गुरुदेव की बात मानेगी? आजकल के लड़के-लड़कियों का गुरुदेव में विश्वास नहीं रह गया है।

—फिर भी इनकी बात माने बिना रहा नहीं जा सकता। इनको देखते ही अपने आप सिर झुक जाता है।

—लेकिन मेरा तो सिर कभी नहीं झुकता! खैर, तुमने उस लड़के को देखा है?

—कौन लड़का ?

—वही जो मीठू का प्रोफेसर था, जिसके लिए मीठू एकदम पागल हो गयी है !

—देखा है, लेकिन सुगत बाबू से उसका मुकाबला नहीं हो सकता।

—क्यों ?

—देखने-सुनने में बुरा नहीं है, लेकिन उसका न घरबार है, न वह अपने घरवालों से कोई सम्पर्क रखता है, पता नहीं कैसा घुमक्कड़ किस्म का है।

—तुम जो उपन्यास-कहानियाँ पढ़ती हो, उनके हीरो तो वैसे ही लड़के होते हैं।

—लेकिन वह सब उपन्यास-कहानियों में अच्छा लगता है। मीठू इतनी बेवकूफ लड़की है, यह पहले किसने सोचा था ! अरे, प्यार-मुहब्बत सब ठीक है, लेकिन दुनिया में सुख-सुविधा न मिलने पर चार दिन में सब गायब हो जाता है।

परेश बाबू एकाएक जोर से हँसे। मानो पत्नी की बातों से उन्हें बड़ा मजा मिला। उन्होंने अनुराग भरी दृष्टि में सुजाता की तरफ देखा और कहा—तीस साल की उम्र से पहले यह सच्ची बात किसी लड़के या लड़की की समझ में नहीं आती। तुम भी तो अपने भैया के किसी दोस्त से शादी करने के लिए...

—बस, फिर वही बात !

—क्या मैं गलत कह रहा हूँ ? सच-सच बताओ, क्या तुम उससे शादी करने के लिए उतावली नहीं थीं ?

—अरे, उस समय मेरी उम्र ही क्या थी, सत्रह-अट्ठारह साल रही होगी। लेकिन उसके बाद उससे कभी छिपकर भी नहीं मिली।

—सच कह रही हो ? नहीं मिली ?

—हाँ, हाँ—

—हाँ, बाद में मौका ही नहीं मिला। अगर अब होता तो जरूर

मिलती।

सुजाता ने भौंहें टेढ़ी कर रहा—क्यों नहीं मिलती ! वे तुमसे किसी तरह बुरे नहीं थे।

—अब उसे कितनी तनख्वाह मिलती है ?

—क्या मैं उसका पता रखती हूँ ?

सुजाता के गंजे समझदार पति आराम से मुस्कराते रहे। फिर वे मानो अपने आपसे बोले—सुगत का रंग-ढंग भी मेरी समझ में नहीं आता। कभी-कभी लगता है, थोड़ा राजी हो गया है और कभी-कभी लगता है कि वह जिंदगी में कभी शादी ही नहीं करेगा। इधर भैया तो सब कुछ मुझ पर छोड़कर निश्चिन्त हो गये हैं।

ट्रेन आने की आवाज से प्लेटफार्म पर भीड़ और चहल-पहल शुरू हो गयी। फर्स्ट क्लास के डिब्बे से गुरुदेव दो चेलों को साथ लिये निकले। दाढ़ी-मूँछों से उनका चेहरा भरा हुआ था, लंबा-चौड़ा शरीर, उम्र ठीक से समझ में नहीं आयी, लेकिन लगता था कि उनके बदन में काफी ताकत है ! वे गेरुआ पहने हुए थे, और गले में जपाकुसुम की माला। उन्हें देखने से मन में आदर से ज्यादा भय होता था। उनका पूरा परिचय कोई नहीं जानता। वे बँगला और हिन्दी दोनों भाषाएँ धाराप्रवाह बोल सकते हैं। फिर भी पता चल जाता है कि वे बंगाली ही हैं। उनसे हृषीकेश बाबू और अलका देवी का परिचय उज्जैन में हुआ था।

सुजाता और परेश बाबू ने आगे बढ़कर गुरुदेव को प्रणाम किया। गुरुदेव चुपचाप खड़े रहे। आशीर्वाद देने के लिए उन्होंने हाथ तक नहीं उठाया। परेश बाबू ने पूछा—रास्ते में आपको कोई कष्ट तो नहीं हुआ ? ट्रेन काफी लेट है....

गुरुदेव अब भी चुपचाप चमकती आँखों से परेश बाबू की तरफ देख रहे थे। परेश बाबू थोड़ा घबड़ा गये। इतने में सुजाता ने उनकी केहुनी पकड़कर खींचा तो उन्होंने पलटकर देखा कि एक शिष्य होंठों पर उँगली रखे खड़ा है ! फिर भी परेश बाबू को यह समझने में कुछ समय लग गया

कि आज गुरुदेव मौन थे !

आस-पास छोटी-सी भीड़ इकट्ठी हो गयी थी। जिनको कहीं जाने की जल्दी नहीं थी, ऐसे लोग बड़े मजे से उस दृश्य को देख रहे थे। परेश बाबू ने हड़बड़ाकर कहा—अच्छा समझ गया....

कार में आगे की सीट पर ड्राइवर की बगल में गुरुदेव बैठे। बाकी लोग पीछे बैठे। गुरुदेव की आँखें उदास थीं। हावड़ा ब्रिज पर पहुँचकर कार जब गंगा पार करने लगी, तब गुरुदेव ने बगल में मुड़कर गंगा को प्रणाम किया। सुजाता ने देखा कि गुरुदेव की आँखों में आँसू थे। सुजाता ने ऐसे असंभव दृश्य की कल्पना ही नहीं की थी। पहले उन्होंने जितनी बार गुरुदेव को देखा था, वे बड़े क्रोधी जान पड़े थे, और उन्होंने सबसे डाँट-डपटकर ही बात की थी।

कई आदमी हों और एक भी बात न करे, यह परेश बाबू को बहुत बुरा लगता था। वे बार-बार गलती से गुरुदेव से कुछ कह देते और फिर शिष्यों की तरफ ध्यान जाते ही उस गलती को सुधार लेते हैं।

दूसरी मंजिल के एक कमरे में गुरुदेव के रहने के लिए इंतजाम किया गया था। हृषीकेश बाबू और अलका देवी के कुछ रिश्तेदारों के अलावा कई शिष्य भी आये हुए थे। गुरुदेव को घेरकर सब लोग घोड़े के नाल की शक्ल में बैठ गये। गुरुदेव कुछ भी नहीं बोले, यहाँ तक कि कागज में लिखकर जवाब देना या सिर हिलाना भी बंद रहा। फिर भी बहुत-से लोगों ने बहुत-सी बातें कहीं। सिर्फ गुरुदेव को सुनाने के लिए वे बातें कही गयीं। पद्मासन लगाकर गुरुदेव चुपचाप बैठे रहे। दूसरों की इतनी बातें सुनकर भी मुखमंडल की सारी मांसपेशियों को निर्विकार बनाये रखना मामूली क्षमता की बात नहीं थी।

भगतों ने जब पाँव छूकर प्रणाम किया, तब भी गुरुदेव ने किसी को आशीर्वाद नहीं किया। मानो मन ही मन कुछ कहना भी उनके लिए मना था। उन्होंने सिर्फ एक-एक फूल उठाकर सबके हाथ में दिया। पीछे वाले दरवाजे के पास खड़े होकर परेश बाबू ने सोचा कि आज का दिन यों ही

निकल गया। अब कोई बात नहीं होगी। गुरुदेव के एक शिष्य को अपने पास देखकर उन्होंने धीरे से उससे पूछा—कहिए, मौन रहने के दिन वे भोजन तो करते हैं न ?....जब साढ़े बारह बज गये तब परेश बाबू ने ही आगे बढ़कर हृषीकेश बाबू से कहा—भैया, आज वे ट्रेन जर्नी करके आये हैं, अब उनके आराम करने का इंतजाम कर दिया जाय तो कैसा रहेगा ?

एक-एक कर भक्त लोग चले गये। संगमर्मर के काफी बड़े थाल में फलाहार सजा कर दिया गया। उसके साथ एक कटोरे में खीर और दूसरे में रबड़ी भी दी गयी। गुरुदेव बहुत ज्यादा और दिन में एक ही बार खाते हैं।

आज गुरुदेव ने भोजन छूकर भी नहीं देखा। सिर्फ वे थाल की तरफ एकटक देखते रहे। उसके बाद उन्होंने सिर उठाया और सबको चौंका-कर मुँह खोला। बादल गरजने जैसे स्वर में उन्होंने कहा—हृषीकेश, सबसे बाहर जाने के लिए कह दो। तुमसे मुझे कुछ बातें करनी हैं।

दूसरों से कुछ कहना नहीं पड़ा। सबने विमूढ़ भाव से एक दूसरे को देखा। फिर वे जल्दी-जल्दी कमरे से निकल गये। हृषीकेश बाबू उत्सुक होकर गुरुदेव की तरफ देख रहे थे। गुरुदेव ने उंगली से इशारा कर कहा कि दरवाजा बंद कर मेरे पास आकर बैठो।

—अब बताओ कि तुमने मुझे क्यों बुलाया है ?

—गुरुदेव, आप पहले भोजन कर लीजिए। थोड़ा आराम कीजिए।

—मुझे भोजन करने की जरूरत नहीं है। मैं आराम भी नहीं करना चाहता। मैंने कौन-सा परिश्रम किया है कि मुझे आराम करना पड़ेगा ?

—लेकिन भोजन न करने पर शरीर की रक्षा कैसे होगी ? बहुत मामूली-सा इंतजाम किया गया है।

सजायी गयी खाद्य वस्तुओं की तरफ देखकर गुरुदेव ने लम्बी सांस छोड़ी। खीर को उँगली से छूकर उन्होंने वही उँगली जबान से लगायी। उसके बाद उँगली धोकर वे खड़े हो गये।

हृषीकेश बाबू आर्त स्वर में बोले—क्या हुआ गुरुदेव, क्या हुआ ?

संन्यासी अगर आसन छोड़ दें तो उन्हें खिलाया नहीं जा सकता तो क्या वे सचमुच नहीं खायेंगे ? हृषीकेश बाबू कुछ भी नहीं समझ रहे थे, कि एकाएक इन्हें क्या हो गया। कभी पहले तो ऐसा नहीं हुअ क्या इस बार कोई गलती हो गयी ?

—हमसे क्या गलती हो गयी कि आपने भोजन नहीं किया ?

—गलती कुछ भी नहीं हुई ! वह बात रहने दो, दूसरी बात करे

—यह मैं कैसे मान लूँ ? आपने भोजन नहीं किया ? बताइए, अ हम पर क्यों नाराज हैं ?

चेहरे से लग रहा था कि गुरुदेव सचमुच क्रुद्ध थे। आँखें चमक र थीं और होंठ खिंचे हुए। फिर भी किसी हद तक खिन्न स्वर में बोले- एक पर क्रोध होने से दूसरे के प्रति स्नेह बढ़ता है। अगर तुम पर गुस होता तो मैं दूसरे शिष्य के घर जाता। वह बात नहीं है। अब मैं लोकाल में आकर कुछ नहीं खाऊँगा। मैं आज ही रात हरिद्वार चला जाऊँगा तुम इंतजाम कर देना। अब मैं कनखल के आश्रम में ही रहूँगा, क इधर नहीं आऊँगा।

—क्यों ? आपने ऐसा निश्चय क्यों कर लिया ?

—क्यों आऊँ, बता सकते हो ? आज से सैंतीस साल पहले मैं तुम लोगों की ही तरह गृही था। मन की शांति के लिए संसार का त्य किया था। शांति मिली भी लेकिन फिर न जाने क्यों मेरी बुद्धि भ्र हो गयी, चेलों का झुंड बनाकर मैं फिर संसार में लौट आया।

—आप तो संसार में नहीं लौटे। आप तो कभी-कभी संसारी जी को सही मार्ग पर चलने के लिए निर्देश देने आते हैं।

इस बात पर ध्यान न देकर गुरुदेव एकटक हृषीकेश बाबू की त देखते रहे। उसके बाद वे आसन को खींचकर दीवार के पास ले गये अं दीवार से टिककर बैठे। फिर वे बड़े ही थकान भरे स्वर में बोले—अ मैं अधिक दिन जिंदा भी नहीं रहूँगा। मेरा वक्त खत्म हो चला है।

हृषीकेश बाबू साँस रोककर गुरुदेव की तरफ देखते रहे।

गुरुदेव बोले—सुनो, तुमसे एक घटना के बारे में बता रहा हूँ। भगवान् बुद्ध ने मृत्यु से पहले सुअर का मांस खाया था, यह तो तुम्हें मालूम है। मेरे जीवन में भी वैसा ही एक संयोग हो गया। शायद यही नियति का निर्देश था। आसनसोल में परिमल के पास था। उसके मकान के ठीक पीछें गरीब लोगों की बस्ती है। आधीरात को सुना कि वहाँ कोई जानवर चिल्ला रहा था। मृत्यु-यंत्रणा से कोई पशु चिल्ला रहा था। उस समय सब लोग सो रहे थे, लेकिन मैं स्थिर नहीं रह सका। मैं उठा। फिर धीरे-धीरे चलकर उस बस्ती में पहुँच गया। वहां जाकर देखा कि एक जिंदा सुअर को बोरे में भरकर दो-तीन लोग लाठी से पीट रहे थे। बहुत-से बच्चे-बूढ़े-औरत-मर्द वहाँ बैठे हुए थे। उनके चेहरे से खुशी झलक रही थी। मैं समझ गया कि उस सुअर को वे भूनकर खायेंगे। एक जगह आग जलायी जा रही थी। क्या मुझे उन लोगों को मना करना चाहिए था? शायद वे मेरी बात नहीं मानते, फिर भी मुझे मना तो करना ही चाहिए था। लेकिन मेरे गले से आवाज नहीं निकली। सोचा कि इन लोगों को भर पेट खाना ही नहीं मिलता और आज ये खुश होकर भरपेट खायेंगे—यहाँ मेरे उपदेश का क्या मूल्य है? जानवर को मारने से मना कर क्या मैं उन लोगों को खाना दे सकूंगा? इसीलिये उस समय मना करने का कोई मतलब भी नहीं था। सुअर की सब हड्डियां टूट चुकी थीं। फिर भी उसका चिल्लाना कितना पीड़ाजनक था। मैं चुपचाप खड़ा रहा।

हृषीकेश बाबू चुपचाप सुन रहे थे।

गुरुदेव कहते गये—खैर, उन लोगों ने मेरा संन्यासी का भेस देखकर मुझे बैठने दिया और मेरी खातिरदारी की। मैं वहां बैठकर उनका काम देखता रहा। अभी तुमने कहा कि संसारी जीवों को सही मार्ग पर चलने का उपदेश देना मेरा काम है। लेकिन वे संसारी जीव कौन हैं? तुम जैसे कुछ अमीर नौकरी-पेशा वाले आदमी ही? क्या वे गरीब लोग संसारी जीव नहीं हैं? क्या मैं उनको उपदेश नहीं दूँगा! इतने दिन मैंने कभी

उन लोगों के वारे में नहीं सोचा। फिर सुनो, उन लोगों ने उसी वक्त उस सुअर को आग में भूना। सुअर की खाल तक नहीं उतारी गयी। वैसा दृश्य मैंने पहले कभी नहीं देखा था। संसार की कितनी ही लीलाएँ मैंने नहीं देखी हैं। खैर, सुअर भून लेने के बाद, सब लोग उसे छीन-झपट-कर बड़े चाव से खाने लगे। उस समय उनके चेहरे पर कितनी खुशी थी, बताया नहीं जा सकता। मानो कोई उत्सव मनाया जा रहा था। मैं समझ गया कि रोज ऐसा नहीं होता। फिर उनके मुखिया जैसा कोई आदमी एक पत्तल में थोड़ा-सा वही मांस मेरे सामने रख गया।

हृषीकेश वावू अवाक् विस्मय से सव कुछ सुन रहे थे। उनकी आँखों में सम्मोहित मनुष्य की दृष्टि थी। गुरुदेव कुछ जोर से बोले—बता सकते हो, उस समय मुझे क्या करना चाहिए था ? तुम लोग मुझे, बढ़िया बढ़िया चीजें खाने को देते हो, लेकिन उन लोगों में भी तो भक्ति कम नहीं थी ! अपने हिस्से का खाना उन लोगों ने मुझे दिया। लेकिन उस समय मुझे भगवान् बुद्ध की बात याद नहीं आयी थी, तैलंगस्वामी याद आये थे। क्योंकि शुरू में मुझे बड़ी घृणा उपजी थी। मैंने सोचा कि तैलंगस्वामी ने अपना ही मैला खाया था और यह तो मनुष्य का भोजन है। मैंने एक टुकड़ा मुंह में डाला, लेकिन खा न सका। समझ गये हृषी-केश, मैं मांस का वह टुकड़ा खा न सका। मैं झटपट वहाँ से उठकर चला और थोड़ी दूर जाते ही मुझे कै हो गया।

गुरुदेव के असहाय चेहरे की तरफ देखकर हृषीकेश वावू जल्दी से बोले—ऐसा तो होगा ही, आपने जिंदगी में कभी मांस-मछली को छुआ तक नहीं...

—अरे अहमक ! तैलंगस्वामी भी क्या रोज मैला ही खाया करते थे ? फिर जितेन्द्रिय होना किस बात का ?

थोड़ी देर चुप रहकर गुरुदेव फिर बोले—क्या इसके बावजूद तुम्हें मुझ पर भक्ति-श्रद्धा होती है ?

—आप क्या कह रहे हैं। गुरुदेव ! आप जैसे असामान्य महापुरुष

ही ऐसी परीक्षा कर सकते हैं। क्या और कोई साधु-संन्यासी इस तरह अपनी परीक्षा लेंगे ? आजन्म ब्रह्मचारी रहकर भी आपने उन लोगों की दी हुई चीज मुँह में डाली...

गुरुदेव बड़े ध्यान से हृषीकेश बाबू की बातें सुन रहे थे। अचानक उनके चेहरे की रंगत बदल गयी। उन्होंने सिर के बालों को इस तरह मुट्ठी में पकड़ लिया कि मानो वे अपना जटाजूट उखाड़ फेंकेंगे। उनकी आँखें फैली हुई थीं। कर्कश स्वर में उन्होंने डाँटकर कहा—तुम्हारी बातें सुनकर मेरे मन में थोड़ा गर्व आ गया था। यह भी तो कमजोरी है। दूसरे साधु-संन्यासी क्या कर सकते हैं और क्या नहीं कर सकते, यह मुझे जानने की जरूरत नहीं है—मैं स्वयं क्या कर सकता हूँ, यह मुझे अच्छी तरह मालूम है। इसलिए वह सब मत कहो !

उसके बाद गुरुदेव थोड़ा शांत हुए। उन्होंने बालों से हाथ हटा लिये और उनकी दृष्टि स्वाभाविक हो गयी। उन्होंने कहा—छोड़ो यह सब, अब बताओ कि तुम्हारी क्या समस्या है। मेरे पास ज्यादा समय नहीं है।

हृषीकेश बाबू ने फर्श की तरफ निगाह रखकर कहा—जी, मेरी कोई समस्या नहीं है। मैंने तो यों ही आपका दर्शन करना चाहा था।

—नहीं, नहीं, तुम्हारे चेहरे से लग रहा है कि तुम बड़ी चिन्ता में हो। क्या हुआ है ?

—आप तो मेरे मन की सारी बातें जान जाते हैं। आप सब कुछ जानते हैं। मैं खुद आपसे क्या कहूँ !

—नहीं, नहीं, यह बात नहीं है। मैं किसी के मन की बात नहीं समझ सकता। मैं तो अपने ही मन पर काबू नहीं पा सका—खैर, तुम अपनी बात कहो।

—कुछ दिनों से मेरे मन में शांति नहीं है। कुछ अशुभ लक्षण देख रहा हूँ। लगता है, मेरे परिवार पर कोई संकट आ रहा है। एक दिन देखा....

ध्यान से सुनकर गुरुदेव ने कहा—हाँ, ऐसा हो सकता है। तुम्हारे काम धंधे का क्या हाल है?

—ठीक चल रहा है।

—तुम्हारा लड़का बाहर है, वह नियम से चिट्ठी लिखता है न?

—लिखता है। वह ठीक है।

—देखो, मनुष्य के जीवन में अचानक कोई दुख मुसीबत आना बड़ी बात नहीं है। क्या तुम आशा करते हो कि पूजा-पाठ कर या कोई जंत्र-तावीज देकर मैं तुम्हारी मुसीबत खत्म कर दूँगा? उसी तरह मुसीबत खत्म की जा सकती है या नहीं, मैं नहीं जानता—किन्तु वैसी क्षमता कम से कम मुझमें नहीं है।

—नहीं, मैं आपसे वैसा कुछ नहीं चाहता। मैं आपका उपदेश चाहता हूँ और उसी से मेरा मन शांत होगा।

—मैं जो कहूँगा, तुम मानोगे?

—कहिए।

—तुम पचपन साल के हो चुके हो, बहुत दिन तुमने संसार में रह लिया। धर्म में तुम्हारी निष्ठा है, तुम आत्मा की शांति भी चाहते हो, इसलिए अब संसार छोड़कर मेरे साथ चलो। मेरे साथ तुम कनखल के आश्रम में रहोगे, अपने हाथ से खाना पकाकर खाओगे, मन हो जप-तप करना नहीं तो सिर्फ पहाड़ और आकाश की तरफ देखना और चुपचाप बैठे रहना, देखोगे कि उससे भी बड़ी शांति मिलेगी।

—लेकिन वहाँ जाने के बाद भी अगर मन में संसार के प्रति आकर्षण रहेगा तो क्या करूँगा? बाल-बच्चों को यहाँ छोड़ जाऊँगा, उनका भला-बुरा....

—तो मत जाओ। संसार में रहकर जो कुछ भोगना पड़ता है, वही सब कुछ भोगो! गृहस्थ को संन्यासी क्या उपदेश दे सकता है? संसार में रहकर उसका सारा मजा लूटोगे तुम और मुसीबत आने संन्यासी आकर उसे दूर कर देगा, यह कैसे हो सकता है? मैं जब

में घरबार छोड़कर आत्मा की डाक्टरी सीखने निकल पड़ा था। सचमुच मैं इतने दिनों तक बड़ी गलती पर था।

हृषीकेश बाबू बहुत ज्यादा निराश हो गये। गुरुदेव में क्यों अचानक ऐसा परिवर्तन आ गया है, इसका कोई कारण उनकी समझ में नहीं आया। क्या वे गुरुदेव पर बहुत ज्यादा भरोसा करने लगे थे? इसके पहले भी अनेक बार दुःख मुसीबत में, मन की अशांति में इसी संन्यासी के परामर्श से उनको बड़ी शांति मिली थी। लेकिन आज उनको लगा कि गुरुदेव स्वयं दारुण मानसिक कष्ट भोग रहे हैं।

दरवाजे के बाहर कानाफूसी करने लगे। काफी देर हो गयी थी, इसलिए सब लोग अपने-अपने ढंग से सोच-विचार करने लगे। अचानक मौन भंग कर गुरुदेव हृषीकेश बाबू से न जाने इतनी क्या बातें कर रहे थे।

लंबी साँस छोड़कर हृषीकेश बाबू बोले—आपने कुछ नहीं खाया, यह मैं किसी तरह नहीं भूल पा रहा हूँ! आपने कब से भोजन त्याग दिया है?

—परसों से। अब सीधे कनखल लौटकर ही भोजन करूँगा। तुम आज ही रात मेरे जाने का इंतजाम कर दो। मन में कोई अफसोस मत रखना—गलती मैंने की है, मुझे ही उसका प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। अब मुझसे तुम्हारी मुलाकात नहीं होगी!

—घर में सब लोगों को आशा थी कि आप मीटू के लिए कुछ कर देंगे....

—मीटू को क्या हुआ है?

—मैंने तो पत्र में लिखा था। उसकी शादी के बारे में कुछ तय नहीं हो रहा है...

—इस समय मीटू की क्या उम्र है?

—जी, उम्र? मीटू की उम्र? मैं ठीक नहीं बता पाऊँगा, उसकी माँ जानती है—बाईस या तेईस साल की होगी....

—बाईस या तेईस ? मीठू इतनी बड़ी हो गयी है ? अभी पिछली बार देखा था, कितनी छोटी थी ! अब तेईस की हो गयी है ! अब एक बात है। जब वह बारह साल की थी, तब अगर मैं उसकी शादी करने के लिए कहता तो क्या तुम करते ? हमने अपने बचपन में ऐसा ही देखा है। कन्या के रजस्वला होते ही उसकी शादी कर दी जाती थी। लेकिन अब जमाना बदल गया है। जब तुमने इस बदले हुए जमाने को मान लिया है, तब...

गुरुदेव ने अचानक ठहाका लगाया। हँसी के झोंके में उनका विशाल शरीर काँप उठा। आज दिन भर में यही पहली बार उनको हँसते देखा गया। वे हँसते हुए बोले—कैसी विचित्र बात है ! है न ? कैसी विचित्र बात ? जिस आदमी ने स्वयं शादी नहीं की, नारी के बारे में जिसे कुछ पता नहीं है, संसार के बारे में जिसने कुछ नहीं जाना, जो अब तक जंगलों और पहाड़ों में घूमता रहा, वह तुम्हें शादी के बारे में राय देने चला है ? बताओ; उस राय में क्या दम होगा ?

हृषीकेश बाबू ने उदास स्वर में कहा—आप मीठू को आशीर्वाद दीजिए, जिससे उसका मंगल हो।

—देखो, आज मुझ पर सच बोलने का नशा सवार है। माँ-बाप के कहने पर अब तक मैंने अनेक नवदंपतियों को आशीर्वाद दिया है, लेकिन उनमें से आधे जिंदगी में सुखी नहीं हुए। फिर वे ही माँ-बाप दामाद या बहू को सही रास्ते लाने की आशा में मेरे पास आये हैं। बताओ, मनुष्य का विश्वास कितना अंधा है। मैं सच कह रहा हूँ हृषीकेश, मनुष्य की नियति बदलने की क्षमता मुझमें नहीं है ! नियति को मैं बदल नहीं सकता। खैर, यह बताओ कि मीठू को क्या हुआ है। मैं उससे बड़ा स्नेह करता हूँ।

—हम लोग मीठू के लिए अच्छा वर ढूंढ़ रहे हैं, लेकिन मीठू को यह पसंद नहीं है। वह अपनी पसंद से शादी करना चाहती है।

—हाँ, वह स्वतंत्र विचार की है। इसमें कोई बुराई भी नहीं है।

शास्त्र में इसकी स्वीकृति है। मनुस्मृति में आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख है—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गांधर्व, राक्षस और पैशाच। फिर तृतीय अध्याय के २५वें श्लोक में है—पैशाचश्चासुरश्चैव न कर्त्तव्यो कदाचन। याने पैशाच और आसुर विवाह सबके लिए वर्जनीय है। गांधर्व विवाह तो बड़ा प्रशस्त है, विशेष कर उस समय जब वर और कन्या एक दूसरे को चुन लें।

—लेकिन गुरुदेव, लोकाचार भी तो कुछ है?

—अलग-अलग जगह के अलग-अलग लोगों ने अपना अलग-अलग लोकाचार बना लिया है। उससे शास्त्र का कोई संबंध नहीं है। वह तो अपना-अपना रिवाज है। उसके लिए किसी संन्यासी की राय क्यों पूछ रहे हो? वह लड़का क्या करता है?

—वह लड़का ब्राह्मण नहीं है।

—ब्राह्मण नहीं है? तो यह बड़ी भयानक बात हो गयी! लड़का ब्राह्मण नहीं है! मुझे गुरु बनाने से पहले क्या तुमने पता लगाया था कि मैं ब्राह्मण हूँ या नहीं? कितने ही अब्राह्मण संन्यासी बने रहते हैं, क्या तुम उनका पता रखते हो? लेकिन मुझे पता है! जब तुम यह पता लगाये बिना किसी को अपना गुरु बना सकते हो, तब ऐसे ही किसी को दामाद क्यों नहीं बना सकते?

—लेकिन मीटू अभी नादान है, वह अपना भला-बुरा नहीं समझ सकती।

—तेईस साल की उम्र में भी अगर वह नादान है तो जिंदगी भर नादान ही बनी रहेगी। तेईस साल की लड़की को नादान बनाये रखना माँ-बाप के लिए अपराध है। बीस साल की उम्र में मैंने ईश्वर को अपना जीवन-साथी मानकर संसार छोड़ा था और तेईस साल की उम्र में मीटू इस संसार के लिए अपना साथी भी नहीं चुन सकेगी? सुनो हृषीकेश, मैं तुमसे एक बात कह रहा हूँ! कम उम्र में शादी करने पर इतना झमेला नहीं रहता—उस वक्त माँ-बाप की बात चलती है। लेकिन जवान हो

जाने पर सभी आज़ादी चाहते हैं। डैने मजबूत हो जाने पर चिड़िया घोंसले में नहीं रहती। यौवन बड़ा ही दुस्साहसी होता है, वह भले-बुरे का मामूली हिसाब नहीं रखता। फिर दुस्साहसी न होने पर यौवन अच्छा भी नहीं लगता। यौवन किसी संकट की परवाह नहीं करता, मौत भी उसके आगे कुछ नहीं है। देखते नहीं कि वे लोग किस तरह हँसते हैं, किस तरह गुस्सा करते हैं और किस तरह रोते हैं। उनकी हर बात में तीव्रता रहती है। उनमें इतना आवेश और अभिमान रहता है कि उन्हें हाथ पकड़कर रोका नहीं जा सकता ! हृषीकेश, यौवन को रोकने मत जाओ, उससे तो बहुत कुछ पुराना ही चरमराकर टूटेगा...

दीवार से टिककर एक बदले हुए आवेश भरे स्वर में संन्यासी अपनी बात कहते जा रहे थे और हृषीकेश बाबू एकटक उनकी तरफ देख रहे थे। इतने दिन बाद गुरुदेव उन्हें अपरिचित जैसे लग रहे थे। वे समझ नहीं पाये कि क्या करें। अचानक गुरुदेव अपनी बात रोककर बोले—मीठू को बुलाओ, जरा उसे देखूँ....

हृषीकेश बाबू पर से मानो आवेश हट गया। धीरे-धीरे उठकर उन्होंने दरवाजा खोला। अलका देवी अब भी वहाँ खड़ी थीं। हृषीकेश बाबू ने उदास स्वर में उनसे कहा—मीठू से यहाँ आने के लिए कहो।

अलका देवी ही जयश्री को साथ लेकर आयीं। चौड़े जरीदार किनारे की सफेद साड़ी पहनकर जयश्री आयी। थोड़ी देर पहले वह नहायी थी, इसलिए बाल भीगे थे, चेहरे पर और भौंहों में पानी की हलकी ठंडक थी। वह कभी गुरुदेव से नहीं डरी। उसने कभी उनका ज्यादा आदर भी नहीं किया। जब वह छोटी थी तो गुरुदेव उसे पास बिठाकर अपनी थाली से उसके मुँह में खाना रखते थे।

बचकानी शिकायत के लहजे में जयश्री बोली—अरे ! आपने अभी तक नहीं खाया, मैंने सोचा था कि आपके कटोरे से थोड़ी खीर खाऊँगी।

होंठों पर स्निग्ध मुस्कान लिये जटाजूटधारी संन्यासी एकटक जयश्री की तरफ देखते रहे। कितनी छोटी लड़की थी, लेकिन अब वह सम्पूर्ण

नारी है। इस नारी के हृदय का रहस्य देवा न जानन्ति कुतो मनुष्या: ! यही तो ह्लादिनी शक्ति है।

जयश्री बोली—गुरुदेव, आप भोजन करने वैठिए। बहुत देर हो गयी है....

अलका देवी की मुख-मुद्रा गंभीर थी। कहीं कुछ अस्वाभाविक हुआ है, इसका उन्हें पता चल गया था। निराशा भरे स्वर में उन्होंने कहा–अब आप भोजन करने वैठिए।—मीठू, दूसरे गिलास में पानी ले आ। यह पानी बहुत देर से खुला पड़ा है।

—नहीं, उसकी जरूरत नहीं है। मेरा भोजन हो चुका है।

—अरे! आपने खाया कहाँ? सब कुछ तो यों ही पड़ा है।

इस प्रसंग को टालते हुए गुरुदेव ने कहा—अरी मीठू, तूने मुझे प्रणाम नहीं किया? मैं कब से यहाँ आया हूँ, लेकिन तू दिखाई नहीं पड़ी....

जयश्री शरमाकर झटपट प्रणाम करने के लिए आगे बढ़ी और बोली —अरे, सॉरी! सॉरी! मैंने सोचा था कि दोपहर के भोजन के बाद जब आपसे गप लड़ाने आऊँगी तब....

गुरुदेव ने बैठे हुए प्रणाम नहीं लिया। वे खड़े हो गये। जयश्री ने झुककर उनके पाँव छुए। गुरुदेव ने आज अब तक किसी को आशीर्वाद नहीं दिया था, लेकिन जयश्री के चोटी बनाये बालों पर हाथ रखा और दु:खी स्वर में कहा—अब मैं जिंदा नहीं रहूँगा री। अब मैं तुम सबको देख नहीं पाऊँगा।

जयश्री चौंककर एकदम सीधी खड़ी हो गयी। वह जल्दी बोल उठी —क्यों? आप ऐसा क्यों कह रहे हैं? क्यों आप ऐसा कह रहे हैं?

गुरुदेव ने उँगली से जयश्री की ठुड्डी को ऊपर उठाकर उसके चेहरे को अच्छी तरह देखा। फिर उन्होंने थकी आवाज में कहा—तू जिंदा रहना बेटी, जिंदा रहना! तू सुखी होने की कोशिश करना!

उसके बाद अलका देवी और हृषीकेश बाबू की तरफ देखकर गुरुदेव

ने कहा—मुझमें इतनी क्षमता नहीं है कि मैं नियति के बारे में बताऊँ। फिर भी जयश्री का चेहरा देखकर लगा कि जल्दी ही उस पर कोई संकट आनेवाला है। जरा सावधान रहना। कहीं तुम्हीं लोग उसके संकट के कारण न बनो !

तीन अक्षर वाले 'प्रेम' को कौन इस दुनिया में लाया ? मधुर समझकर मैंने उसे ग्रहण किया तो मेरा तन-बदन कड़वाहट से भर गया !

—चंडीदास

गेट के सामने रास्ता रोककर अंजन खड़ा था। कोई वहाँ से जा नहीं सकता। रास्ते में आते समय अनुराधा ने दूर से ही उसे देख लिया था। उसने हाथ की किताब-कापी सँभाल ली, साड़ी का आँचल ठीक कर लिया और उसके वदन की पेशियाँ तन गयीं। उसने सोचा कि दिनों दिन इस लड़के की हिम्मत बढ़ती ही जा रही है। इसका कुछ उपाय करना ही होगा।

एकदम अंजन के सामने आकर अनुराधा चुपचाप खड़ी हो गयी, लेकिन अंजन नहीं हटा। वह हँसा भी नहीं। अनुराधा ने दृढ़ स्वर में कहा—हटो ! इस तरह खड़े रहने पर लोग कैसे आयेंगे-जायेंगे ?

—रुकिए, आपसे कुछ बात करनी है।

—मैं तुम्हारी कोई बात नहीं सुनना चाहती। मैंने कह दिया है न कि तुम मुझसे कभी बात नहीं करोगे !

—अरे, हर वक्त इस तरह मिजाज गरम रखने से कैसे काम चलेगा ?

—रास्ते से हटो ! तुमने सोच क्या रखा है ?

अंजन जोर से हँस पड़ा। अगल-बगल वाले मकानों के लोग देख सकते हैं, सड़क पर लोग तमाशा देखने के लिए रुक भी सकते हैं, लेकिन किसी तरफ उसका ध्यान नहीं था। उसके बाप और दो बड़े भाई घर में हैं, लेकिन आजकल वह घर के सामने खड़े होकर सिगरेट पीता है।

अंजन बोला—जरा ठहरिए, मैं आपसे बेकार बातें करना नहीं चाहता। जरूरी काम है।

—मुझसे तुम्हारा कोई जरूरी काम नहीं हो सकता।

—क्यों नहीं हो सकता ? आपको तीस रुपये चंदा देना पड़ेगा।

—चंदा ? किस लिए ?

—हमारी पार्टी के लिए।

—तुम्हारी पार्टी के लिए मैं क्यों चंदा दूँगी ? वह भी तीस रुपये ? यह तो अच्छा मज़ाक है !

—कतई मज़ाक नहीं है। हम लोगों ने आपके नाम उतना ही एलॉट किया है।

—क्या तुम लोगों के एलॉट करने से ही मुझे देना पड़ेगा ?

अंजन जेब से रसीद की किताब निकालकर उसके पन्ने फड़फड़ाने लगा और बोला—देना ही पड़ेगा। मुहल्ले के सभी को देना पड़ेगा।

अब अंजन थोड़ा हटकर खड़ा हो गया था। अनुराधा अपनी छाती से किताब-कापी दबाकर किसी तरह अंदर चली गयी।

अंजन अनुराधा के पीछे चला और बोला—कहाँ जा रही हैं ? रुपये कब देंगी ? अभी तो शुरू महीना है, तनख्वाह जरूर मिल गयी होगी....

पहली मंजिल में सीढ़ी के पास थोड़ा अँधेरा था। अनुराधा जल्दी से वह अँधेरी जगह पार कर सीढ़ी तक पहुँचना चाहती थी। अंजन उसके इतने पास था कि उसे डर लगने लगा। हालाँकि उसने तय कर लिया था कि अगर अंजन उसके बदन में हाथ लगायेगा तो वह कसकर थप्पड़ जमा देगी। फिर भी उसका डर कम नहीं हुआ और उसकी छाती धड़कने लगी।

सीढ़ी पर कदम रखकर अनुराधा बोली—चंदे के लिए मुझसे क्यों कह रहे हो ? मेरे पिताजी से कहो...

—आपके पिताजी को भी देना पड़ेगा और आपको भी....

—इसका मतलब ? एक ही फैमिली से दोनों को चंदा देना पड़ेगा ?

—जरूर। नौकरी करके जब दोनों रुपये ला सकते हैं तो चंदे के मामले में सिर्फ एक ही क्यों देगा ? आप जो बाहर रुपये खर्च करती हैं, क्या उसके लिए हमेशा बाप से परमिशन लेती हैं ?

—यह देखने की तुम्हें जरूरत नहीं है।

—ठीक है, चंदा देती जाइए।

—तुम लोगों के पार्टी-फंड में मैं क्यों चंदा दूँ ?

—बिकॉज वी हैव सिलेक्टेड यू !

—अगर न दूँ तो क्या तुम जबर्दस्ती करोगे ?

सीढ़ी की रेलिंग जहाँ मुड़ी है, वहाँ ऊपर अनुराधा खड़ी थी और नीचे अंजन। अंजन ने चेहरे को उदार और गंभीर बनाकर कहा—नहीं, हम जबर्दस्ती नहीं करेंगे। साधारण लोगों पर हम जुल्म नहीं करते। हम लोगों की पार्टी का यह सिस्टम नहीं है। फिर भी सब कुछ समझकर आप अपनी इच्छा से देंगी...

—तो फिर मैं कह देती हूँ कि उतने रुपये देना मेरे लिए संभव नहीं है। एक-दो रुपये कहो तो दे सकती हूँ।

यह कहकर अनुराधा ऊपर जाने लगी। अंजन झटपट उसके पास पहुँच गया। अनुराधा का हाथ पकड़कर उसने डाँटने के लहजे में कहा —आपने क्या समझ लिया है ? क्या हम लोग कुत्ते हैं ? क्या मैं अपने बाप के क्रिया-कर्म के लिए चंदा माँग रहा हूँ ? मैं देश के काम के लिए चंदा माँग रहा हूँ—सारी बातें कहने का मौका भी नहीं दे रही हैं ! क्या दो मिनट रुककर मेरी बातें सुनने की भी फुर्सत नहीं है ?

अनुराधा ने डाँटकर कहा—अंजन, हाथ छोड़ो....

—आप अगर कायदे से रुककर मेरी बात सुनती तो हाथ न पकड़ना पड़ता।

—पहले तुम हाथ छोड़ो !

—क्या मेरे पकड़ने से आपका हाथ छिल जायेगा ?

प्रणवेश दा अपने दरवाजे के पास आ गये। उन्होंने आश्चर्य से अनुराधा की तरफ देखकर पूछा—क्या हुआ है?

अनुराधा के कुछ कहने से पहले ही अंजन ने कहा—कुछ नहीं हुआ, आप अंदर जाइए।

प्रणवेश दा अंजन की बात की परवाह किये बिना अनुराधा की तरफ एकटक देखते रहे। उन्होंने फिर पूछा—क्या हुआ है अनुराधा?

अनुराधा ने प्रणवेश दा की बात पर ध्यान नहीं दिया। उसने अंजन की तरफ देखकर कहा—पहले हाथ छोड़ो! तुम जैसे लड़के देश का कैसा काम करेंगे, यह मुझे खूब पता है!

—आपकी तरह फालतू लड़कियाँ भी मैंने खूब देखी हैं! आप अपने को क्या समझती हैं?

प्रणवेश दा स्वयं भद्र पुरुष हैं, भद्र परिवेश ही उन्हें पसंद भी है, इसलिए ऐसा दृश्य और ऐसी बातें वे किसी तरह बरदाश्त नहीं कर सके। वे झटपट आगे बढ़े। उन्होंने अंजन का हाथ छुड़ाने की कोशिश कर कहा—यह क्या कर रहे हो? पहले उसका हाथ छोड़ो!

अब अंजन ने अनुराधा का हाथ छोड़ दिया। उसने धूल झाड़ने की तरह अपने दोनों हाथ झटके, फिर दोनों हाथ कमर पर रखकर प्रणवेश दा की तरफ देखा और बड़े ही कर्कश स्वर में कहा—मेरे आगे इस तरह से रोब मत दिखाइए। इसके लिए कोई और आदमी ढूँढ़िए!

विमूढ़-से प्रणवेश दा ने अनुराधा से पूछा—क्या मामला है? कुछ समझ में नहीं आ रहा है!

अंजन ने जवाब दिया—आप समझकर क्या करेंगे? जाइए, अपने घर में जाइए! हर वक्त फ्लैट का दरवाजा क्यों खुला रखते हैं? क्या आपको नहीं मालूम कि फ्लैटोंवाले मकान में ऐसा नहीं चलता?

प्रणवेश दा का चेहरा तमतमा आया। उनकी आँखें लाल हो गयीं। इस तरह की बातें सुनने की उन्हें आदत नहीं थी। वे स्वभाव से बड़े शांत हैं, फिर भी आज उन्हें गुस्सा आ ही गया। उन्होंने चिल्लाकर डाँटते हुए

कहा—यह सब क्या हो रहा है ? मैं दरवाजा खुला रखूँ या बंद, यह भी क्या तुमसे सीखना पड़ेगा ?

अंजन और ज्यादा चिल्लाकर बोला—चिल्लाइए मत ! ज्यादा मत चिल्लाइए ! आप यहाँ बैठे-बैठे बदमाशी करेंगे और हमें वही बरदाश्त करना पड़ेगा ? ऐसा यहाँ नहीं चलेगा ।

अनुराधा का सीढ़ी चढ़ना जारी रहा । उसने अपने को बड़ा ही असहाय महसूस किया । वह समझ नहीं पायी कि कैसे उन दोनों का लड़ना बंद करे ! प्रणवेश दा उसी को बचाने तो आये थे । उस हालत में भी वह प्रणवेश दा को बरदाश्त नहीं कर सकी । वह एक बार भी प्रणवेश दा से नहीं बोली । फिर भी उस आदमी के लिए उसके मन में दया आयी । अंजन जैसा उजड्ड लड़का है, कहीं वह उन्हें और ज्यादा अपमानित न करे । भाभी शायद सब कुछ अपने कमरे से सुन रही होंगी । अनुराधा अब आगे कुछ सोच न सकी । उसने एक बार सोचा कि अंजन को मना किया जाय, लेकिन वह क्या किसी की बात मानेगा ? तीस रुपये चंदे के लिए इतना बवाल हुआ । अनुराधा ने सोचा कि रुपये मैं कल ही दे दूँगी, लेकिन....। उसने फिर सोचा कि मैं प्रणवेश दा से कहूँ कि आप अपने घर में चले जाइए । फिर सोचा कि अंजन से कहूँ कि तुम अब चिल्लाओ मत, मैं थोड़ी देर बाद तुम्हारा चंदा दे रही हूँ...

लेकिन लज्जा और घृणा से अनुराधा का सारा शरीर सुन्न हो चला था । उससे कुछ कहते नहीं बना । वह जल्दी-जल्दी ऊपर चली गयी । वे दोनों अब भी चिल्ला रहे थे ।

अनुराधा की माँ ने पूछा—नीचे कौन लोग इस तरह चिल्ला रहे हैं ?

जरा देर रुककर अनुराधा ने अपने को सँभाल लिया । उसकी छाती मानो एकदम खाली हो गयी थी, जैसे उसमें जरा भी हवा न हो । फिर उसने आँचल से चेहरे का पसीना पोंछकर कहा—कुछ नहीं, कुछ नहीं हुआ । मुझे कुछ नहीं मालूम ! माँ, चलिए, हम यह मकान छोड़कर कहीं

और चले जायँ। यह मकान मुझे अच्छा नहीं लगता। इस मकान में ज्यादा दिन रहने पर मैं पागल हो जाऊँगी !

लेकिन दूसरे ही दिन से अंजन का व्यवहार एकदम बदल गया। अब वह गेट के पास खड़ा नहीं रहता। घर से निकलते या घर लौटते समय अनुराधा को अंजन आसपास कहीं दिखाई नहीं पड़ता। सामने वाली चाय की दुकान पर बैठना भी उसने बंद कर दिया था। फिर वह चंदा माँगने भी नहीं आया।

दो-तीन दिन बाद अंजन एक दिन रास्ते में दिखाई पड़ गया। अनुराधा गली के मोड़ से मुड़ी ही थी कि अंजन एकदम सामने आ गया। एक बार अनुराधा की तरफ देखकर उसने मुँह फेर लिया। फिर वह कुछ कहे बिना बगल से निकल गया।

अनुराधा को चैन की साँस लेना चाहिए था, लेकिन उस समय उसे आश्चर्य हुआ और उससे भी ज्यादा बुरा लगा। अंजन के इस परिवर्तन का कोई कारण उसकी समझ में नहीं आया। क्या उस दिन सीढ़ी पर उसने अंजन का बहुत ज्यादा अपमान कर दिया था ? मन ही मन वह अंजन को चंदा देने के लिए तैयार हो चुकी थी लेकिन वह तो चंदा माँगने ही फिर नहीं आया ! अब उसे खुद बुलाकर चंदा देने का क्या मतलब हो सकता था ?

इसके बाद जब भी मुलाकात हुई, अंजन ने मुँह फेर लिया। घृणा से नहीं, बल्कि इस तरह जैसे वह अनुराधा को पहचानता ही न हो। अपरिचित लड़कियों की तरफ भी तो लड़के देखते रहते हैं, लेकिन वह अब वैसा भी नहीं करता। कम से कम अगर वह चंदा ही ले लेता तो अनुराधा को चैन मिलता। इधर अनुराधा बराबर बैग में चंदे के रुपये रखे रहती थी। एक दिन वह अंजन को देखकर जल्दी से मुस्करायी भी, लेकिन अंजन ने उसकी तरफ ध्यान ही नहीं दिया।

आजकल सीढ़ी से ऊपर आते समय अनुराधा दूसरी मंजिल के दरवाजे की तरफ एकदम नहीं देखती। आते-जाते समय वह आँखें नीची

किये रहती है। कभी-कभी दरवाजे के पास प्रणवेश दा के होने का उसे पता चल जाता है, लेकि वह भूलकर भी उधर नहीं देखती। प्रणवेश दा धीरे से बुलाते, तो भी वह जवाब नहीं देती। भिखारी की तरह करुण प्रार्थना भरे स्वर में प्रणवेश दा उसे बुलाते थे। वैसे सम्मानित और भले आदमी की वैसी दशा देखकर उसे कभी-कभी दया आती, लेकिन वह कुछ भी नहीं कर सकी।

रिनी अब भी ऊपर अनुराधा के घर में आकर खेलती थी। कभी-कभी वह धीरे-से अनुराधा से कहती—टुकू मौसी, आप हमारे घर नहीं आयेंगी? पिताजी ने आपको बुलाया है।

अनुराधा उतनी छोटी लड़की का मन दुखाना नहीं चाहती। वह मीठी मुस्कान के साथ कहती है—आऊँगी, आऊँगी, दो-चार दिन बाद आऊँगी, इस समय मैं कॉलेज के इम्तहान की कापियां जांच रही हूँ न! तुम्हारी माँ कैसी हैं? माँ से कहना कि मैं जल्दी ही आऊँगी।

उस मकान का हर आदमी प्रणवेश दा की तारीफ करता था। अनुराधा के माँ-बाप अक्सर कहा करते थे—वैसी शांत प्रकृति का आदमी आजकल नहीं दिखाई पड़ता। फिर उसमें जिम्मेदारी का बोध भी कितना था! बीवी कैसी बीमार है, लेकिन उसके चेहरे पर शिकन नहीं दिखाई पड़ती। उतनी छोटी बच्ची की देखभाल करना, गृहस्थी सँभालना सब कुछ वह अकेले करता है। एक दिन भी वह दफ्तर से लौटने में देर नहीं लगाता!

अनुराधा माँ-बाप की बातें सुनती और चुप रहती।

कॉलेज जाने के लिए अनुराधा को सवेरे जल्दी उठ जाना पड़ता था। लेकिन उस दिन उसकी नींद और जल्दी खुल गयी। मकान के सामने तरह-तरह की अपरिचित आवाजें हो रही थीं। उसने खिड़की से झांक-कर देखा कि उसके मकान के फाटक के सामने पुलिस की तीन गाड़ियां खड़ी थीं। बंदूकधारी सिपाहियों से गली भर गयी थी। आजकल पुलिस देखने पर अधिक उत्सुकता नहीं दिखानी चाहिए। वह खिड़की के सामने

से हट आयी। थोड़ी ही देर बाद मकान के सारे लोग जग गये। पुलिस आने के बारे में लोग तरह-तरह की बातें करने लगे। अनुराधा के दोनों छोटे भाई-बहन नीचे जाकर तमाशा देखने की जिद्द करने लगे। उन दोनों को रोक रखना मुश्किल हो गया।

हालाँकि थोड़ी देर बाद असली खबर मिल गयी कि पुलिस अंजन को पकड़ने आयी थी। अंजन मकान के पिछवाड़े की दीवार फाँदकर भागने लगा था, लेकिन पकड़ा गया। अब उसके फ्लैट की तलाशी ली जा रही थी।

एक छोकरे को पकड़ने के लिए तीन गाड़ी पुलिस लगती है! यह सोचकर अनुराधा सचमुच आश्चर्य में पड़ गयी। आखिर अंजन ने क्या किया है? उसने नीच अपराधी की तरह कोई काम किया है, यह मान लेने को मन नहीं करता। बी० एस-सी० पास समझदार लड़का है। धीरे-धीरे और भी खबरें मिलीं। उसके घर से तीन-तीन बम और भारी मात्रा में बम बनाने के सामान बरामद हुए। इसके अलावा पोस्टर और दूसरे कागजात मिले। उसके विरुद्ध दंगा-फसाद करने के गंभीर अभियोग थे।

नहा-धोकर रोज की तरह कॉलिज जाने के लिए अनुराधा तैयार हो गयी। आज उसका मन बड़ा उतावला था। नीचे सीढ़ी के पास अब भी पुलिसवालों का आना-जाना जारी था। अंजन के माँ-बाप दिखाई पड़ गये। उदास और दुःखी। किसी तरह उस भीड़ में से रास्ता बनाकर अनुराधा को आगे बढ़ना पड़ा।

पुलिस की गाड़ी में अंजन बैठा था। उसके हाथों में हथकड़ियाँ थीं। उसके दोनों बगल बंदूक लिये सिपाही बैठे थे। उसके चेहरे से लापरवाही का भाव झलक रहा था। अनुराधा की आँखों से आँखें मिलते ही उसने मुँह फेर लिया। अनुराधा ठिठककर खड़ी हो गयी। मानो उसकी छाती में कोई जबर्दस्त धक्का लगा। अंजन की इस उपेक्षा से आज सचमुच उसने अपने को अपमानित महसूस किया। फिर भी उसने सोचा कि आगे

बढ़कर अंजन से कुछ कहना चाहिए। लेकिन क्या कहे ? कुछ तो कहना ही चाहिए, लेकिन क्या कहे ? थोड़ी देर वह दुविधा में खड़ी रही। फिर धीरे-धीरे चली गयी।

दिया जलने के बाद शांतनु से अनुराधा की मुलाकात हुई। शांतनु ने उसे कॉलेज में फोन किया था। दफ्तर से लौटकर पार्क स्ट्रीट के मोड़ पर शांतनु खड़ा था। अनुराधा वहीं आयी। दोनों एक ठंढे रेस्तराँ में जाकर बैठे। टेबिल पर दोनों केहुनियाँ रखकर शांतनु ने हथेलियों में ठुड्डी रखी और कहा—आज मेरा मन बड़ा उदास लग रहा है।

अनुराधा ने पूछा—क्यों ?

—न जाने क्यों मैं बदलता जा रहा हूँ। मेरे लिए जो संभव नहीं है, वही काम मैं कर रहा हूँ। जानती हो अनुराधा दो दिन पहले दफ्तर में मैंने ऐसा ही एक काम किया। मेरा असिस्टेंट अक्सर काम में गलती करता था। बेचारा बूढ़ा था अक्ल भी उसमें कुछ कम थी। मामूली बात भी वह जल्दी नहीं समझ सकता था। उसकी वजह से आये दिन मुझे परेशानी होती थी। परसों भी उसने एक मामूली गलती कर दी और मेरा मिजाज भी इतना गरम हो गया कि मैंने अचानक टेबिल पर जोर से मुक्का मारा। मुक्का मारते ही दावात उलट गयी और सारे कागज खराब हो गये। फिर भी मुझे होश नहीं आया। मैंने उससे कहा —आपकी खोपड़ी में तो गोबर भरा हुआ है! और कितने दिन इस तरह काम करेंगे ? मेरी बात सुनकर बेचारा एकदम सिकुड़ गया। अपमान से उसका चेहरा बदरंग हो गया। मुझसे ऐसे बर्ताव की उसे एकदम उम्मीद नहीं थी। मैं अभी तक नहीं समझ पा रहा हूँ कि मैंने कैसे बाप की उमर के एक आदमी को....

लगा कि शांतनु को बड़ा पश्चात्ताप था। अनुराधा ने नरमी से कहा—उससे क्या हुआ! हर वक्त तो आदमी का मिजाज ठीक नहीं

रहता ! क्या आपने उसे नौकरी से निकाल दिया ? अगर ऐसी बात है तो उसे बुला लीजिए....

शांतनु ने सूनी आँखों से देखकर कहा—अब वैसा नहीं हो सकता ।

—क्यों ?

—कल वे दफ्तर नहीं आये । आज सवेरे दफ्तर पहुँचकर सुना कि कल आधी रात के बाद उनका देहांत हो गया ! एकाएक स्ट्रोक हो गया था....

अनुराधा थोड़ी देर चुपचाप बैठी रही । इस तरह की घटना के बारे में चटपट कोई मंतव्य देना संभव नहीं होता । कुछ समय बाद उसने कुछ कहना चाहा तो शांतनु ने हाथ के इशारे से उसे रोककर कहा—नहीं, नहीं, मुझे सांत्वना देने की जरूरत नहीं है । मेरे डांटने से उनकी मृत्यु हुई, शायद यह सच न हो । उनकी उम्र काफी हो गयी थी, सुना कि उनको हार्ट की बीमारी भी थी । खैर, यह सब बाद में सुना । हो सकता है कि उनकी मृत्यु स्वाभाविक ढंग से हुई है, लेकिन मेरा मन तो दुःखी होगा ही । अकारण मुझसे अपमानित होकर उनकी मृत्यु हो गयी । मैंने कहा था न कि और कितने दिन इस तरह काम करेंगे । उनको मेरी बात इतनी बुरी लगी कि फिर उन्होंने एक दिन भी नौकरी नहीं की ।

टेबिल के शीशे पर उंगली से अपना नाम लिखते-लिखते अनुराधा बोली—अब इस बारे में ज्यादा सोचना ठीक नहीं है ।

—और क्या सोचूंगा, बता सकती हो ? जानती हो, इस तरह मेरा मिजाज खराब करने के लिए कौन जिम्मेदार है ? जयश्री । सात आठ दिन हो गये, उसकी कोई खबर नहीं मिली । मकान का किराया एडवांस कर दिया गया है और छह दिन बाद रजिस्ट्री होने की बात है । इस समय अगर उसकी कोई खबर न मिले तो मेरे मन की क्या हालत होगी, तुम्हीं बताओ ! सिर्फ दफ्तर वाली ही बात नहीं है, मेरे मकान में एक पहाड़ी रहता था उस दिन जिसे तुमने देखा था—आँख का मरीज, सीधा सादा आदमी, उससे भी उस दिन कहा सुनी हो गयी । कल एक टैक्सी

वाले से मारपीट होने की नौबत आ गयी थी। जानती हो, मैं इस तरह वायलेंट नेचर का कभी नहीं था। मैंने कभी किसी से दुर्व्यवहार नहीं किया। लेकिन अब मुझसे कुछ भी बरदाश्त नहीं होता। मर्द होने के नाते यह मेरे लिए लज्जा की बात है। एक बात और सोचो, मेरा कहीं कोई नहीं है, कोई वैसा दोस्त भी नहीं है कि मन दुःखी होने पर—जैसा कि दफ्तर के विश्वनाथ बाबू के लिए हुआ—किसी से कुछ कहकर मन भी हलका नहीं कर सकता।

अनुराधा ने सिर उठाया और मुस्कराकर कहा—जयश्री परसों आयेगी।

—क्या तुमसे उसकी मुलाकात हुई थी ?

—नहीं, टेलीफोन पर बात हुई थी।

—वह मेरी चिट्ठी का जवाब क्यों नहीं देती ?

—आपने कब चिट्ठी लिखी थी ?

—इधर कई दिनों में दो चिट्ठियाँ लिखी हैं। सचमुच अनुराधा, मेरा मन बड़ा बेचैन होने लगा है।

इधर अनुराधा चार-पाँच दिन से जयश्री के घर नहीं गयी, इसलिए शांतनु की किसी चिट्ठी के बारे में वह नहीं जानती। वह हँसती हुई बोली—आप बड़े बुद्धू प्रेमी जैसा व्यवहार कर रहे हैं। वह चिट्ठी नहीं लिख सकी, क्योंकि उसके घर में उसके पिताजी के गुरुदेव वगैरह काफी लोग आये हुए हैं....

—गुरुदेव ? क्या वे मंत्र फूंककर जयश्री का मन बदल देंगे ?

—शायद उसी की कोशिश हो रही है !

—जरूर खूब पूजा-पाठ हो रहा है ! ऐसे पूजा-पाठ में खूब मिठाई बँटती है, है न ?

इस बात पर दोनों दिल खोलकर खूब हँसे। उसके बाद अनुराधा बोली—सुनिए जनाब ! घबड़ाने की कोई बात नहीं है। कोई साधु-संन्यासी

जयश्री का मन नहीं बदल सकता। वह बड़ी तेज लड़की है। क्या अभी तक आप उसे नहीं पहचान सके ?

थोड़ी देर बाद कॉफी के प्याले में चुस्की लगाकर अनुराधा धीरे-धीरे बोली—आज मेरा मन भी बड़ा उदास है। हमारे मकान के नीचे वाले फ्लैट में एक लड़का रहता है अंजन, आज उसे पुलिस पकड़ ले गयी। मुझे लगता है कि उसके लिए मैं भी दोषी हूँ....

—मुझे उसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं दिखाई पड़ता।

—आप देख भी कैसे सकते हैं ? जैसे आपके दफ्तर के मामले में मुझे आपका कोई खास दोष नहीं दिखाई पड़ रहा है। ये सब दोष और ये सब दुःख बड़े ही व्यक्तिगत होते हैं; कहकर दूसरे को ठीक से नहीं समझाया जा सकता। फिर भी कहना ही पड़ता है। मुझे बस यही लग रहा है कि मैं भी दोषी हूँ, उस मामले में मुझे कुछ करना चाहिए था, लेकिन क्या करना चाहिए था, जरा बताइए !

—अब मैं क्या बताऊँ अनुराधा, मुझे तो घटना के विषय में कुछ भी नहीं मालूम !

थोड़ी देर दोनों चुपचाप बैठे रहे। उसके बाद वे रेस्तराँ से निकले। कुछ दूर दोनों चुपचाप चलते रहे। फिर शांतनु बोला—चलो, तुम्हें घर पहुँचा दूँ।

—नहीं, नहीं, उसकी जरूरत नहीं है।

—क्यों ?

—आपको उलटा जाना पड़ेगा।

फिर घुटने तोड़कर अनुराधा हँसी। वह बोली—आज आपको किस के साथ घूमना चाहिए था और आप घूम किसके साथ रहे हैं ! खैर, कोई बात नहीं जयश्री परसों आ रही है। याद रहेगा न ? ठीक छह बजे, गड़ियाहाट के मोड़ पर उसी जगह....

—तुम भी आओगी न ?

—नहीं।

—क्यों ?

—वाह ! मेरा अपना कोई काम नहीं रह सकता क्या ? फिर आप लोग क्या हर वक्त मुझसे ही बात करेंगे ? क्या आप लोग अलग बात नहीं कर सकते ? क्या कोई प्लान-प्रोग्राम नहीं है ?

—नहीं, प्लीज तुम भी आना...

—नहीं, मैं परसों सचमुच नहीं आ पाऊँगी। रजिस्ट्री के दिन आऊँगी....

—वह तो तुम्हें आना ही पड़ेगा। परसों भी अगर जयश्री न आये तो मेरा दिमाग ठीक नहीं रहेगा। फिर तो मैं सीधे उसके घर पहुँच जाऊँगा, जरूरत पड़ी तो उसे जबर्दस्ती खींच लाऊँगा....

—वाह, यही तो मैं चाहती हूँ !

अनुराधा अपने मकान में पहुँचने के लिए गली में घुसी लेकिन शांतनु काफी देर नहीं खड़ा रहा।

न वा अरे सर्वस्य कामाय सर्वं प्रियं भवति आत्मानस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति ।

—बृहदारण्यकोपनिषत्

(अरी मैत्रेयी) अन्य सभी की प्रीति के लिए जो लोग कभी प्रिय नहीं होते, अपनी-अपनी प्रीति के लिए वे ही सब लोग प्रिय लगते हैं ।

कमरे में घूम-घूमकर जयश्री बालों में कंघी कर रही थी । वह थोड़ी देर कहीं भी चुप नहीं खड़ी हो रही थी । वह धीरे-धीरे किसी गीत की कोई कड़ी गुनगुना रही थी । कभी वह खिड़की के पास जा खड़ी होती तो कभी शीशे के सामने ।

जयश्री जूड़ा बना चुकी, इतने में हृषीकेश बाबू ने उसे बुलाया । गुरुदेव के चले जाने के बाद वे बुरी तरह मायूस हो गये थे । वे दफ्तर से जल्दी लौट आते थे और घर में देर तक चुपचाप बैठे रहते थे । वे किसी से ज्यादा बात भी नहीं करते ।

दिन काफी छोटा हो गया था । शाम होते न होते अँधेरा छा जाता था । बरामदे के सामने हृषीकेश बाबू आरामकुर्सी पर बैठे थे । कमरे में आकर जयश्री बोली—पिताजी, आपने तो बत्ती भी नहीं जलायी ?

—रहने दे, बत्ती जलाने की जरूरत नहीं है । जरा तू इधर तो आ बेटी...

जयश्री पास आयी तो उसके कपड़े देखकर हृषीकेश बाबू ने पूछा —क्या तू कहीं जा रही है ?

—जी हां, चाची जी के साथ जाऊंगी ।

—कहां ?

—मुझे नहीं मालूम, चाची जी ने कहीं चलने के लिए कहा है....

—अच्छा, तो जा....

—आपने क्यों बुलाया ?

—यों ही, सोचा कि तुझसे ही कुछ बातें करूँ....

—कीजिए न, अभी तो देर है।

—फिर वह कुर्सी खीचकर वैठ जा। तेरी माँ की सेहत इधर काफी खराब हो गई है ? तूने देखा है न ?

—नहीं तो ! क्या हुआ है ? कोई बीमारी तो नहीं लगती...

—हाँ, बाहर से पता नहीं चलता। वह किसी से कुछ नहीं कहती...

—नहीं पिताजी, आप बहुत ज्यादा सोचते हैं। माँ को कुछ नहीं हुआ...

—नहीं हुआ तो अच्छी बात है। लेकिन तू जरा ख्याल रखना। इतने दिन तो तेरी माँ ने तेरा ख्याल रखा है, अब तू बड़ी हो गयी है, इसलिए उसका तू ख्याल रखना।

—पिताजी, आपकी तबीयत तो ठीक है न ?

—हाँ, मैं ठीक हूँ।

—आजकल आप इस तरह उदास क्यों रहते हैं ? इस बार गुरुजी अचानक चले गये, क्या इसीलिए आप दुःखी हैं ?

—नहीं री, ऐसी बात नहीं है। गुरुदेव ने एक बात कही थी, उसी पर सोच रहा हूँ। गुरुदेव ने मुझसे कहा था कि चलो, मेरे आश्रम में चलकर रहो।

—चलिए न, हम लोग सब एक बार घूम आयें। बहुत दिन पहले एक बार गयी थी और वह जगह मुझे बड़ी अच्छी लगी थी। सचमुच कितनी अच्छी जगह है !

हृषीकेश बाबू ने उदासी भरी मुस्कराहट के साथ कहा—नहीं री, उस तरह जाने की बात उन्होंने नहीं कही।

जयश्री थोड़ी अनमनी हो गयी। अगर सब लोग गुरुदेव के आश्रम

में जाते हैं तो भी उसके लिए जाना संभव नहीं है। वह तो कुछ दिनों बाद ही यह घर छोड़कर चली जायेगी।

हृषीकेश बाबू बोले—गुरुदेव ने संसार छोड़कर जाने की बात कही थी। इसलिए इधर कई दिन से बहुत-सी पुरानी बातें याद आ रही हैं। मान ले, अगर मैं सब कुछ छोड़-छाड़कर चला जाऊँ तो तेरी माँ का क्या होगा।

—वाह! आप क्यों जायेंगे? आप जहाँ जायेंगे, माँ भी वहीं जायेंगी।

हृषीकेश बाबू थोड़ी देर बेटी की तरफ देखते रहे। उस हलके अँधेरे में अपनी खूबसूरत जवान बेटी की तरफ देखकर ही उन्होंने मानो उसके बचपन तक देख लिया। फिर लंबी साँस छोड़कर वे बोले—एक कहानी सुनेगी?

कहानी! जयश्री जरा मुस्करायी। फिर छोटी बच्ची की तरह मचलकर वह बोली—हाँ, हाँ, कोई कहानी सुनाइए बहुत दिन हो गये, आपने कोई कहानी नहीं सुनायी!

कुर्सी से टिककर हृषीकेश बाबू ने माथे पर दोनों हाथ रखे। उसके बाद आवेश भरे स्वर में वे बोले—वह बड़े तूफान की रात थी। सन्-संवत् ठीक से याद नहीं है, लेकिन बीस-बाईस साल पहले की बात है। दिन भर टिप-टिप पानी बरस रहा था, शाम होते ही तेज अंधड़ चलना शुरू हो गया। मैं एक दम्पति के बारे में कह रहा हूँ। उस समय उनके पास कार नहीं थी। माली हालत बस मामूली थी। पत्नी के बच्चा होने वाला था, नौवां महीना चल रहा था, बस कुछ दिन ही बाकी थे। लेकिन उसी रात दर्द शुरू हो गया। भयानक दर्द! दिन में कुछ पता नहीं चला, सब कुछ ठीक था और उस बेचारी ने घर का सारा काम-काज किया था। लेकिन अचानक आधीरात को कैसा तो दर्द शुरू हो गया। पति ने मुहल्ले के एक टैक्सीवाले से कह रखा था कि अगर कभी ज्यादा रात को जरूरत पड़े तो तुम्हें बुलाऊँगा। टैक्सीवाला उसके लिए राजी भी हो गया था। लेकिन भाग्य ऐसा था कि उस दिन वही टैक्सीवाला नहीं

मिला । नहीं मिला, यानी उसकी हालत चलने लायक नहीं थी । आँधी-तूफान की रात देखकर उसने खूब नशा किया था । पति के एक रिश्तेदार के पास कार थी । उसे फ़ोन किया गया लेकिन उस दिन वह भी कलकत्ते में नहीं था ।

काफी दौड़धूप के बाद भी टैक्सी नहीं मिली । सड़क पर घुटने भर पानी जम गया था । उधर तकलीफ के मारे बेचारी पत्नी का चेहरा एकदम नीला पड़ गया था । अक्सर शुरू में ही इतना दर्द नहीं होता । अंत में घोड़ागाड़ी से ही उसे अस्पताल ले जाया गया । उन दिनों घोड़ागाड़ियाँ खूब चलती थीं । उन लोगों के घर से अस्पताल ज्यादा दूर नहीं था ।

अस्पताल पहुँचने के बाद डाक्टर ने कहा—अभी आपरेशन करना होगा । पता नहीं क्या गड़बड़ हो गयी थी । आपरेशन करने पर भी जच्चा-बच्चा दोनों के बचने की उम्मीद कम ही थी । बच्चे को बचाने पर माँ की जिंदगी...

हृषीकेश बाबू अचानक सीधे होकर बैठ गये । उन्होंने जयश्री का एक हाथ पकड़कर कहा—यह कहानी सुन लेने पर शायद तू मुझे माफ नहीं कर सकेगी, लेकिन मैंने डाक्टर से कहा था कि संतान को बचाने की जरूरत नहीं है, अलका को बचाइए । मैं जरा भी नहीं समझ पाया था कि तेरी माँ को पता चल जायेगा, लेकिन उसे पता चल ही गया था । उतनी तकलीफ में भी तेरी माँ ने होश नहीं खोया था । वह बार-बार चिल्लाकर कहने लगी—नहीं, उसे बचाना होगा, बचाना होगा !

—उसके बाद तीन घंटे कैसे बीते, यह मैं नहीं समझा सकूँगा । परेश उस समय छोटा था । वह बराबर मेरे पास खड़ा था । मेरे माँ-बाप जिंदा नहीं थे । मुझे भरोसा देने वाला कोई नहीं था । ऑपरेशन रूम से जब तेरी माँ को बाहर लाया गया तब उस पर सफेद चादर पड़ी थी और वह ट्रॉली पर लेटी थी । ठीक उसी तरह जैसे मुर्दा ले जाया जाता है । मैं वह दृश्य देखकर रो पड़ा था । एक नर्स ने पास आकर कहा कि आपके बेटी हुई है । अगर उस समय वह बेटी मेरे पास होती तो शायद

मैं उसका गला दबाकर उसे मार ही डालता। उस समय तक मुझे यह पता नहीं था कि अलका जिंदा रहेगी या नहीं। खैर उसके बाद चौबीस घंटे तक मौत से लड़ाई होती रही। डा० के० बी० बनर्जी उन दिनों बहुत बड़े डाक्टर थे, वे बराबर अलका के पास बने रहे। चौबीस घंटे बाद अलका ने जब आँखें खोलीं तब उसने पहला सवाल किया वह कहाँ है ? अलका ने मेरे बारे में नहीं पूछा था, उसने तुझको ही पहले देखना चाहा था।

हृषीकेश बाबू ने जैसे भावावेग के साथ आवेश भरे स्वर में यह कहानी सुनायी थी, जयश्री में वैसी प्रतिक्रिया नहीं हुई। आजकल के लड़के-लड़कियों ने ऐसी बातों को स्वाभाविक मान लिया है। जयश्री इतनी देर तक मन लगाये कहानी सुन रही थी, अब हँसते-हँसते हलके स्वर में बोली—तो पिताजी, आपने मुझे मार डालना चाहा था ? गनीमत रही कि मार नहीं डाला !

हृषीकेश बाबू बड़े आश्चर्य से अपनी लड़की की तरफ देखते रहे। फिर उन्होंने काँपती हुई आवाज में कहा—हाँ री, मैंने तुझे इस दुनिया में आने ही देना नहीं चाहा था। डाक्टर ने पूरे विश्वास के साथ कहा था कि दोनों में से सिर्फ एक की जान बचेगी, इसलिए मैंने अलका को बचाना चाहा था....

—आपने ठीक ही किया था।

—उस समय क्या मैं समझ सका था कि बिल्ली के छौने की तरह लगने वाली वह बच्ची कभी इतनी सुंदर होगी। लेकिन तेरी माँ से गलती नहीं हुई थी। उसने अपनी जिंदगी देकर भी तुझे बचाना चाहा था। इसलिए तुझ पर उसी का पूरा दावा है।

गद्गद होकर जयश्री ने पूछा—आज आपने मुझे अचानक यह कहानी क्यों सुनायी ?

—यों ही ! इधर कई दिनों से बहुत-सी पुरानी बातें याद आ रही हैं।

—नहीं, आपने जरूर किसी और ही कारण से कहा है।

—बता, तो कौन-सा कारण हो सकता है ?

—आप ही बताइए।

—मैंने सोचा था कि तू यह सुनकर मुझ पर बहुत नाराज होगी।

—वाह ! मैं क्यों नाराज होऊँगी ? ऐसी आकस्मिक घटनाएँ तो होती ही रहती हैं। एक्सिडेंट के कारण मनुष्य के जीवन में बहुत कुछ होता है। अब मैं इतनी बड़ी हो गयी हूँ, इसलिए मरने की बात सोचने पर डर लगता है। अगर मुझमें यह समझ ही पैदा न होती तो मरने में भला क्या आपत्ति थी ?

—क्या यह तू सोच सकती है कि तू पैदा नहीं हुई।

—जी नहीं, अब तो वैसा नहीं सोच सकती।

—मैं भी तो यही सोचता हूँ। मीठू, मेरे बारे में चाहे तेरी जैसी राय हो, लेकिन तू अपनी माँ को तकलीफ मत देना।

—मैं तो किसी को दुःख पहुँचाना नहीं चाहती, न आपको और न माँ को। आप लोग सिर्फ अपनी-अपनी जिद लेकर बैठे हैं।

—क्या यह सिर्फ जिद है ?

—पिताजी आप तो मुझे जानते हैं। क्या आप यही समझते हैं कि मैं बेवकूफ की तरह कोई काम कर सकती हूँ ?

—क्या तू समझती है कि हम तेरे माँ-बाप होकर भी तुझ गलत राय दे सकते हैं ? हम क्या तेरा बुरा चाहते हैं ?

इतनी देर तक बहस करना जयश्री की बरदाश्त के बाहर था। उसने एकाएक महसूस किया कि उसे मानो तर्क के जाल में फँसाया जा रहा है। अब कोई नया तर्क देकर उसके लिए बचना मुश्किल है। इसलिए उसने वही तरीका अपनाया जो आसान और स्वाभाविक था। उसने रूठ कर दोनों हाथों से मुंह ढँक लिया। फिर वह फफक-फफककर रोने और नासमझ की तरह बार-बार कहने लगी—आप लोगों ने मुझे मार क्यों नहीं डाला ? तभी क्यों नहीं मार डाला।

हृषीकेश वाबू बड़े असमंजस में पड़ गये। जब वे जयश्री को उसके जन्म से संबंधित कहानी सुना रहे थे तभी उनको आशंका हो गयी थी कि अब वह रो देगी। लेकिन तब तो लड़की मजे से हँसती रही, लेकिन अब उससे कौन-सी ऐसी बात कह दी गयी है कि वह इस तरह रोने लगी! यह हृषीकेश बाबू समझ नहीं सके। उन्होंने बेटी के सिर पर हाथ रख कर कहा—अरी मीठू, तू रो क्यों रही है? कैसी पगली लड़की है! अरी मीठू, तेरी माँ किधर गयी? अलका....

बाप का हाथ छुड़ाकर जयश्री बड़ी तेजी से कमरे के बाहर चली गयी। फिर वह धम-धम सीढ़ी उतरकर सीधे रसोईघर में चली गयी। अलका देवी उस समय रसोइये को रसोई के बारे में समझा रही थीं। रसोइये के सामने ही जयश्री ने अलका के दोनों हाथ पकड़कर कहा—माँ, आप सच-सच बताइए न, उस दिन आपने क्या कहा था? आपने तो यही कहा था कि मैं जिसमें सुखी होऊँ, आप वही चाहती हैं?

अलका देवी बोलीं—अरी, तू ऐसा क्यों पूछ रही है? हाँ मैंने कहा तो था!

—सच बताइए, आपने वह बात मन से कही थी या बेमन से?

—मन से कहा था। लेकिन तू कहना क्या चाहती है?

—अगर आपने वह बात अपने मन से कही थी तो सुन लीजिए कि मैं शांतनु से शादी करूँगी। यही फैसला फाइनल है, एकदम फाइनल! इसके बाद आप लोग इसमें बाधा डालने की जितनी कोशिश करेंगे, उतना ही दुःख पायेंगे। फिर मेरा कोई दोष नहीं रहेगा। बस, कुछ ही दिन बाद मैं...

अलका देवी जयश्री को साथ लिये रसोईघर से जल्दी-जल्दी निकल आयीं। उनके साथ सुजाता भी बाहर आयीं। अलका देवी बोलीं—मीठू एक बात सुन दिमाग ठंडा कर। मैं उस लड़के से मुलाकात करूँगी।

—किस लड़के से?

—अरे, शांतनु से। तुमसे शादी करने के लिए मैं खुद उससे कहूँगी।

तब तू तो खुश होगी ? फिर तेरे बाप को जैसे भी होगा मैं राजी कर लूंगी। लेकिन तू एक वायदा कर कि कुछ दिन रुकी रहेगी। कम से कम छह महीने। गुरुदेव ने कहा है कि तेरे साथ एक अशुभ योग है। वह कट जाय। वे भी इसी के लिए इतने परेशान हो रहे हैं अभी तुझे जरा सावधान रहना पड़ेगा।

—अगर आप लोग मुझे नहीं रोकेंगे तो मेरा अशुभ योग कट जायेगा।

सुजाता हँसती हुई बोली—अच्छी पगली लड़की है। शादी करने के लिए एकदम बेचैन हो गयी है। ठीक है मीठू, उसी प्रोफेसर से तेरी शादी होगी। मैं देख रही हूँ कि प्रोफेसर की बीवी बने बिना तुझे चैन नहीं मिलने का !

—अब वह प्रोफेसरी नहीं करता।

—अरी, वही हुआ। एक बार जो प्रोफेसरी कर लेता है, वह हमेशा प्रोफेसर ही रहता है, बाद में चाहे जो करे, भले ही पार्लमिंट का मेम्बर बन जाय ! ले, अब चल ! वहाँ नहीं जायेगी ?

अलका देवी बोलीं—हाँ, हाँ, जरा चाची के साथ घूम आ। कहाँ जाओगी तुम दोनों ?

—रवीन्द्र सदन में 'माया का खेल' हो रहा है, वही देख आयें। मीठू, जरा चेहरे पर पाउडर लगा ले, रोकर तूने चेहरे की कैसी हालत बना ली है ! दीदी, तुम भी चलोगी ?

—नहीं, तुम दोनों जाओ। जरा सावधान होकर जाना—बड़ा बुरा वक्त चल रहा है....

घर की कार से नहीं, दोनों टैक्सी से जा रही थीं।

थोड़ी दूर चलने के बाद सुजाता बोलीं—सुन, अब मुंह मत लटकाये रह। माँ-बाप की बात पर ज्यादा गुस्सा नहीं करना चाहिए।

—कहाँ मुँह लटकाये हूँ ?

—क्यों नहीं ? दाहिनी भौंह पोंछ, पाउडर लगा है। देखूँ, बिंदी देखूँ! जरा तिरछी है। खैर, ऐसी कोई बात नहीं है। अच्छा मीठू, तू अपने प्रोफेसर दोस्त से मिलने कहाँ-कहाँ जाती है ?

—चाची जी, आप उसे प्रोफेसर क्यों कहा करती हैं ? क्या उसका कोई नाम नहीं है ?

—अरी हाँ, क्या अच्छा-सा नाम है उसका ? शांतनु ! हाँ, शांतनु। मेरी एक मौसी के लड़के का नाम भी शांतनु है, दुबला इकहरा वदन, एक आँख जरा ऐंची। शांतनु नाम सुनते ही मुझे उसकी याद आती है।

—हाँ, हाँ, हैंडलूम हाउस के काउंटर पर एक लड़की बैठी रहती है, ठीक तले बैंगन जैसा चेहरा ! उसका भी तो नाम सुजाता है। अब सुजाता नाम सुनने पर क्या मुझे उसी की याद आया करे ?

यह सुनकर सुजाता खूब हँसी, फिर बोली—सचमुच, हैंडलूम हाउस वाली लड़की न जाने कैसी है, कुछ कहो तो कैसा मुँह बना लेती है। उस दिन मैं ब्लाउज़ पीस बदलने गयी तो....खैर, शांतनु से कहाँ मुलाकात करती है ?

—कोई ठीक नहीं है।

—फिर भी।

—कभी गड़ियाहाट में और कभी लाइट हाउस के सामने...

—फिर कहाँ घूमने जाती है ?

—कहाँ घूमने जाऊँगी ? कभी किसी दुकान पर जाकर चाय पी ली तो कभी गंगा किनारे चली गयी...

—वह बहुत बढ़िया बात कर सकता है न ? जब प्रोफेसर था, तब तो...

अब जयश्री बगैर हँसे नहीं रह सकी। वह हँसते-हँसते बोली—क्या बढ़िया बात करेगा ? आप किताबों में जैसा पढ़ती हैं, वैसा समझ रही हैं क्या ?

—तू कुछ भी कह, लड़के अगर अच्छी-अच्छी बातें नहीं कर सकते

लड़कियाँ आसानी से नहीं रीझतीं। नहीं तो लड़कों में और क्या खास त है बता ? शांतनु देखने में जरूर अच्छा है, लेकिन उसकी तरह देखने अच्छे कितने ही लड़के हैं, कितनों के घर की हालत उससे भी ज्यादा च्छी है, अच्छी नौकरी भी करते हैं, लेकिन कोई तो तुझे नहीं भाया— सने जरूर तुझे मीठी बातों से...

—शांतनु एकदम मीठी बातें नहीं कर सकता। बड़ा शरमीला है। सके अलावा ज्यादातर तो अनुराधा भी हमारे साथ रहती है।

सुजाता ने दोनों भौंहें टेढ़ी कर कहा—अनुराधा साथ रहती है ? क्या तीनों एक साथ घूमने जाते हो ?

—क्यों, उससे क्या हुआ ?

—अनुराधा के सामने तू वही सब बातें कहती है ?

—कैसी बातें ?

टैक्सी की खिड़की से बाहर की तरफ देखकर सुजाता बोलीं—आज-कल का रंग-ढंग मेरी समझ में नहीं आता—जयश्री ने पूछा—चाची जी, शादी से पहले क्या किसी से आपकी जान-पहचान नहीं थी ?

—हट ! हम लोगों के जमाने में क्या वैसी आजादी थी, जैसी आज है ?

—सच-सच बताइए न ?

—सच नहीं तो क्या झूठ कह रही हूँ ? कभी घर से बाहर अकेली नहीं जा सकती थी। हर समय कोई-न-कोई साथ रहता था। स्कूल जाते समय भी घर का दरबान साथ जाता था, यहाँ तक कि कॉलेज में पहुँच-कर भी....

—नहीं, नहीं, इतना नहीं था....

—तू तो नहीं जानती ! जेठ जी तुझे एक बात कह देते हैं तो तू रोने लगती है और मेरे पिता जी....

रवीन्द्र सदन में 'माया का खेल' के टिकट खत्म हो गये थे। फौवारे के पास और सीढ़ी पर काफी भीड़ थी। आनेवालों में अधिकांश एक-

दूसरे को जानते थे, इसलिए एक-दूसरे का कुशल-क्षेम पूछ रहे थे, आपस में बातें कर रहे थे। टिकट न मिलने पर सुजाता और जयश्री निराश हो गयीं। फिर भागम-भाग तैयारी कर कहीं जाने के बाद अगर टिकट न मिले तो अपने को ही बड़ा अपमान-सा लगता है।

टैक्सी छोड़ दी गयी थी, अब टैक्सी मिलना मुश्किल था। सुजाता बोली—फिर इतनी जल्दी घर लौटकर भी क्या होगा ? चल मीठू, जरा उधर घूम लिया जाय। कितने दिन हो गये उधर नहीं गयी।

जयश्री बोली—चलिए, जरा पैदल चला जाय। तुरंत घर लौटने को मेरा भी मन नहीं कर रहा है। चाची जी, आप फुलकी खायेंगी ?

—नहीं, नहीं, गले में जलन होने लगेगी।

—एक दिन खाने पर कुछ नहीं होगा।

—अरे, वह सब कौन खाता है ? गंदे हाथ से देता है, इमली का पानी भी गंदा रहता है...

—थोड़ा-बहुत गंदा न होने पर उसमें टेस्ट नहीं आता ! चलिए, उधर चलिए।

—जरा रुक जा, थोड़ी देर बाद...

सड़क पार करने के लिए दोनों रुकीं। गाड़ियों का सिलसिला चला जा रहा था। बड़ी अच्छी हवा चल रही थी। ऐसे समय घर बैठे रहने से घूमना ज्यादा अच्छा लगता है। विक्टोरिया स्मारक सौध के बाहर लॉन में जैसे हरी घास की मोटी परत बिछी थी।

सड़क पार करने से पहले सुजाता ने अचानक जयश्री की तरफ देख-कर कहा—मीठू, तुझसे एक बात कहूँ, नाराज तो नहीं होगी ?

सुजाता के कहने के ढंग से जयश्री हैरान हो गयी। उड़ते पंछी के डैनों की तरह भौंहों को हिलाकर उसने पूछा—क्या ?

—तू जिससे शादी करना चाहती है, उसी से तेरी शादी होना एक तरह से तय है। उसमें कोई बाधा नहीं डालेगा। लेकिन उससे पहले एक बार उससे थोड़ी बातचीत कर लेने में क्या हर्ज है ?

—क्या मतलब ?

—वह तुझसे बात करना चाहता है। यों ही बात करेगा। ऐसे कितने ही लोगों से बात करनी पड़ती है, है न ?

—कौन ? आप किसकी बात कर रही हैं।

—है कोई। चल, उससे बात करेगी, मैं भी तो हूँ। अगर तू मेरी बात मानेगी तो मैं यही कहूँगी कि सिर्फ एक जने से तेरी जान-पहचान हुई है, वही तुझे पसंद आ गया है, लेकिन तू एक-दो जनों को और देख लेती तो अच्छा होता।

गुस्से से मारे जयश्री का चेहरा लाल हो गया। एकाएक क्रोध आने पर उसका सुंदर मुखड़ा किसी हद तक इलेक्ट्रिक हीटर की तरह लाल दिखाई पड़ता था। उसने आँखें तरेरकर कहा—इसका क्या मतलब है ? मैं अभी घर लौट रही हूँ, आपको आना हो तो आइए....

सुजाता ने अपनी बेटी जैसी जेठ की लड़की से खुशामद के लहजे में कहा—प्लीज़ मीठू, कम से कम मेरे लिए यहाँ कोई सीन क्रियेट मत करना। वह सड़क के उस पार खड़ा है। मैं उसी के लिए तुझे यहाँ लायी हूँ !

क्रोध के आवेश में चेहरा उठाकर जयश्री ने पूछा—कौन है ? कहाँ है ?

सड़क के उस पार हलके हरे रंग की फियेट कार खड़ी थी। उसके स्टियरिंग पर हाथ रखकर एक सुदर्शन युवक सिगरेट पी रहा था। उसकी निगाह सामने की तरफ थी, उनकी तरफ नहीं।

जयश्री ने पूछा—क्या वही है ?

—हाँ, वही सुगत बाबू हैं। बात करने पर देखेगी कि कितना बढ़िया आदमी है।

गर्दन सीधी कर कठोर स्वर में जयश्री बोली—चलिए।

क्रोध और अपमान के कारण जयश्री की आँखों, नाक और कानों में

मानो जलन होने लगी थी। उसने सोचा कि वह आदमी भी कितना निर्लज्ज है। अगर उसे सही सबक नहीं दिया गया तो....

दोनों महिलाएँ पास गयीं तो बड़े ही सभ्य और संस्कृतिवान युवक की तरह सुगत जल्दी से बाहर निकलकर कार का दरवाजा खोले खड़ा हो गया। यानी कार के शीशे में वह दोनों को देख रहा था। जयश्री बोली—कार में नहीं बैठूंगी।

बड़ी विनम्रता से मुस्कराकर सुगत ने पूछा—क्यों ? बैठिए न ! मैंने कार चलाना नया सीखा है, जरा देख लीजिए...

सुगत के बात करने के ढंग से ऐसा लगा कि मानो जयश्री से उसका बहुत दिनों से परिचय हो और किसी तरह के इंट्रोडक्शन की जरूरत न हो। जैसी होनी चाहिए, वैसी ही उसकी पोशाक बेऐब थी और उससे उसकी सुरुचि का पता चलता था। उसकी साज-सज्जा और शक्ल-सूरत की तरह उसके व्यवहार में कोई कमी नहीं थी।

कार के पास आते ही सुजाता काफी बदल गयीं, मानो अब जयश्री के मिजाज से डरने की जरूरत नहीं थी। सुगत ने कार का पीछेवाला दरवाजा खोल दिया था। सुजाता बोलीं—जयश्री, तू आगे बैठ।

जयश्री ने चाची की तरफ देखा। उसकी आँखों में बिजली की तेज चमक दिखाई पड़ी। फिर उसने अपने को सँभालकर कहा—क्यों ?

—वाह ! तू तो बात करेगी ! मैं पीछे बैठ रही हूँ।

—नहीं।

सुगत ने तुरंत कहा—आई सजेस्ट—आप दोनों ही आगे बैठिए। पीछे बैठने की क्या जरूरत है ?

सुजाता बोलीं—यही ठीक रहेगा। आगे-पीछे बैठकर बातें नहीं की जा सकतीं। आप अपनी कार में हमें थोड़ा घुमा लाइए, उसके बाद हमारे घर के पास छोड़ दीजिएगा...

सुजाता अंदर की तरफ बैठीं और जयश्री खिड़की के पास। सुगत दूसरी तरफ से आकर स्टियरिंग पकड़कर बैठा। बैठते ही जयश्री ने देखा

कि पाँवों के पास लोहे के कुछ सामान पड़े हैं। पाँवों के पास कुछ रखे रहने पर ठीक से बैठा नहीं जा सकता ! शायद सुगत ने ख्याल नहीं किया, लेकिन जयश्री को कुछ कहने की इच्छा नहीं हुई।

कार स्टार्ट कर सुगत ने पूछा—बताइए, किधर चलूँ ?

सुजाता बोलीं—जिधर आपकी इच्छा हो, चलिए।

—फिर भी बताइए।

—चलिए, जिधर आपका मन हो....

—जिधर मेरा मन हो ! अगर इजाजत दें तो मैं उत्तर में हिमालय, दक्षिण में कन्या कुमारी, पूरब में कामरूप और पश्चिम में कच्छ के रन तक कहीं भी जा सकता हूँ !

—बाप रे ! आपकी इच्छा तो मामूली नहीं है। इससे तो बल्कि गंगा की तरफ चलिए...

खिड़की से बाहर देख रही जयश्री ने सोचा कि चाची जी के ख्याल से शायद यही मर्दों का बढ़िया ढंग से बात करना है। उसे हँसी आ गयी।

सुजाता जयश्री से सटकर बैठी थी। तीन जनों के बैठने के लिए जगह कम थी। सुजाता बोलीं—आप कब से ड्राइव करने लगे हैं ? अभी उस दिन भी तो आपके ड्राइवर को देखा था !

—पिछले हफ्ते ड्राइवर की छुट्टी कर दी है। उसे रखना बेकार था। पिछले महीने दफ्तर के काम से दुर्गापुर गया था, उस समय भी मैंने खुद कार ड्राइव की थी। बिना काम लिये ही एक आदमी को तनख्वाह दी जा रही थी...

हृषीकेश बाबू या परेश बाबू कोई भी स्वयं कार नहीं चलाते। उन लोगों ने ड्राइविंग सीखने की कोशिश तक नहीं की। सुजाता भी इस मामले में जरा डरती हैं।

कुछ दूर चलने के बाद सुगत ने बड़ी विनम्रता से कहा—मिस मुखर्जी कुछ नहीं बोल रही हैं। शायद आप अभी तक गुस्से में हैं।

एकाएक सुगत की तरफ देखकर जयश्री ने पूछा—क्या आपको मेरी चिट्ठी मिली थी ?

बड़े आश्चर्य से सुजाता बोलीं—क्या तूने चिट्ठी लिखी थी ? क्या दोनों की मुलाकात हुई थी ?

जयश्री ने डाँटने की तरह चाची से कहा—चाची जी, आप चुप रहिए ।...आपको मेरी चिट्ठी मिल गयी थी ?

—जी हाँ, मिल गयी थी । लेकिन आपने मुझसे किसी तरह के जवाब की उम्मीद तो नहीं की थी ।

—जी हाँ, जवाब पाने की उम्मीद नहीं की थी । लेकिन कुछ और उम्मीद की थी ।

—खैर, मैंने आपका हुक्म पूरा किया है । आपने अपने घर आने से मना किया था और मैं नहीं गया । चिट्ठी के बारे में किसी से कुछ नहीं कहा । अभी आपने वह बात चलायी....

—आप हमारे घर आइए या न आइए, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता ।

—मिस मुखर्जी, अगर मुझसे कोई गलती हो गयी हो तो उसके लिए मैं माफी माँग रहा हूँ । आप कहेंगी तो मैं अभी आपको आपके घर पहुँचा दूँगा । लेकिन मैं फ्रैंकली कह रहा हूँ कि आपको एक बार देखने की बड़ी इच्छा थी—कम से कम अपना ऐडमिरेशन और काँग्रेट्स जताने के लिए, मैंने आपमें जैसा करेज और डिटरमिनेशन देखा, वैसा किसी बंगाली लड़की में कभी देखने का मौका नहीं मिला...

महीयसी रानी की तरह सुगत की तरफ देखकर जयश्री बोली—आपने देख लिया न ! अब मुझे कृपया घर पहुँचा दीजिए ।

दोनों बगल से दोनों बात कर रहे थे और बीच में बैठी सुजाता का बुरा हाल था । अब किसी तरह अपना व्यक्तित्व वापस लाने की कोशिश कर सुजाता ने कहा—अरी मीठू, तू कैसी बात कर रही है ? सामान्य शिष्टता....

—चाची जी, आप तो अच्छी तरह जानती हैं कि मुझमें नाम मात्र की भी शिष्टता नहीं है।

सुगत ने कोट की जेब से सिगरेट केस निकालकर कहा—विथ योर परमिशन, मैं सिगरेट सुलगा रहा हूँ।

सुजाता बोली—हाँ, हाँ, सुलगाइए न।

—मिस मुखर्जी, आपको तो कोई एतराज नहीं है ?

दूसरी तरफ मुँह फेरकर जयश्री बोली—नहीं।

सिगरेट का पहला कश लेकर सुगत ने ढेर सारा धुआँ छोड़ा। उस का चेहरा थोड़ा उदास दिखाई पड़ा। सुगत सब कुछ बरदाश्त कर सकता है, लेकिन कोई उसे अशिष्ट कहकर बदनाम करे, यह उसे बरदाश्त नहीं होता। कार रेड रोड पर पहुँच गयी थी।

जयश्री जल्दी-जल्दी सोचने लगी कि क्या चाची जी को पहले से मालूम था कि 'माया के खेल' का टिकट नहीं मिलेगा ? चाची जी ने जरूर इस आदमी से यहाँ इंतजार करने के लिए कहा था। जयश्री को यह सोचकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उम्र में बड़े लोग भी किस तरह ऐसी घटिया चालाकी कर सकते हैं ! वे लोग खुद जो पसंद करेंगे और अच्छा समझेंगे, उसके अलावा दूसरे की पसंद और अच्छा लगने की बात को किसी तरह स्वीकार नहीं करेंगे।

सुगत ने जरा उदास स्वर में कहा—मिस मुखर्जी, अगर आप मेरे बारे में गलत ख्याल लेकर जायँ तो मुझे बड़ा अफसोस होगा। मैं रियली...

एक बार गुस्सा आ जाने पर जयश्री का मिजाज आसानी से ठंढा होना नहीं चाहता। उसने व्यंग्य भरे स्वर में कहा—आपके बारे में मुझे क्या ख्याल हुआ और क्या नहीं, इसके बारे में आपको सोचने की जरूरत नहीं है। फिर, आपके बारे में मुझे क्यों कोई ख्याल होगा ?

सुगत ने फिर भी मुस्कान और प्रशंसा भरी आँखों से जयश्री की तरफ देखा। जयश्री कुछ कहने ही जा रही थी कि सुजाता बोल उठी

—क्या हो रहा है मीठू, थोड़ी देर चुपचाप बैठ तो ! तूने फुलकी खाने की बात कही थी, चल, गंगा घाट पहुँचकर जी भरकर खाना । तभी तेरा मिजाज ठंढा होगा । जानते हैं, यह लड़की बड़ी जिद्दी है ।

—चाची जी, फुलकी खाने की मुझे जरा भी इच्छा नहीं है ! अब घर ही लौटा जाय तो कैसा हो ?

—जरा ठहर ! अरे सुगत बाबू, आपने पाँवों के पास ये सब लोहा-लक्कड़ क्या रख रखा है ?

—कहाँ ?

सुगत ने झुककर देखना चाहा । तभी खिदिरपुर की तरफ से धड़-धड़ाती विशालकाय लॉरी एकदम सामने आ गयी, सुजाता चिल्लायीं, सुगत ने डरकर स्टीयरिंग घुमाया, बायीं तरफ बिजली की सी पीली चमक दिखाई पड़ी और पंजाबी ड्राइवर ने बिगड़कर गाली दी । उसी के बाद टक्कर हुई । गलती सुगत की नहीं, लॉरी ड्राइवर की है, लेकिन तब तक ब्रेक मारने की कर्कश आवाज हुई, फिर झनझनाहट हुई, शीशे टूटे और लोग चीखे । बीट का सिपाही दौड़कर आया, खेल के मैदान से शोर मचाते हुए लोग दौड़े और टैक्सी ड्राइवर तेज-तेज भागने लगा । सुगत की कार ने टैक्सी के पेट में टक्कर मारी थी ।

[यह अध्याय मुझे यहीं खत्म करना और दूसरा प्रसंग लेकर अगला अध्याय शुरू करना चाहिए । इससे पाठकों को उत्सुक बनाये रखा जा सकता है और यही नियम भी है । लेकिन मैं उतना बेरहम नहीं हो सकता । इसलिए यहीं बता दूँ कि दुर्घटना भयानक नहीं हुई, कोई नहीं मरा और थोड़ी-बहुत चोट लगने के कारण तीनों अस्पताल में भरती हैं । टैक्सी ड्राइवर भी भाग गया था ।]

The garlands drift and turn
The young man runs, the maiden
runs, the young man runs...

—आस्ट्रेलिया के आदिवासियों का गीत

अस्पताल के छोटे से केबिन में काफी भीड़ थी। तीन दिन बीत गये थे। अब घरवालों के चेहरे पर किसी तरह की परेशानी नहीं थी ज्यादा चोट किसी को नहीं आयी थी। सुगत के दाहिने हाथ में जोर का झटका लगा था, लेकिन फ्रैक्चर नहीं हुआ। माथे पर एक जगह थोड़ा कट गया था। सुजाता को सबसे कम चोट आयी थी बस, मामूली खरोंच लगी थी और वे इस समय घर में थीं। जयश्री की चोट भी ज्यादा नहीं थी। बायें पैर के पंजे में कुछ चोट आयी थी, बायें गाल और ठुड्डी में टूटे शीशे चुभ गये थे।

इन तीनों दिन जयश्री को लेकर दूसरी तरह का डर था। शरीर से ज्यादा उसके मन को चोट आयी थी। नहीं, याददाश्त खोने वाली बात नहीं थी। यहाँ आने के बाद चौबीस घंटे उसने किसी से कोई बात नहीं की। डाक्टर से भी नहीं। उसके बाद उसने बात की थी। वह माँ-बाप वगैरह सभी को पहचान सकी थी, लेकिन ढेर सारे सवालों का जवाब एक-दो शब्दों में दे रही थी। मानो हर समय वह गहरी चिंता में डूबी हुई थी। उसके चेहरे पर दुःख की कोई छाप नहीं थी, मानो वह हर बात की तरफ से उदासीन थी।

आज जयश्री काफी हद तक स्वाभाविक थी। नर्स आकर जब बैंडेज बदलने लगी, तब उसने पूछा—क्या चेहरे पर दाग रह जायेगा ?

नर्स ने जयश्री को भरसक आश्वासन देकर कहा—ऐसा कोई दाग नहीं रहेगा, फिर भी अगर थोड़ा रह जाय तो धीरे-धीरे गायब हो

जायेगा। फिर आपका चेहरा इतना खूबसूरत है कि कुछ पता नहीं चलेगा।

इस पर जयश्री मुस्करायी थी।

शाम को उसने माँ को देखते ही कहा था—माँ, अब अस्पताल में रहना अच्छा नहीं लग रहा है। मुझे ऐसा कुछ नहीं हुआ है। मुझे घर ले चलिए।

अलका देवी ने चैन की साँस लेकर कहा—तेरे बाप अभी दफ्तर से आ जायेंगे, उनसे कहना। तुझे कल ही ले जाऊँगी।

इस समय अस्पताल में सभी लोग आये थे। बैठने की जगह नहीं थी अतः सब खड़े थे। कमरा भर गया था इसलिए दो-चार लोग बरामदे में खड़े थे। जयश्री आज भी ज्यादा नहीं बोल रही थी। लेकिन सबसे एक दो बातें कर रही थी। एक-दो बार हँसी भी थी। उसका चेहरा पट्टी में छिपा होने पर भी उसकी आँखें खुली हुई थीं। उसकी आंखों से लग रहा था कि मानो इस घटना के बारे में सोचकर उसने कोई निर्णय ले लिया था।

नारंगी की फांकें निकालकर अलका देवी उसके मुँह में दे रही थीं फिर उसके मुँह के पास हाथ ले जाकर बिये ले रही थीं, ताकि बेटी को सिर उठाना न पड़े।

हृषीकेश बाबू और परेश बाबू के अलावा जयश्री के ननिहाल से भी कुछ लोग आये हुए थे। वे आपस में धीमी आवाज में बात कर रहे थे।

हृषीकेश बाबू बोले—मैंने गुरुदेव की बात नहीं सुनी! गुरुदेव ने और कुछ कहना नहीं चाहा। उन्होंने सिर्फ कहा था कि बेटी पर विपत्ति आ रही है, लेकिन विपत्ति इस तरह एकाएक...

इस दुर्घटना में परेश बाबू के दफ्तर के एक सज्जन सम्बन्धित थे, इसलिए दोषमुक्त होने की गरज से तीन दिन से वे बराबर एक ही बात कह रहे थे—एक्सीडेंट पर इन्सान का वश नहीं चलता। टैक्सी, ट्राम या

बस, चाहे जिससे चला जाय खतरा लगा ही रहता है। फिर हमेशा घर में बंद भी तो नहीं रहा जा सकता।

जयश्री के मामा ने भारी आवाज में कहा—हाँ, यह तो है ही। इस से ज्यादा कुछ नहीं हुआ, इसलिए भगवान को धन्यवाद देना चाहिए ! दोनों आँखें बच गयी हैं, यही बहुत है !

परेश बाबू बोले—हाँ, टैक्सी से टक्कर न लगकर अगर लॉरी से लगती तो पता नहीं क्या होता ! आजकल लॉरीवाले भी ऐसे हो गये हैं...

बड़े मामा बोले—हाँ, यह तो कुछ भी नहीं हुआ है। बड़े सस्ते में संकट टल गया है। लड़का होता तो कोई बात नहीं थी, लेकिन लड़की है, इसलिए—खैर, मामूली दाग रह जायेगा, लेकिन कुछ बुरा नहीं लगेगा।

हृषीकेश बाबू बोले—मैं उसके लिए नहीं सोचता !

सुजाता बाहर खड़ी जयश्री की मामी से बात कर रही थीं। जो घटना कम से कम पचास बार बतायी जा चुकी थी, उसी को और थोड़ा रोमांचक बनाकर वे बता रही थीं।

—समझ गयीं भाभी, दानव जैसा ट्रक पता नहीं कहाँ से आ गया—एकदम आमने सामने ! उसे देखते ही अगर मैं न चिल्लाती तो पता नहीं क्या हो जाता। बाप रे !

अलका देवी पास आकर खड़ी हुईं तो सुजाता जरा सकपका गयीं। इस घटना का बयान बार-बार सुनने पर भी अलका देवी का कौतूहल नहीं मिटा था। उन्होंने पूछा। लॉरी फिर भी नहीं रुकी ?

—कौन रोकता ? लॉरी वाले ने ध्यान ही नहीं दिया। सिपाही उस ंबर भी नहीं ले सका। उसी ने तो पुलिसवाले का सिगनल अनदेखा किया—खैर! सुगत बाबू की कोई गलती नहीं थी।

जयश्री की मामी ने सुजाता से पूछा—तुम्हें तो ज्यादा चोट नहीं लगी ?

साड़ी के नीचे सुजाता के वदन पर एक-दो जगह स्टिकिंग प्लास्टर

लगा था, लेकिन बाहर से पता नहीं चलता। उन्होंने कहा—नहीं, मुझे कोई खास चोट नहीं लगी। मीठू बगल में बैठी थी न! फिर भी वह घड़ी याद आने पर छाती काँप उठती है।

—और हाँ उस सज्जन का क्या हाल है?

—सुगत बाबू को काफी चोट लगी है, लेकिन सबसे ज्यादा मन ही मन दुखी भी वही हुए हैं। वे समझ रहे थे कि उन्हीं की वजह से यह दुर्घटना हुई थी। वे बार-बार कह रहे थे कि मैं हर तरह की जिम्मेदारी लेने को तैयार हूँ....

अलका देवी बोलीं—मैं उनको देखने जाऊँगी। भला, उनकी क्या गलती है! मीठू मेरे साथ कहीं जाती तो भी दुर्घटना हो सकती थी। हम लोगों का ड्राइवर इतनी तेज कार भगाता है कि कई बार मैंने उसे मना किया है।

मामी बोलीं—उस बार जब हम जमशेदपुर जा रहे थे....

वह किस्सा थोड़ी देर चलने के बाद बीच में सुजाता ने धीमी आवाज में कहा—दीदी!

सुजाता की आँखें बरामदे के दूसरे छोर पर लगी थीं। उन आँखों का अनुसरणकर अलका देवी ने उसी'तरफ देखा। शांतनु इसी तरफ आ रहा था। मानो कोई भयानक शत्रु हाथ में हथियार लिये चला आ रहा हो, इस तरह वे महिलाएँ उसी तरफ देखने लगीं।

सामने आकर शांतनु ने संकोचहीन स्वर में कहा—मैं जरा जयश्री से मिलना चाहता हूँ।

किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया। शिमला में शांतनु से अलका और सुजाता की जान-पहचान हुई थी। उस समय वे दोनों शांतनु से खूब बातें करती थीं लेकिन अब उनके मुँह से कोई बात नहीं निकली।

शांतनु ने फिर कहा—मैं जयश्री से मुलाकात करना चाहता हूँ। क्या वह जगी है?

अलका ने हल्के से सिर हिलाकर अस्पष्ट स्वर में कहा—हाँ।

शांतनु केबिन के दरवाजे के पास जाकर खड़ा हुआ जयश्री के पिता जी, चाचाजी वगैरह वहाँ ऐसे खड़े थे कि शांतनु को पूछना ही पड़ा। वहाँ भी उसने उसी तरह कहा—मैं जरा जयश्री से मिलना चाहता हूँ।

अपनी बातें रोककर वहाँ सभी लोग चुप हो गये। किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। वे सिर्फ रास्ता छोड़कर खड़े हो गये। शांतनु जयश्री के बेड की तरफ बढ़ा। जयश्री के बड़े मामा ने जिज्ञासा भरी आँखें नचा कर इशारे से हृषीकेश बाबू से पूछा कि कौन है? मानो यह सवाल बड़ा ही अपमानजनक हो, इस तरह हृषीकेश बाबू आँखें नीची किये खड़े रहे।

जयश्री दीवार की तरफ मुँह किये लेटी थी। क्या उसने शांतनु की आवाज नहीं सुनी? शांतनु ने उम्मीद की थी कि जयश्री उसकी आवाज सुनते ही हड़बड़ाकर बिस्तर पर बैठ जायेगी। लेकिन जयश्री उसकी तरफ पीठ किये लेटी रही। क्या वह रूठी हुई थी?

पास जाकर शांतनु ने धीरे से आवाज दी—जयश्री!

फिर भी कोई जवाब नहीं मिला।

अब शांतनु ने जरा जोर से आवाज दी—जयश्री!

अब भी कोई जवाब नहीं।

—जयश्री, मैं शांतनु हूँ।

सोने के ढंग से पता चल जाता है कि कोई सो रहा है या जग रहा है, शांतनु अच्छी तरह समझ गया था कि जयश्री जगी है, लेकिन कोई जवाब न पाकर अपमान से शांतनु के कान गरम हो गये। वह बड़ी ही हिम्मत कर यहाँ आया था। उसे पूरा विश्वास था कि एक बार बुलाते ही जयश्री जवाब देगी और तब जयश्री के माँ-बाप वगैरह के वहाँ मौजूद रहने या नाराज होने की परवाह किये बिना वह जयश्री से बात करता रहेगा। कार एक्सीडेंट में जखमी होकर जयश्री अस्पताल में पड़ी हो और वह भला, उसे देखने नहीं आये!

तीन बार बुलाने के बाद भी जब जवाब नहीं मिला तब शांतनु जयश्री की पीठ को हाथ से छूने गया, लेकिन दूसरे ही क्षण उसने हाथ

हटा लिया। वह बुरी तरह घबड़ा गया। उसी तरह घबड़ाकर उसने बेमतलब सवाल किया—सो रही हो क्या ?

लेकिन अब भी किसी ने जवाब देने की जरूरत महसूस नहीं की।

शांतनु ने फिर मुंह फेरा। गले में ताकत लाकर उसने पूछा—जयश्री, मैं शांतनु हूँ। तुम कैसी हो ?

करवट बिना बदले जयश्री ने छोटा-सा जवाब दिया—ठीक हूँ।

—जयश्री, सुनो।

याने शांतनु यही कहना चाहता है कि जयश्री, तुम एक बार मेरी तरफ देखो तो! लेकिन जयश्री ने शांतनु की तरफ नहीं देखा। वह दीवार की तरफ मुंह किये रही। दीवार की तरफ से जवाब आया—तुम जाओ!

ऐसी निष्ठुर बात शांतनु ने जिंदगी में कभी नहीं सुनी थी। क्या यहाँ आकर उसने कोई गलती की थी ? लेकिन कैसी गलती की थी ? ठीक चार दिन बाद रजिस्ट्री होने की बात है। इस समय मुलाकात करने आना क्या गलत हुआ ?

कमरे में और भी लोग थे। इसलिए शांतनु और ज्यादा बेचैन होने लगा। धरती फट जाओ, मैं तुम्हारे अंदर समा जाऊँ—ऐसी स्थिति आने पर मरदों के लिए अन्य कोई चारा नहीं रहता, फिर भी कभी-कभी उनको ऐसी हालत में पड़ना ही पड़ता है। उसे तुरंत यहाँ से चले जाना चाहिए या और कुछ देर रुकना चाहिए, यह वह समझ नहीं पाया।

उसके बाद शांतनु को जयश्री के बड़े मामा ने एक तरह से बचा लिया। उन्होंने बड़ी मीठी आवाज में अपमानजनक शिष्टता के साथ कहा—मेरा ख्याल है कि अब उसे डिस्टर्ब न करना ही ठीक होगा।

वह सीढ़ी उतरने लगा, तब भी उसे यही महसूस होता रहा कि कुछ व्यंग्यभरी आँखों की दृष्टि तीर की तरह उसकी पीठ में चुभ रही है। जयश्री ने एक बार भी शांतनु की तरफ नहीं देखा। अगर एक बार भी वह देख लेती तो यह धरती शांतनु के लिए कितनी सुंदर बन जाती !

हार न माननेवाला हार
तुम्हारे गले डालूँगा।

—रवीन्द्रनाथ

—जयश्री, यह तूने क्या किया ?

—हाँ री, ठीक किया है।

—क्या तू पागल हो गयी है ? इस तरह झक में आकर...

—सब लोग मुझसे यही एक बात कहते हैं। सब यही कहते हैं कि सारा काम मैं झक में आकर करती हूँ !

—अगर तू अब भी....

जयश्री हँसती हुई बोली—अब और कुछ नहीं किया जा सकता। मेरी शादी की चिट्ठियाँ छप गयी हैं। तुझे तेरी चिट्ठी यहाँ नहीं, तेरे घर जाकर दे आऊँगी। तेरे माँ-बाप सबको आना पड़ेगा।

फर्श पर नये कपड़ों के ढेर सारे पैकेट बिखरे पड़े थे और जयश्री उनके बीच बैठी थी। अनुराधा कुर्सी पर बैठी थी। ग्यारह दिन बाद सुगत से जयश्री की शादी होगी। जयश्री एकदम ठीक हो गयी थी। गौर करने पर उसकी ठुड्डी के पास छोटा-सा कटा निशान दिखाई पड़ता था जिसकी वजह से उसकी ठुड्डी कुछ चौड़ी जान पड़ती थी। उसकी बायीं आँख के नीचे वाला कटा निशान जरा साफ था, लेकिन उससे उसकी खूबसूरती में कोई कमी आयी हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता। कुल मिला कर उसके चेहरे की बनावट कुछ बदल गयी थी। इससे उसके स्वभाव का जिद्दीपन ज्यादा झलकने लगा था। अब उसका रूप किसी हद तक टॉम-बॉय जैसा लगने लगा था। कुछ दिन बाद लोग कार दुर्घटना की बात भूल जायेंगे, तब उसे देखने पर लोग यही समझेंगे कि बचपन में शरारती होने

के कारण वह शायद अमरूद के पेड़ से गिर पड़ी थी और यह उसी का निशान है।

जयश्री बोली—कल मैं अपनी बनारसी साड़ी खरीदने जाऊँगी, क्या तू मेरे साथ मार्केट चलेगी ?

—नहीं।

—नहीं, तुझे चलना पड़ेगा !

—तूने क्यों ऐसा किया, यह भी तू मुझसे नहीं बतायेगी ?

—इसमें बताने का क्या है ? जो स्वाभाविक था, वही मैंने किया है।

—क्या यही स्वाभाविक था ? पहले जो कुछ तूने किया था, वह क्या अस्वाभाविक था ?

—हो सकता है ! कल दोपहर को तू घर पर रहेगी न ? मैं तुझे तेरे घर से ले लूँगी, तू मेरे साथ मार्केट जायेगी।

—नहीं, मैं नहीं जाऊँगी ! सुन ले....

—मुझे तू जो प्रेजेंटेशन देगी, वह भी खरीदने नहीं जायेगी ?

—मैं तुझे खाक दूँगी। तेरी शादी में मैं आऊँगी ही नहीं....

—तू जरूर आयेगी ! अगर तू नहीं आयेगी तो मैं मंडप से उठकर तुझे पकड़ लाऊँगी।

—दिमाग ठंढा कर तू मेरी बात सुन। शांतनु सिर्फ एक बार तुझसे मिलना चाहता है। वह तेरे मुँह से यह बात सुनना चाहता है। क्या तू उससे एक बार मुलाकात भी नहीं करेगी ?

—मैं उसे शादी का कार्ड भेज दूँगी, उससे उस दिन आने के लिए कह देना !

—बेकार की बात मत कर ! तू उससे मुलाकात नहीं करेगी ?

बच्ची का-सा चेहरा बनाकर होंठों में दबी हँसी लिये जयश्री बोली—यह काला मुँह अब उसे कभी नहीं दिखाऊँगी मेरी जान !

—वही काला मुँह देखने पर वह तर जायेगा। वही मुंह देखने के लिए वह तड़प रहा है !

गाल के कटे निशान पर उँगली रखकर जयश्री बोली—जिस जयश्री को वह जानता था, अब वह नहीं रही। उसके कमरे के शीशे में जिस चेहरे का फोटो लगा है, वह यह नहीं है।

—कभी-कभी तू ऐसी पागलों की-सी बात करती है कि सुनने पर गुस्सा आता है ! पता नहीं तुझे क्या हो गया है। गाल मामूली कट गया है—उससे तो तेरा चेहरा और भी खूबसूरत लग रहा है।

यह सुनकर जयश्री के चेहरे का भाव बदल गया। वह थोड़ी देर एक-टक अनुराधा की तरफ देखती रही। लगा, अभी उसकी आँखों में आँसू आ जायेंगे। लेकिन इसके बदले मिरगी के मरीज की तरह वह ठठाकर हँस पड़ी और बोली—देख अनुराधा, मुझे दया मत दिखा ! किसी से दया लेने की मुझे आदत नहीं है। बल्कि मैं आत्महत्या कर लूँगी, लेकिन....

—इसमें दया दिखाने का सवाल कैसे आ गया। तू जाकर शीशे में अपना चेहरा तो देख ! मामूली कटने का निशान है। पता है, शांतनु ने क्या कहा है ? उसने कहा है कि जयश्री अगर एकदम अंधी हो जाती तो भी मैं....

आँखें तरेरकर जयश्री ने डाँट बतायी—चुप हो जा। अब इस तरह की बात कभी मेरे सामने मत करना ! दया ! वह मुझ पर दया दिखाना चाहता है ! मैंने जो कुछ किया है, अपनी गलती से किया है, फिर भी मैं किसी के आगे पश्चात्ताप नहीं कर सकती। बल्कि इस घटना के लिए जो पश्चात्ताप करेगा, उसी को मैं...

अनुराधा धीरे-धीरे बोली—क्या सिर्फ दया दिखाने और न दिखाने की बात बड़ी हो गयी ? क्या प्यार नाम की कोई चीज नहीं है ?

—इन बातों के आगे प्यार भी हार जाता है !

लंबी साँस दबाना चाहकर भी अनुराधा नहीं दबा सकी · —

—अब मैं चलूँगी, नहीं तो शांतनु खड़ा रहेगा। तो मैं उस[illegible]

[illegible] कि तू उससे अब मुलाकात नहीं करेगी ?

—हाँ !

—अच्छा, मैं चली।

—ठहर! उस ड्रायर को खोल। उसमें उसकी एक चिट्ठी है। पढ़। हालाँकि अब उसका जवाब तुझे नहीं लिखना पड़ेगा। उससे कह देना कि अब वह मुझे चिट्ठी-उट्ठी न लिखा करे!

अनुराधा चिट्ठी को पूरा पढ़ गयी। उसके बाद उसने धीरे-से चिट्ठी को रखकर कहा—एक आदमी को तू कैसे इतना दुःख दे सकी!

—यह सब दुःख वह चार दिन में भुला देगा। इसके अलावा एक आदमी दुःखी होगा तो क्या किया जाये, और भी तो कितने लोग सुखी हुए हैं। मेरे माँ-बाप को देखा है? क्या उनके चेहरे से नहीं लग रहा है कि दोनों की उम्र काफी कम हो गयी है? चाचा-चाची भी खुश हैं। आखिर उन्हीं की बात रह गयी। फिर जो शादी कर रहा है, वह भी खुश है, क्योंकि अब उसमें अपराध-बोध नहीं रहेगा। इसलिए एक आदमी अगर दुःखी हुआ भी तो क्या? शादी के दिन कितने इष्ट-मित्र आयेंगे, कैसी खुशियाँ मनायी जायेंगी, शामियाना लगेगा और शहनाई बजेगी! बता, कितना अच्छा रहेगा? इसके बदले चोर की तरह घर से भागकर शादी कर लेना....

—क्या यह सब तुझे पहले मालूम नहीं था? मौसी जी ने कितना समझाया था?

—मैंने उस समय गलती की थी। क्या हर कोई हर समय हर बात समझ सकता है? समझ गयी न, उस एक्सीडेंट के वक्त मेरे सिर में झटका लगते ही मेरा दिमाग ठीक हो गया।

जयश्री जोर से हँसने लगी।

सारी बात इतना जोर देकर जयश्री कह रही थी कि साफ़ पता चल जाता था कि यह उसके मन की बात नहीं थी। फिर भी वह अपने मन को यही समझाने की कोशिश कर रही थी।

—जयश्री, तो अब मैं चलूँ।

—सुन तो, इस तरह शादी न होने पर क्या मुझे इतना मामान

मिलता ? देख न, यह साड़ी जापान से इम्पोर्टेड है, यह कश्मीरी सिल्क है, यह ब्रोकेड, यह परफ्यूम सेंट....

जल्दी-जल्दी बक्से खोलती हुई जयश्री बोली—यह सब कुछ नहीं मिलता ! कुछ भी नहीं मिलता ! अब मैं कितनी तरह के गहने माँग-माँग कर ले रही हूँ ! बता, शादी के वक्त गहने-ओहने न मिलने पर क्या लड़कियों को अच्छा लगता है ? मैं देखूँगी कि तू अपनी शादी के समय...

अचानक सिर उठाकर जयश्री बोली—तू कुर्सी पर क्यों बैठी है ? नीचे बैठ न ! क्या तू मेरे सामान नहीं देखेगी ?

—नहीं री, अब मैं जाऊँगी ।

बड़े ही करुण विनती भरे स्वर में जयश्री बोली—अभी मत जा, सब देख ले । किसी को बिना दिखाये मुझे खुशी नहीं होगी !

अनुराधा कुर्सी से उतर आयी । शुरू-शुरू में वह बेमन से जयश्री के सामान देखने लगी । लेकिन साड़ी-गहना वगैरह देखते-देखते लड़कियों में ऐसा विचित्र आकर्षण पैदा हो जाता है, जिससे बचना बड़ा मुश्किल है । अनुराधा भी उस आकर्षण से नहीं बच सकी ।

जयश्री बोली—उससे तो तेरी बात नहीं हो पायी । तू जैसा समझ रही है, वैसा वह नहीं है । सुगत चौधुरी उससे किसी माने में कम नहीं है, बल्कि वह ज्यादा भद्र और डीसेंट है....

—क्यों नहीं ?

—कल तू आयेगी न ? तुझसे उसका परिचय करा दूँगी ।

—शादी के दिन तो परिचय हो ही जायेगा ।

—शादी के दिन तू मुझे सजा देगी न ?

—अवश्य ।

—अनुराधा, इधर देख !

जयश्री की आवाज एकाएक ऐसी बदल गयी कि अनुराधा चौंक पड़ी । याददाश्त की हलकी दुःखभरी परत मानो उसके चेहरे पर दिखाई पड़ी ।

एक कीमती साड़ी पर बायाँ पैर रखकर जयश्री ने फीकी मुस्कान के साथ कहा—कानी उँगली जरा देख !

जयश्री के बायें पैर की छिगुनी चोट लगने की वजह से जरा बदशकल हो गयी थी। नाखून नहीं था। अगला हिस्सा गोल दिखाई पड़ रहा था। वहाँ आपरेशन हुआ था।

—ऐसा कब हुआ ?

—उसी एक्सीडेंट के वक्त। मेरे पाँवों की उँगलियाँ किसी समय बड़ी खूबसूरत थीं न ?

—अब भी हैं। एक उँगली में चोट लगी है तो क्या हुआ—ऐसा तो ठोकर लगने पर भी हो जाता है। देख लेना, वह उँगली भी एकदम ठीक हो जायेगी !

—नहीं, ठीक नहीं होगी।

—मैं कह रही हूँ कि ठीक हो जायेगी। नाखून निकल आने पर काफी ठीक हो जायेगी। पूरी तरह ठीक न भी हो तो क्या बिगड़ता है ? जूते पहनने पर...

विचित्र रहस्यभरी मुस्कान के साथ जयश्री बोली—बहुत कुछ बिगड़ता है, यह तू नहीं समझेगी !

सदर्न एवेन्यू में कृष्णचूड़ा के पेड़ के नीचे शांतनु काफी देर से इंतजार कर रहा था। अनुराधा धीरे-धीरे उसके सामने आकर खड़ी हुई।

शांतनु ने पूछा—क्या हुआ ?

—जयश्री नहीं आयेगी।

—क्या कभी नहीं आयेगी।

—नहीं।

शांतनु के चेहरे पर जरा भी शिकन नहीं पड़ी। अनुराधा की आँखों की तरफ देखकर उसने न जाने क्या सोच लिया। फिर वह बड़ी उदा-

सीनता के साथ कहा—छोड़ो ! मुझे काफी देर हो गयी, एक जगह जाना था। अनुराधा, मैंने तुम्हें बड़ा कष्ट दिया....

—नहीं, नहीं, इसमें कष्ट की भला क्या बात है।

—मेरे लिए तुम बार-बार—खैर, इसके लिए मुझे बड़ा अफसोस है। अब तुम किधर जाओगी ?

—घर की तरफ।

—लेकिन इस वक्त मैं तुम्हें पहुँचा नहीं पाऊँगा। मैं दूसरी तरफ जाऊँगा। अच्छा, चलूँ। अगर फिर कभी तुमसे मुलाकात करूँ तो तुम्हें कोई एतराज तो नहीं है ?

जवाब न देकर अनुराधा सिर्फ मुस्करा दी।

And our name has a seat
Though the shroud should
be donned !
O life, O Beyond,
Thou art strange, thou art sweet !

—Mrs. E. B. Browning

खीझ के साथ शांतनु बोला—इस कलकत्ता शहर में कहीं निर्जन जगह नहीं है, जहाँ थोड़ी देर बैठकर मैं तुमसे बात कर सकूँ !

पार्क स्ट्रीट के मोड़ पर खड़ी अनुराधा ने मैदान की तरफ हाथ से इशारा कर हँसते-हँसते कहा—वही तो उतना बड़ा मैदान खाली पड़ा है।

शांतनु की भौंहें टेढ़ी हैं। मैदान की शोभा की तरफ देखकर भी उसकी भौंहें सीधी नहीं हुईं। उसने कहा—हर जगह आदमी है।

—एकाएक आदमी से इतनी चिढ़ क्यों हो गयी ?

—चिढ़ नहीं है, लेकिन जहाँ भी जाता हूँ, लगता है कि लोग मेरी तरफ देख रहे हैं। मैं उनकी तरफ पीठ कर लूंगा तो वे हँसेंगे।

अनुराधा बोली—यह तो अच्छा लक्षण नहीं है। आप अपने दिमाग से यह सब निकाल दीजिए।

—कोशिश कर रहा हूँ, लेकिन हो नहीं रहा है।

—असल में लोग आपको देखते ही पहचान जाते हैं कि आप निराश प्रेमी हैं ! आपकी शक्ल से पता चल जाता है। लेकिन आपने दाढ़ी तो नहीं बढ़ायी ! आपके बाल भी अस्तव्यस्त नहीं हैं।

—निराश प्रेमी नहीं, मैं हारा हुआ आदमी हूँ। आज मैं समझ रहा हूँ कि प्यार में निराश होने पर कुछ लोग क्यों आत्महत्या करते हैं।

—बस कीजिए ! क्या आप भी तो वैसी कोई योजना नहीं बना रहे हैं ?

अनमने ढंग से शांतनु हँसा। फिर वह बोला—नहीं, वैसी कोई योजना नहीं है। लेकिन मैं समझ गया हूँ कि लोग क्यों आत्महत्या करते हैं। किसी खास लड़की को न पाने के लिए नहीं, बल्कि पौरुष के अपमान के कारण लोग आत्महत्या करते हैं। यह बहुत बड़ी व्यर्थता है, बहुत बड़ा अपमान....

—लेकिन इसमें तो आप नहीं हारे। जयश्री ही अंत में हार गयी है। वही तो प्यार की इज्जत नहीं कर सकी, अंत तक आकर उसका मन भी कमजोर पड़ ही गया....

—प्यार से भी बढ़कर मनुष्य का घमंड होता है। तुम्हारा भी यही ख्याल है न ?

—शायद। मैं ठीक से नहीं जानती।

शांतनु बोला—किसी दुकान-उकान में बैठना अच्छा नहीं लग रहा है, यहाँ खड़े रहना भी बुरा लग रहा है। चलो, मैदान में चलकर थोड़ा टहल लिया जाय ! टहलते हुए ही बात की जायेगी।

—चलिए।

—कभी-कभी मैं तुम्हें इस तरह बुला लाता हूँ। तुम बुरा तो नहीं मानतीं ?

—अगर मानती भी हूँ तो क्या होगा !

—वह तो ठीक है ! तुम इतनी भद्र हो कि मुँह से कुछ नहीं कहोगी ! पहले ही तुमने अपनी बांधवी और मेरे लिए कितना समय नष्ट किया है, लेकिन अब तो तुम्हें बुलाने का कोई मतलब भी नहीं है !

—ग्रीन सिगनल दिया गया है, क्या हम सड़क पार करेंगे ?

—हाँ, चलो।

गांधी प्रतिमा की बगल से वे रेड रोड की तरफ चले। शायद थोड़ी देर पहले कोई मीटिंग खत्म हुई थी, इसलिए चहलपहल थी। आजकल इस इलाके में काफी भीड़ रहती है। भीड़ शांतनु को जरा भी पसंद नहीं। चलते लोगों की तरफ देखकर वह बोला—ये जो इतने लोग जा रहे हैं.

क्या सभी के जीवन का कोई उद्देश्य है ? जब लोग मीटिंग में आये थे, तब जरूर कोई उद्देश्य रहा होगा। लेकिन मेरा कोई उद्देश्य है, ऐसा नहीं लगता। सचमुच अनुराधा, कभी-कभी मन करता है कि सब कुछ तोड़-ताड़कर बराबर कर दूँ !

कोई जवाब न देकर अनुराधा मुस्करायी।

—क्यों, मुस्करा क्यों रही हो ?

—यों ही।

—मैं बहुत ज्यादा बेकार बक-झक कर रहा हूँ, है न ? मैं सिर्फ अपनी बात कर रहा हूँ। लेकिन मैं ऐसा तो नहीं था ! तुम्हें बेमतलब बुला लाया—। ठीक है अनुराधा, अब तुम अपनी बात कहो।

—मैं अपनी कौन-सी बात कहूँगी ?

—क्या तुम्हारी कोई बात नहीं है ? क्या तुम मुझे अपना दोस्त नहीं मान सकतीं ?

—वाह ! मुझे कुछ कहना होगा तभी तो कहूँगी ?

—मुझे विश्वास नहीं होता ! कभी-कभी मन ज्यादा दुःखी होने पर मैं तुम्हारे पास चला जाता हूँ। पहले जब जयश्री थी, तब भी तो ज्यादा बातें तुम्हीं से होती थीं।

—चलिए, वहाँ घास पर बैठेंगे ?

लेकिन घास पर बैठा नहीं जा सका, क्योंकि घास भीगी थी। चप्पल उतारकर अनुराधा ने पाँव से भीगी घास छुई तो उसे बड़ा अच्छा लगा। छोटी बच्ची की तरह नंगे पाँव भीगी घास पर दो-चार कदम चलकर वह बोली—वाह ! कितने दिन हो गये, इस तरह नंगे पाँव नहीं चली। हम लोगों के इलाहाबाद वाले मकान के सामने थोड़ा मैदान था, वहाँ खूब घास थी।

—तुम इलाहाबाद में कितने दिन थीं ?

—बहुत दिन। दस-बारह साल।

—इलाहाबाद की कहानी सुनाओ। तुम्हारे बारे में जानने की इच्छा

होती है। तुम हर समय अपना सब कुछ इतना रहस्यमय बनाकर रखती हो....

उदासीन मुस्कान के साथ अनुराधा बोली—मेरी कोई कहानी नहीं है। चलिए, यहाँ तो बैठना संभव नहीं है....

—क्या तुम्हें अभी ही घर जाना है ?

—हाँ, जाया भी जा सकता है। न जाने पर भी कोई हर्ज नहीं है !

—तुम्हें घर से खूब आजादी मिली हुई है न ?

—आजादी हासिल करनी पड़ती है। इसके अलावा कई कारणों से मुझे घर से बाहर रहना ज्यादा पसंद है।

—वे कौन-से कारण हैं ?

—कारण बड़े मामूली हैं। आपको सुनना अच्छा नहीं लगेगा।

—गंगा की तरफ चला जाय तो कैसा हो ? क्या मैं तुम्हें बहुत ज्यादा परेशान कर रहा हूँ ? आज मेरा मन एकदम बेचैन है !

अब दोनों गंगा की तरफ देख रहे थे लेकिन वहाँ भी काफी लोग थे, और कोई किसी की तरफ नहीं देख रहा था। बीच-बीच में लड़कों का झुंड एकदम पास से निकल रहा था। वे लड़के देख भी रहे थे कि कोई किसी लड़की को छू तो नहीं रहा है। ये लड़के शहरी समाज के बिन-बनाये अभिभावक हैं।

अनुराधा बोली—पिछले सोमवार को जयश्री से मुलाकात हुई थी।

शांतनु बोला—छोड़ो।

अनुराधा फिर भी बोली—वे लोग हनीमून के लिए कश्मीर गये हैं !

अपराधी की तरह मुस्कराकर शांतनु बोला—लेकिन मुझे जरा भी दुःख नहीं हो रहा है, जरा भी गुस्सा नहीं। अगर तुमसे एक बात कहूँ तो तुम विश्वास करोगी ? जयश्री का चेहरा भी अब ठीक से याद नहीं पड़ता।

—हटिए, झूठे कहीं के !

—सचमुच, विश्वास करो ! कभी-कभी याद पड़ता है, लेकिन फिर

गायब हो जाता है। सब कुछ न जाने कैसा धुँधला-सा पड़ गया है। मुझे लगता है कि मैंने कभी ठीक से जयश्री से प्यार ही नहीं किया।

—ऐसा मत कहिए! इससे तो और भी सब कुछ झूठा लग रहा है।

—नहीं, मैं ठीक कह रहा हूँ। शायद मेरा जयश्री से मतलब नहीं था! उसका खूबसूरत चेहरा और संकोचहीन स्वभाव—सब कुछ मिला-कर एक भावना बन गयी थी। वह जयश्री के कारण जितनी सच थी, उससे ज्यादा वह मेरे अपने मन की बनायी हुई चीज थी। जयश्री के मन को मैं कभी समझ नहीं सका। उससे उस तरह से कभी मेरी बात नहीं हुई और जो भी बात हुई वह बस चिट्ठी के जरिये। लेकिन जयश्री बहुत बढ़िया चिट्ठी लिखती थी, दैट आइ मस्ट ऐडमिट। अब मुझे कोई वैसी चिट्ठी नहीं लिखेगा।

अनुराधा बोली—वह किस देश का जहाज है बताइए न? देख रहे हैं, कितना खूबसूरत रंग है! लग रहा है, एकदम नया है।

शांतनु हँसते-हँसते बोला—इसीलिए तुम्हें बड़ा अच्छा लगता है! तुम सही वक्त पर बात को मोड़ सकती हो कि कहीं मैं एक ही बात बार-बार कहकर अपना मन दुःखी न कर लूँ....

अनुराधा ने धीरे से मुँह फेरकर कहा—देखिए, आप लोगों की बात बिगड़ जाने से मुझे बड़ा बुरा लगा है। लगता है जैसे मैं ही कोई बाजी हार गयी हूँ!

—कैसी बाजी?

—मैं प्यार में विश्वास नहीं करती। मेरा ख्याल है कि संसार से प्यार मिट चुका है। सिर्फ आप लोगों को देखकर लगा था कि बस आप लोग ही—। अगर आप लोग सुखी होते तो शायद मुझे अपना खोया विश्वास वापस मिलता। लेकिन जयश्री की वजह से मेरी भी हार हो ती।

—क्या तुम्हें प्यार में जरा भी विश्वास नहीं है?

—नहीं।

—यह तुम्हारी गलतफहमी है अनुराधा। प्यार के मामले में इन्सान बार-बार गलती करता है, लेकिन फिर भी प्यार है। मेरा यह विश्वास अभी खत्म नहीं हुआ।

—यह तो बड़ी अच्छी बात है, आप फिर से सुखी हो सकेंगे।

—लेकिन तुम्हारे मन में ऐसा अविश्वास क्यों है ?

—चलिए, अब लौटा जाय।

—समझ गया, तुम जवाब नहीं दोगी। अच्छा, यह तो बताओ कि क्या कभी जयश्री सचमुच मुझसे प्यार करती थी ? या वह उसका एक खेल था ? नहीं तो एक मामूली दुर्घटना के लिए....

—मैं स्वयं जयश्री को कभी समझ नहीं सकी।

सिगरेट फेंककर शांतनु बोला—मैं कलकत्ता छोड़कर जा रहा हूँ।

—क्या फिर नौकरी छोड़ रहे हैं ?

—नहीं, नौकरी नहीं छोड़ रहा हूँ। हमारे दफ्तर की एक ब्रांच बाम्बे में है, वहीं ट्रान्सफर होने का इंतजाम कर लिया है। उसके बाद शायद विदेश....

—क्या विरागी बन जायेंगे ?

—हाँ, विरागी बन जाना ही अच्छा है। बताओ, और मैं क्या कर भी क्या सकता हूँ ?

—बदन पर राख मलकर लोटा-कम्बल लेकर निकलने पर और अच्छा रहता !

अब दोनों हँसने लगे जिससे घुटन कुछ कम हो गयी। अब लौटना था। टैक्सी के लिए इंतजार करते समय शांतनु बोला—तुमको बार-बार बुलाकर मैं परेशान करता रहा, लेकिन अब नहीं करूँगा।

—आप बड़ी ज्यादती कर रहे हैं। क्या मैंने कभी कहा है कि मैं परेशान होती हूँ ?

—तुम तो कभी कुछ नहीं कहतीं, मैं ही कहता रहता हूँ !

—यह तो आपके कहते रहने का वक्त है।

—खैर। अब तुमसे मुलाकात नहीं हो पायेगी। कलकत्ते से मेरा सारा रिश्ता खत्म हो चुका है। अगर मैं चिट्ठी लिखूंगा तो तुम जवाब दोगी न ?

—बाप रे ! मैं एकदम चिट्ठी नहीं लिख सकती। चिट्ठी लिखने लगती हूँ तो कलम टूट जाती है।

—इसका मतलब यही है कि तुम नहीं चाहती कि मैं चिट्ठी लिखूं। ठीक है, नहीं लिखूंगा।

—मैंने यह तो नहीं कहा !

—समझ गया। बाम्बे में तो तुम्हारे एक भैया नौकरी करते हैं—कभी उनके पास जाओगी तो मुझसे मुलाकात हो जायेगी।

—क्या आप कभी कलकत्ते नहीं आयेंगे ?

—कम से कम जल्दी तो नहीं। जाने से पहले एक बात कह देता हूँ। इधर कई दिनों में एक बात अच्छी तरह मेरी समझ में आ गयी है। यहाँ से जाने के बाद मुझे जयश्री का अभाव कितना खलेगा, कह नहीं सकता, लेकिन तुम्हारा अभाव मुझे जरूर खलेगा। तुम्हीं से मेरी ज्यादा बात होती थी—अब मुझे क्या लगता है, जानती हो ? शायद मैंने जयश्री से कभी ठीक से प्यार नहीं किया। असल में मैं तुम्हीं....

झट से मुँह फेरकर अनुराधा ने भौंहें तान लीं और कहा—इसका मतलब ?

—जयश्री का रूप मेरी आँखों में समा गया था। मैं नशे में था। लेकिन मन ही मन मैं तुम्हारी ही तरफ खिंच आया था। तुम्हीं....

अनुराधा तीखी आवाज में बोली—खबरदार, ऐसी बात मत कहिएगा !

सकपकाकर शांतनु बोला—क्यों ?

—मैं पसंद नहीं करती। ऐसा कहने का क्या मतलब होता है, समझ रहे हैं ?

—क्या ?

—इससे आपका चरित्र बड़ा छोटा हो जाता है। आप एक के प्रेम में निराश होकर जो भी लड़की आसानी से मिल गयी उसी से प्रेम करने लगे। छिः !

—बात ऐसी नहीं है।

—इसके अलावा और क्या हो सकता है ?

—सुनने में ऐसा लगने पर भी बात ऐसी नहीं है। असल में मेरा भ्रम दूर हुआ है। अगर जयश्री से मेरी शादी हो भी जाती तो कभी न कभी मैं तुमसे यही बात कहता। अगर इस तरह न कहता तो कम से कम मन ही मन महसूस जरूर करता।

अनुराधा एकाएक बहुत बिगड़ गयी। उसने जलती आँखों से शांतनु की तरफ देखकर व्यंग्य भरे स्वर में कहा—वाह ! यह कैसी बात हुई।

—लेकिन यही सही बात है।

—फिर भी ऐसी सही बात आप कभी मेरे सामने कहने की कोशिश मत कीजिएगा। ऐसी बात कहने के लिए बंबई में आपको बहुत-सी लड़कियाँ मिल जायेंगी।

धीरे-धीरे सिर झुकाकर शांतनु ने कहा—ठीक है, नहीं कहूँगा। लेकिन तुम क्यों इस तरह बिगड़ गयीं ? मैंने तुम्हें किसी तरह दुःखी नहीं करना चाहा था। मैंने तो बस अपने मन की बात कह भर दी थी। ठीक है, अब कभी नहीं कहूँगा। मैं जा रहा हूँ अब मुलाकात नहीं होगी।

अभी थोड़े दिन पहले अंजन जमानत पर छूटा था। वह काफी दुबला हो गया था और उसके चेहरे पर विचित्र लापरवाही झलकती थी। आजकल वह किसी से ज्यादा बात नहीं करता और बीच-बीच में दो-तीन दिन के लिए पता नहीं कहाँ गायब हो जाता था। अनुराधा उसके सामने पड़ जाती तो वह उधर से मुँह फेर लेता ऐसा करने का मानो उसने नियम बना लिया था।

रूमा भाभी की तबीयत ज्यादा खराब हो गयी थी। प्रणवेश दा की बुआ यहीं रह रही थीं। प्रणवेश दा ने दफ्तर से छुट्टी ली थी। उनके घर में हर वक्त लोगों का आना-जाना लगा रहता। फिर भी अनुराधा कभी अकेली उस फ्लैट में नहीं जाती, जाती भी थी तो माँ के साथ। इस का कारण था। बीच में रूमा भाभी की बीमारी जब बहुत ज्यादा बढ़ गयी थी तब दो-चार क्षण का एकांत पाकर प्रणवेश दा ने अनुराधा का हाथ पकड़ लिया था।

इतने दिनों का संयम तोड़कर संकट की उस घड़ी में प्रणवेश दा के वैसे आचरण से अनुराधा का मन घृणा से भर गया था। प्रणवेश दा ने आर्त स्वर में कहा था—जरा ठहरो अनुराधा तुम्हें देख लूँ! मेरा दिमाग न जाने कैसा हो रहा है।

एक झटके में हाथ छुड़ाकर अनुराधा ने निष्ठुर की भाँति कहा था—प्रणवेश दा, आजकल आपको देखते ही मेरा जी मिचलाने लगता है!

यह सुनकर प्रणवेश के चेहरे पर मानो मौत की-सी काली छाया फैल गयी थी।

अंजन चादर ओढ़े मकान से थोड़ी दूर पर खड़ा था। शांतनु ने उसी से पता पूछा—चौबीस नम्बर मकान किधर है?

इस सवाल से अंजन का सारा शरीर सजग हो उठा। उसका एक हाथ जेब में चला गया। उसने भौंहें सिकोड़कर कहा—आप कहाँ से आ रहे हैं? उस मकान में किससे काम है?

—अनुराधा राय से, कालेज में पढ़ाती हैं।

अंजन के वदन का तनाव खत्म हो गया। स्वाभाविक होकर उसने शांतनु को ऊपर से नीचे तक देख लिया, फिर उपेक्षा के साथ कहा—वह—वह मकान है। सीढ़ी से ऊपर चले जाइए।

शांतनु जब दूसरी मंजिल की सीढ़ी के पास पहुँचा, तब प्रणवेश दा

सीढ़ी से नीचे आ रहे थे। शांतनु ने उनसे पूछा—अनुराधा राय किस मंजिल में रहती है ?

प्रणवेश दा शांतनु के चेहरे की तरफ एकटक देखते रहे। फिर अस्पष्ट स्वर में बोले—अनुराधा !

दूसरे ही क्षण शांतनु के सामने से हटकर प्रणवेश दा ने मरी हुई आवाज में कहा—आप तीसरी मंजिल पर जाइए।

इसके पहले कोई इस तरह अनुराधा को बुलाने नहीं आया था। अपने काम की बात भूलकर प्रणवेश दा सीढ़ी पर खड़े शांतनु की तरफ देखते रहे। दर्द के मारे उनकी छाती में मानो मरोड़ होने लगी। उनका चेहरा सूखे पत्ते के समान पीला दिखाई पड़ा।

शांतनु ऊपर चला गया।

दरवाजा खोलकर अनुराधा बोली—अरे ! आप कब लौटे ?

—आज सवेरे।

—आइए, अंदर आइए ! आपने कहा था कि जल्दी कलकत्ता नहीं लौटेंगे और तीन महीने में ही....

—एक खास कारण से लौटना पड़ा।

बैठने के कमरे में ढेर सारे सामान बिखरे पड़े थे। कोई चीज ठीक से नहीं रखी गयी थी। अनुराधा ने जल्दी से एक-दो चीजों को हटा-बढ़ा कर कहा—बैठिए !

अचानक शांतनु को अपने कमरे में देखकर अनुराधा को आश्चर्य तो जरूर हुआ था, लेकिन उसने चेहरे पर वह भाव प्रकट होने नहीं दिया। शांतनु भी तीन महीने कलकत्ते में नहीं था, लेकिन उसके व्यवहार से वह प्रकट नहीं हुआ। वह इस तरह अनुराधा को देखने लगा कि मानो कल ही तो मुलाकात हुई थी।

शांतनु बोला—बहुत दिन पहले तुमने अपने घर में मुझे बुलाया था, लेकिन उस समय आना नहीं हुआ था। खैर, पता याद था, इसलिए आज चला आया।

—क्या आप दफ्तर के काम से आये हैं ?

—नहीं, दूसरा कारण है। अनुराधा, तुम जरा मेरे साथ बाहर चलोगी ?

—अभी ? इतनी रात को ? आठ बज गये हैं...

—क्या नहीं चल सकती ?

—चल तो सकती थी, लेकिन मुश्किल यह है कि घर में माँ-बाप कोई नहीं हैं। क्या कोई खास बात हो गयी है ?

—क्या कोई खास बात होने पर ही मैं तुम्हारे पास आता हूँ ?

—लेकिन आपकी शक्ल ऐसी क्यों हो गयी है ?

—क्यों ? कैसी हो गयी है ? ठीक नहीं लग रही है क्या ?

—हाँ, जरूर कोई गड़बड़ है। जरूर कुछ हुआ है। क्या इधर तबीयत खराब थी ?

—अनुराधा, पिछली बार जब आखिरी मुलाकात हुई थी तब तुम मुझ पर बहुत नाराज हो गयी थी।

—बेकार की बातें करेंगे तो क्यों नहीं नाराज हूँगी ? सच-सच बताइए कि क्या हुआ है ?

—कुछ भी नहीं। लगातार दो दिन ट्रेन जर्नी की है, इसलिए थक गया हूँ। तुम्हारे कालेज में फोन किया था, लेकिन तुम नहीं थी।

—बैठिए, चाय बनाकर लाऊँ।

—नहीं, मैं चाय नहीं पिऊँगा, एक गिलास पानी दे दो।

अनुराधा के हाथ से गिलास लेकर एक ही बार में ही शांतनु पूरा पानी पी गया और बोला—और एक गिलास दो।

इस मामूली बात से अनुराधा का सिर मानो अंदर ही अंदर झनझना गया। उसे बहुत पहले की एक घटना याद आयी। उसने भी इसी तरह दुबारा पानी माँगा था। अनुराधा का चेहरा जरा कठिन दिखाई पड़ा।

गिलास रखकर शांतनु बोला—तुम्हें याद है, बहुत दिन पहले एक बार तुम और जयश्री मेरे यहाँ आयी थीं। उसके दो दिन पहले से मुझे

बुखार था। उस दिन जयश्री काफी देर तक थी, वह कुछ नहीं समझ सकी, लेकिन आते ही तुमने पूछा था कि मुझे बुखार तो नहीं है ? उस दिन भी मैं तुम्हें नहीं समझ सका था। ऐसे स्नेह और ऐसी सहानुभूति का नाम ही तो प्यार है।

अनुराधा खिड़की के पास खड़ी थी। वहाँ से सड़क दूर तक दिखाई पड़ती है। अनुराधा एकटक सड़क की ओर देख रही थी और शांतनु की बात नहीं सुन सकी, इस तरह बोली—जयश्री कल मेरे यहाँ आयी थी। अगर आप आज के बदले कल आये होते तो उससे मुलाकात हो जाती।

शांतनु एकटक अनुराधा की तरफ देखता रहा। उसने अनुराधा की बात जैसे सुनी ही नहीं। देर तक वह अनुराधा की आँखों में देखता रहा। अनुराधा को कुछ बेचैनी सी महसूस हुई, लेकिन वह आँखें हटा नहीं सकी। तीन ही महीनों में शांतनु काफी दुबला हो गया था, उसका चेहरा भी गया था और वह एकदम दूसरा इन्सान लग रहा था।

अचानक शांतनु ने संजीदगी के साथ कहा—अनुराधा, तुमसे एक बात कहने के लिए ही मैं कलकत्ते वापस आया हूँ। चिट्ठी लिखने पर तो तुम जवाब देती नहीं....

शांतनु के इस स्वर से अनुराधा जरा काँप उठी। उसने सूनी आवाज में पूछा—क्या ?

उठकर शांतनु दो कदम आगे आया। उसने अनुराधा की आँखों से अपनी आँखें नहीं हटायीं और अकंपित स्वर में कहा—इतने दिनों तक मैं अपने को पहचान नहीं सका था। मैं सिर्फ तुमसे प्यार करता हूँ।

बड़ी कमजोर मुस्कराहट के साथ अनुराधा बोली—आपने फिर वही पागलपन शुरू कर दिया ! मैंने कहा है न कि आपको ऐसा कहना शोभा नहीं देता।

—प्लीज, ऐसा मत कहिए !

—क्यों ?

अचानक अनुराधा की दोनों आँखों में जलन होने लगी और उस सारा शरीर काँपने लगा। असहाय की तरह उसने अनुनय किया—प्लीज ऐसा मत कहिए, मैं नहीं सुनना चाहती।

—लेकिन मुझे तो कहना ही पड़ेगा।

—लेकिन मैं नहीं सुनूँगी—कान ढँक लूँगी। मैं प्यार में विश्वास नहीं करती। मैं वह सब नहीं मानती, नहीं जानती।

—फिर भी मैं कहूँगा कि मैं तुम्हीं से प्यार करता हूँ।

—नहीं, मैं सुनना नहीं चाहती, नहीं सुनना चाहती।

शांतनु और थोड़ा आगे बढ़ गया और धीरे से अनुराधा की बाँह छूकर व्याकुल स्वर में कहने लगा—अनुराधा, तुम कितनी बार इनकार करोगी ? बोलो—बोलो कितनी बार ?

अनुराधा ने जल्दी से खिड़की की तरफ मुड़कर दोनों हाथों से मुँह ढँक लिया। लेकिन वह अपने को सँभाल नहीं सकी और उसकी आँखों से अविरल आँसू बह चले। क्या इतना रुदन भी उसकी आँखों में समाया हुआ था ? यह तो ऐसा हुआ कि जैसे अचानक चट्टान तोड़कर विशाल जलस्रोत फूट पड़ा हो।